खरवार

डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा

से. नि. सहायक निदेशक (कल्याण विभाग)

प्रकाशक

डॉ. रामदयाल मुण्डा जनजातीय कल्याण शोध संस्थान,

मोराबादी, राँची

अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति, अल्पसंख्यक एवं पिछड़ा वर्ग कल्याण विभाग

झारखण्ड सरकार

खरवार

सम्पादक –

रणेन्द्र कुमार

निदेशक, डॉ. रामदयाल मुण्डा जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, राँची

प्रकाशक

डॉ. रामदयाल मुण्डा जनजातीय कल्याण शोध संस्थान

राँची – 834008

प्रथम संस्करण : 2000

द्वितीय संस्करण : 2020

© डॉ. रामदयाल मुण्डा जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, रांची।

आवरण पृष्ठ : विकास अग्रवाल, कलाकोष, रातू रोड, राँची

मूल्य : दो सौ पाँच रुपये मात्र

मुद्रक : कैलाश पेपर कन्वर्शन (प्रा.) लिमिटेड, राँची।

भूमिका

किसी भी जाति या जनजाति के 'मोनोग्राफ लेखन' के सन्दर्भ में उसके आदि काल के उद्‌भव या उत्पत्ति से लेकर वर्तमान काल तक के सम्पूर्ण जीवन-वृत्त को प्रस्तुत करना अपने आप में एक विस्तृत एवं शोध-प्रसूत कार्य है। खरवार जनजाति के संबंध में भी यही कहा जा सकता है। कल्याण विभाग, बिहार, पटना द्वारा बिहार जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, राँची के माध्यम से प्रायोजित "खरवार जनजाति' पर मानोग्राफ लेखन का कार्य उपर्युक्त सन्दर्भ में अधिक महत्त्वपूर्ण माना जा सकता है, क्योंकि इस जनजाति पर उनके सम्पूर्ण जीवन-इतिहास के संबंध कोई स्वतंत्र पुस्तक उपलब्ध नहीं है। अतः खरवार जनजाति के मोनोग्राफ लेखन में उनके सम्पूर्ण जीवन-वृत को समाहित करने के लिए उनके उद्‌भव या उत्पत्ति, उनके मूल निवास स्थल, उनके प्रव्रजन या पलायन का इतिहास तथा उनके पुनर्वास आदि से संबंधित तथ्यों की जानकारी के लिए उनके संबंध में उपलब्ध लिखित साहित्य और उनके आवास-क्षेत्रों का सर्वेक्षण आवश्यक था।

मोनोग्राफ लेखन से संबंधित तैयार की गई कार्य योजना के अनुरूप सर्वेक्षण का क्षेत्रीय कार्य शुरू किया गया। यह ज्ञातव्य है कि खरवार जनजाति के आवास क्षेत्र का विस्तार दक्षिण-पश्चिम में कैमूर-रोहतास से लेकर उत्तर-पूरब में भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार आदि तक फैला हुआ है। क्षेत्रीय सर्वेक्षण में उनके विभिन्न सांस्कृतिक एवं भाषाई क्षेत्रों को आधार बनाकर कार्य किया गया, जिनमें भोजपुरी भाषा-भाषी क्षेत्र में कैमूर, सादरी या नागपुरी बोली का गुमला क्षेत्र, मगही-भोजपुरी मिश्रित बोली का पलामू (लातेहार) क्षेत्र तथा अंगिका भाषा-भाषी भागलपुर एवं साहेबगंज क्षेत्र को केन्द्र बिन्दु बनाकर कार्य किया गया।

सर्वेक्षण के अलावा खरवार जन-जाति पर पूर्व के मानव-शास्त्री, समाजशास्त्री, इतिहासकार एवं अन्य विद्वानों द्वारा विभिन्न पुस्तकों में जो तथ्य प्रस्तुत किये गये हैं, उनमें क्रुक्स, रसेल, डाल्टन, रिजले, ग्रियर्सन, मजुमदार आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। पलामू, शाहाबाद एवं संथाल परगना गजेटियर में भी खरवार जनजाति के संबंध में कुछ तथ्य प्रस्तुत किये गए हैं। हवलदारी राम गुप्त

द्वारा "पलामू का ऐतिहासिक अध्ययन' नामक पुस्तक में भी खरवार के संबंध में महत्त्वपूर्ण जानकारी दी गयी है। उपलब्ध पुस्तकों में उपलब्ध सामग्रियाँ और तथ्यों को आधार बनाकर मोनोग्राफ लेखन का कार्य किया गया है। 1971 और 1981 की जनगणना एवं अन्य पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं से भी सूचनाएँ एवं विभिन्न प्रकार के आंकड़े संकलित किए गए हैं। इन सभी उपलब्ध सामग्रियों और सर्वेक्षण में प्राप्त तथ्यों को आधार-सामग्री मानकर खरवार जनजाति की प्रजाति, उनकी सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आदि जीवन के विविध पक्षों पर आवयश्क विवेचन प्रस्तुत किये गये हैं।

पूर्व के अधिकांश विद्वानों एवं जनगणना प्रतिवेदनों द्वारा खरवार को 'हिन्दु' धर्म मानने वाला बताया गया है और उनके आदि जनजातीय धर्म- सरना धर्म का कोई उल्लेख नहीं है। विद्वानों का यह भी मत है कि खरवार द्रविड़ मूल या प्रजाति की मुख्य जनजाति है और संथाल, मुंडा आदि उनकी उप-जाति हैं। भाषायी दृष्टि से 'खरवारी या खेरवारी' को मूल आस्ट्रिक भाषी माना गया है। परन्तु अब कोई भी खरवार अपनी प्राचीन एवं मूल भाषा या बोली नहीं जानते है, जबकि संथाल, मुंडा, हो आदि में उनकी आस्ट्रिक शाखा की भाषा या बोली पूरी तरह प्रचलित और विकसित हो रही है। इन सभी तथ्यों और विसंगतियों के मध्य में इस लेखन में उनकी प्रजातीय एवं सांस्कृतिक तत्वों को परिलक्षित करने एवं उन्हें चिह्नित करने का प्रयास किया गया है। उनकी जाति अथवा जनजाति-संबंधी विभिन्न अवधारणाओं - सूर्यवंशी, पटबन्धी आदि - और उनसे संबंधित तथ्यों को और विभिन्न मान्यताओं को भी एकत्र कर प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

संस्थान के विद्वान निदेशक डॉ. प्रकाश चन्द्र उराँव द्वारा प्रदत्त मार्ग-दर्शन एवं दी गई विस्तृत विषय-सूची के आलोक में सभी विषयों एवं प्रासंगिक तथ्यों को संकलित कर इस मोनोग्राफ में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। इस महत्त्वपूर्ण कार्य के लिए बिहार जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, राँची तथा श्रीकृष्ण लोक प्रशासन संस्थान, राँची के निदेशक द्वय के सौहार्द एवं सहयोग से उनके पुस्तकालयों में उपलब्ध प्रासंगिक पुस्तकें उपलब्ध हो सकीं और जिसके फलस्वरूप आधारभूत सामग्रियाँ आसानी से मिल सकीं। मोनोग्राफ के हिन्दी

माध्यम से लेखन में प्रो. दीनेश्वर प्रसाद का भी मार्गदर्शन काफी उपयोगी सिद्ध हुआ।

क्षेत्रीय सर्वेक्षण में विभिन्न पदाधिकारियों, स्वयंसेवी संगठनों, खरवार जनजाति के सामाजिक कार्यकर्ताओं एवं कुछ विशिष्ट व्यक्तियों का अभूतपूर्व सहयोग मिला, जिसके कारण यह वृहत कार्य पूरा हो सका। सर्वेक्षण में क्षेत्र के अन्वेषकों एवं सूचनादाताओं के भी बहुमूल्य सहयोग से इस कार्य को त्वरित गति से पूरा करने में सफलता मिली।

आशा है, खरवार जनजाति पर लिखित यह मोनोग्राफ उनके जीवन के विभिन्न पक्षों को उद्‌घाटित करने में कुछ हद तक सार्थक सिद्ध हो सकेगा। सुधी पाठक इससे खरवार जनजाति के संबंध में कुछ और अधिक जानकारी प्राप्त कर सकेंगे। यह रचना या आलेख पुस्तक के रूप में प्रकाशित होकर खरवार के जीवन-इतिहास पर विस्तृत अध्ययन की दिशा में अग्रदूत की भूमिका अदा कर सकेगा, यही अपेक्षा है।

तिथि - 25 अगस्त, 1998 **डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा**

प्राक्कथन

खेरवार शासक जनजाति रही है जो पालवंश के पतन के बाद 12वीं शताब्दी से चेरो जनजाति के शासकों के समानान्तर बिहार के बड़े हिस्से पर शासन करती रही है। विशेषकर गंगा और सोन के मध्य भागों में सैंकड़ों वर्षों तक इनका शासन रहा है। परन्तु मध्यकाल में मुगलों के दवाब और दमन के फलस्वरूप रोहतास और पलामू तक ही वे सिमट कर रह गये थे। झारखंड की बत्तीस जनजातियों में से कृषक जनजातियों के बीच एक महत्त्वपूर्ण जनजाति के रूप में खरवार उपस्थित हैं।

कल्याण विभाग के सेवानिवृत सहायक निदेशक, डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा ने स्वरूचि से इस शोध-कार्य को पूर्ण किया है। उनका मनोयोग से किया गया यह शोध-कार्य उनकी ज्ञानात्मक संवेदना को दर्शाता है।

यह संस्थान शोधकर्त्ता, डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा एवं तत्कालीन निदेशक, डॉ. प्रकाश चन्द्र उराँव के प्रति हार्दिक आभार प्रकट करता है।

चिंटू दोराईबुरू (झा.प्र.से.)
उप-निदेशक

रणेन्द्र कुमार (भा.प्र.से.)
निदेशक

विषय सूची

अध्याय संख्या	विषय	पृष्ठ सं.
(1)	**सामान्य परिचय** समुदाय, जाति (प्रजाति), उपजाति	1–6
(2)	**ऐतिहासिक पृष्ठभूमि** आव्रजन (माईग्रेशन) का इतिहास	7–15
(3)	**आवास क्षेत्र एवं जनसंख्या** भौगोलिक क्षेत्र, जल-प्रवाह एवं नदियाँ, बिहार की मिट्टी, जलवायु, वर्षा का वितरण, पर्यावरण एवं वन, भाषा एवं बोली	16–41
(4)	**सामाजिक जीवन** (सामान्य परिचय) परिवार की बनावट, नातेदारी और नातेदारी के शब्द, संबंधों में हंसी मजाक एवं निषेध, अन्य जनजातियों/जातियों से संबंध, उत्तराधिकारी संबंधी नियम, महिलाओं की भूमिका, वंश एवं गोत्र, विवाह	42–75
(5)	**जीवन-चक्र के धार्मिक कृत्य** (सामान्य परिचय) गर्भाधान एवं गर्भ की पहचान, गर्भवती के लिए विधि-निषेध, प्रसव के बाद धार्मिक एवं अन्य कृत्य, नामकरण संस्कार, अन्नप्राशन- संस्कार, वयः सन्धि एवं युवावस्था, विवाह,	76–84

अध्याय संख्या	विषय	पृष्ठ सं.
	वृद्धावस्था एवं मृत्यु	
(6)	**आर्थिक एवं पारिस्थितिकी** प्राकृतिक संसाधन, भूमि एवं भूमि वितरण वर्षा एवं वर्षापात, पशुधन, पेशा, ऋणग्रस्तता हाट-बाजार, पारिस्थितिकी एवं खरवार भौतिक संस्कृति, कला एवं शिल्प, वस्त्र आभूषण, आवास गृह अस्त्र-शस्त्र घर की अन्य सामग्रियाँ	85-109
(7)	**खान-पान** पोषण की स्थिति, खाना पकाने का माध्यम कन्द-मूल एवं फूल-फल आदि नशाखोरी एवं नशीले पदार्थ	110-121
(8)	**राजनीतिक संगठन** पृष्ठभूमि, जातीय पंचायत की रूपरेखा एवं कार्य, सामाजिक एवं राजनैतिक आन्दोलन	122-132
(9)	**धार्मिक व्यवस्था / संगठन** सामान्य, परिचय, देवी-देवता, पर्व-त्योहार, मेला एवं जतरा, जादू-टोना एवं उसकी भूमिका, गोत्र एवं निषेध	133-150
(10)	**शिक्षा** बिहार में शिक्षा, खरवार जनजाति में	151-159

अध्याय संख्या	विषय	पृष्ठ सं.
	शिक्षा/साक्षरता की स्थिति	
(11)	**लोक-परम्परा : सामान्य परिचय** लोक-कथा, कहावत, मुहावरा, पहेली आदि, लोक-गीत, लोक-नृत्य, अतिथि सत्कार एवं प्रीतिभोज, गोदना (टैटू), पारम्परिक औषधियाँ एवं वैद्य कहानी, गीत आदि (अंगिका क्षेत्र का)	160-176
(12)	**सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन** बालक/बालिकाओं पर शिक्षा का प्रभाव जातीय पहचान, परिवर्तन के कारक	177-186
(13)	**विकास के कार्यक्रम** सरकार द्वारा चलाये जा रहे कल्याणकारी कार्यक्रम, जल-संसाधन, नियोजन के संसाधन, स्वास्थ्य संबंधी कार्यक्रम, परिवार कल्याण कार्यक्रम, प्रतिरक्षीकरण कार्यक्रम, महिलाओं और शिशुओं के लिए, विशेष कार्यक्रम, पेयजल की सुविधा, आवागमन की सुविधा, विद्युत सिंचाई के संसाधन, कीटनाशक दवाओं का छिड़काव, खरवार जन-जाति के विकास में स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका विकास-कार्यों का प्रभाव, विकास की समस्याएँ एवं संभावनाएँ	187-217

अध्याय संख्या	विषय	पृष्ठ सं.
(14)	**आज की खरवार जन-जाति** खरवार जन-जाति की विशिष्ट समस्याएँ एवं सुझाव	218-222
(15)	**सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची**	223-225

—— ❋❋ ——

टेबुल सूची

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	2.	3.
1.	खरवार जनजाति की जनसंख्या	16
2.	जनसंख्या में वृद्धि की दर	17
3.	लिंगानुपात	18
4.	जनसंख्या का घनत्व	19
5.	आयु-संरचना एवं वैवाहिक-स्थिति	20
6.	अल्पायु विवाह की स्थिति	25
7.	ग्रामीण/शहरी जनसंख्या का प्रतिशत	25
8.	भौगोलिक आवासीय-क्षेत्र एवं जनसंख्या	28
9.	वन-क्षेत्र	35
10.	अभयारण्य / राष्ट्रीय उद्यान	37
11.	जड़ी-बूटी एवं औषधीय पेड़-पौधे	37
12.	क्षेत्र एवं बोली	41
13.	परिवार-सूची	44
14.	रिश्तेदारी / नातेदारी के सम्बोधन	49
15.	हंसी-मजाक के संबंध एवं निषेध	51
16.	गोत्र-सूची	59
17.	वैवाहिक संबंध के स्थान (जिला / राज्य)	74
18.	फसल-चक्र	88
19.	वर्षापात की अवधि	90
20.	कार्यशील जनसंख्या	92

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	2.	3.
21.	मजदूरी की दरें	96
22.	आभूषण (गहना) की सूची	106
23.	गेठी-कन्दा की सूची	114
24.	फल-फूल / साग-सब्जी आदि की उपलब्धता / अवधि	116
25.	धार्मिक जनसंख्या	134
26.	देवी-देवता एवं पूजास्थल	138
27.	सारक्षरता संबंधी जनसंख्या	152
28.	उच्च-शिक्षा एवं छात्रवृत्ति	157
29.	नृत्य के भेद (प्रकार)	171
30.	साक्षरता संबंधी तुलनात्मक प्रतिवेदन	177
31.	विकास-कार्यक्रम के आंकड़े	189
32.	नियोजना संबंधी आंकड़े	193

—— ❋ ❋ ——

प्रथम अध्याय

सामान्य परिचय

किसी समुदाय, प्रजाति अथवा जाति के उद्‌भव और विकास का इतिहास उस प्रदेश / क्षेत्र विशेष की भौगोलिक पृष्ठभूमि से विशेष रूप से जुड़ा रहता है, जहाँ उनके पूर्वज आदि काल से रहते थे या किसी कारण विशेष से उस क्षेत्र में उनका आगमन हुआ। इस सन्दर्भ में यह विशेष रूप से विचारणीय है कि पुरातात्विक एवं भौगोलिक दृष्टि से बिहार भारत के उन प्राचीनतम प्रदेशों में से एक है, जहाँ आदि मानव की प्रागैतिहासिक विकास-यात्रा से लेकर आधुनिक मानव के अत्याधुनिक विकास की यात्रा कथा सुरक्षित है। बिहार के छोटानागपर के पठारी भाग में आदि मानव के निवास के कुछ पुरातात्विक प्रमाण मिले हैं। यहाँ विभिन्न युगों- पूर्व-प्रस्तर युग से लेकर नव-प्रस्तर युग तथा ताम्र-युग के अवशेष सिंहभूम, राँची, हजारीबाग, संथाल परगना आदि स्थानों में मिले हैं, जो 10000 ई. पू. से लेकर 1000 ई. पू., तक के हैं। उत्तर वैदिक काल में 1000 ई. पू. से 600 ई. पू., जब से ऐतिहासिक काल प्रारम्भ होता है, आर्यों का पदार्पण गांगेय घाटी में हुआ था। उस समय रचित बौद्ध-साहित्य में इस प्रदेश में 16 महाजनपदों और लगभग 10 गण राज्यों की चर्चा मिलती है, जिसमें विदेह, वैशाली, अंग और मगध प्रमुख थे।[1].

आर्यों के आगमन के पूर्व इस प्रदेश में अनेकों जनजातियाँ आकर बसी थीं, जिनका आगमन मुख्यतः सिन्धु घाटी एवं अन्य क्षेत्रों से हुआ था। विभिन्न विद्वानों के मतानुसार दो मुख्य प्रजातियों के कबीले उत्तर-पश्चिम से बिहार प्रदेश में आये थे। इनमें ''प्रोटो-आस्ट्रोलायड'' या आस्ट्रिक प्रजाति के मुंडा, हो, भूमिज, खड़िया आदि तथा द्रविड़ियन प्रजाति के उराँव, खरवार आदि। इस क्षेत्र में "असुर" जनजाति के लोग पूर्व काल से रह रहे थे और वे ही ताम्र-युग के बाद लौह्य युग के प्रणेता थे। इस राज्य के पठारी भागों (छोटानागपुर और संथाल परगना), कैमूर की पहाड़ियों तथा गंगा, सोन, कोयल आदि नदियों की घाटी में विभिन्न जनजाति समुदाय के लोग काल-क्रमानुसार आकर बसते गये, जहाँ आर्यों अथवा अन्य जनजाति द्वारा विरोध या संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होने पर उनका पलायन एक से दूसरे सुरक्षित स्थानों में होता रहा है। ऐतिहासिक तथ्यों और विभिन्न विद्वानों के मतानुसार कैमूर की पहाड़ी पर अवस्थित रोहतास में कभी उराँव जनजाति बसी हुई थी। वहाँ कभी

---

1. बिहार दिग्दर्शन, स्टार पब्लिकेशन, पटना, प्रो. शिव शंकर सिंह (1997-पृ. 1/2)

खरवार जन-जाति का भी शासन था। परन्तु कालक्रमानुसार इन दोनों जनजातियों को अपनी सुरक्षा के लिये सोन नदी पार कर छोटानागपुर के पठारी क्षेत्र के सघन वनों में आकर बसना पड़ा। बिहार की 30 जनजातियों में अधिकांश जनजातियाँ छोटानागपुर और संथाल परगना में निवास करती हैं। सबसे पुरानी असुर जन-जाति कभी राँची के खूँटी क्षेत्र तथा अन्य भागों में निवास करती थी, अब केवल नेतरहाट के पठार पर सिमट कर रह गयी है।

खरवार जन-जाति, जो द्रविड़ मूल (प्रजाति) की है, का आगमन भी उत्तर प्रदेश से माना जाता है। विद्वानों के मतानुसार वे खैरागढ़ या खैराझार नामक स्थान से आये थे। उनमें प्रचलित परम्परा के अनुसार उनके पूर्वज पहले वृन्दावन (उत्तर प्रदेश) में कत्था बनाने का काम करते थे और वे वहीं से कैमूर पहाड़ पर आकर बस गये थे।

श्री हेम्ब्रम ने अपनी पुस्तक "आस्ट्रिक सिविलाइजेशन ऑफ इन्डिया'' में यह प्रस्तुत किया है कि भारत में 3500 बी. सी. में गैरआर्य-संस्कृति का स्वर्ण-युग था। आर्य तो भारत में 2500 बी. सी. से आकर बसना शुरू किये थे। उन्होंने इसी सन्दर्भ में ''खेरवाली'' ''खेरवारी'' संस्कृति एवं जन-जाति का भी प्रसंग प्रस्तुत किया है। श्री हेम्ब्रम के अनुसार मेसोपोटामियां में मिले शिलालेखों के अनुसार खरवार जन-जाति अत्यन्त विकसित द्रविड़ प्रजाति थी।[1]

डॉ. गुप्ता के अनुसार - "खरवार द्रविड़ मूल की जन-जाति है (सन्डर-1998) और वे खेरिझार नामक स्थान से आये इसलिये खेरवार कहलाये। सन्डर का प्रसंग देते हुए उन्होंने उनकी (खरवार की) छः उपजातियों का वर्णन किया है-1. सूर्यवंशी 2. दौलतबन्दी 3. पटबन्दी 4. खेरी 5. भोगती या गंझू 6. मंझिया। शाहाबाद में वे अपने को ''सूर्यवंशी राजपूत'' कहते हैं और जनेऊ धारण करते हैं।[2]

कर्नल डाल्टन ने एक लोक कथा का प्रसंग देते हुए "खरवार' और ''संथाल'' की उत्पत्ति एक जंगली हंस के दो अंडों से बताया है। दोनों अंडों से दो मानव संतानें हुई। एक अहिरी पिपरी में बस गये, जो संथाल कहलाये और जो हारादुती चले गये, वे खरवार कहलाये।[3]

सर एच, रिजले के अनुसार- खरवार अपना मूल स्थान रोहतास बतलाते हैं

---

1 आस्ट्रिक सिविलाइजेशन ऑफ इन्डिया, 1979, एन. हेम्ब्रम (पू. प्राक्कथन)

2 ट्राइब्स ऑफ छोटानागपुर प्लेटू, ट्राइबल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, मोराबादी (राँची, 1974)

3 एथनोलॉजी ऑफ बंगाल, इ. टी. डाल्टन (पृ. 209/210) (पृ. 8/9)

और सूर्यवंशी राजा हरिश्चन्द्र के पुत्र रोहिताश्व से अपना संबंध स्थापित करते हैं। वे अपने को सूर्यवंशी राजपूत कहते हैं और जनेऊ धारण करते हैं।[4]

श्री हवलदारी राम गुप्त ने अपनी पुस्तक-''पलामू का ऐतिहासिक अध्ययन'' में पौराणिक एवं ऐतिहासिक सन्दर्भो में खरवार जनजाति के उद्‌भव-स्थान को पौराणिक "अजानगर'' बताया है, जो अब अयोध्या के नाम से जाना जाता है। पुराण पुरुष वैवश्वत मनु के छठे पुत्र "केरूस'' थे। उन्होंने भारत के पूर्वी राज्यों में अपना शासन कायम किया था। खरवार जनजाति का विस्तार उन्हीं करूसों से होना बताया जाता है। खेर नामक स्थान पर ये करूस (करुस राजा के वंशज) बस गये थे, जिसके कारण कालान्तर में उनकी सन्तानें "खेरवाल'' और आगे चल कर खरवार कही जाने लगीं।

महाभारत के युद्ध में भी करूस जाति का प्रसंग आया है. जिन लोगों नें कौरवों का साथ दिया था। संजय ने धृतराष्ट्र से अपनी ओर की सेनाओं के वर्णन में करूस का नाम लिया है।[5]

समुदाय, जाति (प्रजाति), उप-जातिः-

जनजातीय समुदाय का विभाजन उनकी प्रजाति मूलक विश्लेषण पर आधारित होता है। ''समुदाय'' एक सामाजिक संगठन का बोध कराता है। यह कई जाति या उप-जाति का एक सम्मिलित रूप होता है। जनजातीय समुदाय के संबंध में प्रजाति को आधार बनाकर विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने विचार व्यक्त किये हैं।

प्रजाति के संबंध में डॉ. डी. एन. मजुमदार का मत है - ''प्रजातीय अन्तर वातावरण के प्रभावों से अप्रभावित विशेष आनुवांशिकी गुणों (हेरिडिटरी ट्रेट्स) पर आधारित होना चाहिए। यदि व्यक्तियों के एक समूह (समुदाय) को समान शारीरिक लक्षणों के आधार पर अन्य समूहों से अलग (पृथक) पहचाना जा सके तो चाहे इस जैविकीय समूह के सदस्य कितने भी बिखरे क्यों न हों, वे एक प्रजाति के हैं।

प्रजाति के संबंध में डॉ. मुखर्जी ने हर्डलिका के विचार का प्रसंग देते हुए लिखा है- ''प्रजाति एक जाति (स्पेसिज) के अन्तर्गत वह स्थिर धारा है या मोटे तौर पर रक्त-संबंधित व्यक्ति है, जिनमें सतत् अर्थात् वंशानुगत रूप से कुछ निश्चित शारीरिक विशेषताएँ होती हैं, जो कि उन्हें अन्य सभी धाराओं या प्रजातियों से स्पष्टतः पृथक करती हैं।

---

4 कास्ट्स एन्ड ट्राइब्स ऑफ बंगाल, सर एच. रिजले से

5 पलामू का ऐतिहासिक.....

डॉ. मुखर्जी प्रजाति की तीन प्रमुख विशेषताएँ बताते हैं :-

(क) प्रत्येक प्रजाति के कुछ विशिष्ट शारीरिक लक्षण या विशेषताएँ सामान्य होती हैं, जिनके आधार पर उसे दूसरी प्रजातियों से अलग किया जा सकता है।

(ख) ये वंशानुगत शारीरिक लक्षण, जिनके आधार पर प्रजातियों को एक दूसरे से पृथक किया जाता है, पर्यावरण के प्रभावों से बहुत थोड़ा परिवर्तित होते रहने पर भी सापेक्षिक रूप में स्थिर बने रहते हैं।

(ग) ये सामान्य लक्षण या विशेषताएँ एक विशाल जन-समूह में पाये जाने पर ही उस समूह को प्रभावित करेंगे।

डा. मुखर्जी ने जनजातीय समुदाय के विभिन्न प्रजाति के निर्धारण एवं वर्गीकरण में कुछ कठिनाइयों का भी उल्लेख किया है। उनके अनुसार :-

(क) प्रायः वंशानुक्रम और पर्यावरण से शारीरिक लक्षण प्रभावित होते हैं।

(ख) प्रत्येक शारीरिक लक्षण एक से अधिक प्रजातियों में पाया जाता है।

(ग) आवागमन के साधनों के विकास के कारण प्रजातियों में अत्यधिक मिश्रण और अन्तर्जातीय विवाह के कारण वाहकाणुओं (जेनेस) का नया संयोग होने पर अनेक प्रजातीय शारीरिक लक्षणों में परिवर्तन हो जाता है।[1]

सितम्बर, 1952 में युनेस्को द्वारा शारीरिक मानव-शास्त्र तथा मानव अनुवंश विद्या से संबधित मानव वैज्ञानिकों की बैठक में समुदाय एवं प्रजाति के सन्दर्भ में निम्नांकित निष्कर्ष निकाले गए थे :-

(क) जितने भी मनुष्य भूमंडल में रह रहे हैं, वे सभी एक ही जाति के सदस्य हैं, जिसे मेधावी मानव (होमोसेपियन) कहा जाता है।

(ख) कुछ शारीरिक लक्षणों में अन्तर वंशानुक्रमण से होता है और कुछ पर्यावरण से।

(ग) वंशानुक्रमण में परिवर्तन दो कारणों से होता है :

1. उत्परिवर्तन (म्यूटेशन) 2. अन्तर्वर्ण विवाह (क्रास मैरेजेज)

(घ) राष्ट्रीय, धार्मिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक और भाषा समूह प्रजाति नहीं है।

---

1 सामाजिक मानव शास्त्र की रूप रेखा, विवेक प्रकाशन, 7-यू ए जवाहर नगर, जवाहर बाजार, दिल्ली, डा. रवीन्द्र नाथ मुखर्जी (पृ. 85)

(ङ) तीन ही मुख्य प्रजातियाँ हैं :- 1. कंकेशायड 2. मंगोलायड 3. निग्रयॉड

(च) प्रजाति के वर्गीकरण में बुद्धि को सम्मिलित नहीं किया जा सकता है।

(छ) सांस्कृतिक भिन्नताएँ प्रजातियाँ भिन्नताओं के कारण नहीं हैं।

(ज) तथाकथित विशुद्ध प्रजातियाँ आज कहीं नहीं पाई जाती हैं। प्रजातीय मिश्रण अतीत काल से होता आ रहा है।[2]

डॉ. बी. सी. गुहा ने प्रजातियों का वर्गीकरण करते हुए राजमहल की पहाड़िया जन-जाति को "निग्रीटो" प्रजाति की एक शाखा माना है। प्रोटो-आस्ट्रोलायड प्रजाति में उन्होंने मध्य भारत की अधिकांश जनजातियों को परिगणित किया है। उसमें भील और चेनचू प्रमुख हैं। इस प्रजाति की शारीरिक विशेषता है - सिर लम्बा, कद छोटा, बाल काला, आँख का रंग काला और भूरा।

विद्वानों द्वारा प्रस्तुत मानव वैज्ञानिक आधारों के आलोक में ''खरवार'' जन-जाति को द्रविड़ मूल का ही माना जायेगा। छोटानागपुर के पलामू, राँची, गुमला, लोहरदगा, आदि जिलों में रहने वाले अधिकांश खरवार जन-जाति के सदस्य साँवले से काले रंग के, सिर लम्बा, बाल काले और मूंछ-दाढ़ी अधिक, नाक साधारण लम्बी और नीचे की और पसरी होती है, जैसा कि सर्वेक्षण के दौरान पाया गया। कैमूर की पहाड़ी पर, भागलपुर, कहलगाँव, साहेबगंज, कटिहार आदि गंगा की घाटी और दियारा क्षेत्र में उनके शारीरिक गठन, ऊँचाई, रंग आदि में पर्यावरण एवं वंशानुक्रम के कारण परिवर्तन परिलक्षित होता है। उनकी लम्बाई औसत से अधिक, रंग साफ, नाक लम्बी और सिर गोल एवं चौड़ा आदि के कारण वे द्रविड़ मूल से कुछ भिन्न लगते हैं। इसका कारण कालक्रमानुसार 'उत्परिवर्तन' (म्यूटेशन) या अन्तर्वर्ण विवाह भी हो सकता है। यह ज्ञातव्य है कि बिहार में रामगढ़ का राजा परिवार मूलतः खरवार प्रजाति का ही है। परन्तु गैर-खरवार परिवारों में शादी करने के कारण अब उनमें खरवार जन-जाति की कोई विशिष्टता नजर नहीं आती। मध्य प्रदेश में जशपुर का राज परिवार भी खरवार जन-जाति का ही सदस्य था। परन्तु राजपूत राज परिवारों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध हो जाने के कारण अब वह परिवार पूर्णतः राजपूत या क्षत्रिय बन चुका है।

खरवार जनजाति के लोग जिन क्षेत्रों में बसे हैं, वहाँ अन्य जाति / जनजाति के बहुसंख्यक लोग बस गये हैं। अतः अन्य जातीय। जनजातीय समुदाय से उनका घनिष्ठ सामाजिक और पारिवारिक संबंध हो गया है। वे हजारों वर्षों से कैमूर की

2 युनेस्को रिपोर्ट, सितम्बर, 1952

पहाड़ी पर आकर बसे और वहाँ से विभिन्न काल खण्डों में वे विभिन्न क्षेत्रों में जाकर बसते गये। विभिन्न स्थानों के पर्यावरण का उन पर भिन्न-भिन्न प्रभाव पड़ा और उनमें शारीरिक परिवर्तन के साथ-साथ सामाजिक एंव सांस्कृतिक परिवर्तन भी काफी हुआ है। अब उनमें विशुद्ध ''द्रविड़ प्रजाति'' के सभी लक्षण दृष्टिगत नहीं होते और उसके कारणों का स्पष्टीकरण पूर्व पृष्ठ पर विद्वानों द्वारा प्रस्तुत सिद्धान्तों से हो जाता है।

—— ❋❋ ——

अध्याय-2

1. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :

पूर्व अध्याय में खरवार जनजाति की प्रजाति के संबंध में कुछ विद्वानों के विचारों पर प्रकाश डाला गया है। विभिन्न प्रजातियों / जातियों की मानव वैज्ञानिक विशिष्टता को भी प्रस्तुत किया गया है और उस सन्दर्भ में खरवार की प्रजाति पर भी विचार किया गया है। मानव वैज्ञानिक दृष्टि से खरवार जनजाति ''द्रविड़ प्रजाति'' की एक शाखा या जाति है और द्रविड़ प्रजाति की जाति वैज्ञानिक विशेषताओं का उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है। कतिपय विद्वानों ने उनकी जाति के संबंध में जो विचार व्यक्त किये हैं, उनका महत्त्व जाति वैज्ञानिक दृष्टि से भी है और ऐतिहासिक दृष्टि से भी।

खरवार जन-जाति का उल्लेख करते हुए पी. सी. टैलेन्ट्स लिखते हैं - ''पलामू के खरवार' 'अठारह हजारी'' भी कहे जाते हैं। .... उस समय चेरो ''बारह हजारी'' कहे जाते थे। इसका संबंध पलामू पर भागवत राय (चेरो राजा) के हमले से जुड़ा हुआ है। जिनकी सेना में इतनी ही संख्या में खरवार और चेरो सैनिक थे। वे द्रविड़ मूल के प्रतीत होते हैं। वे कभी बड़े-बड़े जागीर के मालिक थे। परन्तु बाद में अपनी शाहखर्ची से केवल खेतिहर भर रह गये। लापरवाही और आलसीपना के कारण वे खेती में भी पिछड़े हुए हैं।[1]

'खरवार जन-जाति को चेरो जन-जाति से निकट बताते हुए श्री डाल्टन लिखते हैं- ''कोल कहे जाने वाले खरवार बहुत काल से चेरो के साथ मिल-जुल कर रह गए हैं और उनकी प्रजा के रूप में रहते आये हैं। .... दोनों के रीति-रिवाज एक दूसरे से मिलते-जुलते हैं। ..... वे अपना उद्‌भव "सूर्य'' से मानते हैं। उनके पिता क्षत्रिय और माँ एक जन-जाति (भरनी) महिला थे। .... उनका उद्‌भव तुरानियन प्रजाति से भी माना जाता है। कैप्टेन बलंट 1794 में जब खरवार जन-जाति से कैमूर पहाड़ पर मिले थे तो उन्हें आदिम-अवस्था में पाया था। वे लगभग नग्नावस्था में रहते थे और मिलने-जुलने से शर्माते थे।[2]

डा. प्रसाद ने खरवार और खेरवार सम्बोधन को समानार्थक माना है और लिखा है खरवार समुदाय के लोग अधिकांशत: पलामू में रहते हैं और वे अपने को अठारह हजारी कहते हैं। उनमें से बहुत लोग अपने को ''राजपूत'' भी कहते हैं।

---

1 बिहार एन्ड उड़िसा गजेटियर - पलामू, 1926, पी. सी. टेलेन्ट्स।

2 डिस्क्रिप्टिव एथ्नोलॉजी ऑफ बंगाल, (1960) इ. टी. डाल्टन (पृ. 121 - 126)

दूसरी मान्यता के अनुसार संथाल जनजाति के कुछ धार्मिक पुनरुत्थानवादी अपने को खरवार मानतें हैं, परन्तु सभी सन्दर्भ में वे संथाल समुदाय के अभिन्न अंग हैं।''

तीसरी मान्यता यह है कि खरवार शब्द का प्रयोग एक ऐसे वर्ग या समुदाय के लिए किया जाता था, जो सोन नदी की घाटी में रहते थे और खैर वृक्ष से कत्था बनाते थे। बाद में वे सोन की घाटी को छोड़ कर छोटे-छोटे दलों में बँट कर विभिन्न भागों में चले गये और मुँडारी भाषा बोलने वाली जन-जाति के समकालीन बन गए। श्री प्रसाद के अनुसार अपने पारम्परिक इतिहास के आधार पर खरवार अपने को सूर्यवंशी हरिश्चन्द्र के पुत्र रोहिताश्व के वंशज मानते हैं।[1]

श्री रसेल ने खरवार को एक आदिम जन-जाति बताते हुए क्रुक्स और कर्नल डाल्टन का उद्धरण प्रस्तुत करते हुए खैरावार, खरवार, खैरा और खैरवा से सम्बोधित किया है। उनके अनुसार उस समय (1916 सेन्ट्रल प्रोविन्सेज) सुरगुजा, विलासपुर, दमोह आदि) में वे बसे हुए थे। उनकी जनसंख्या लगभग बीस हजार थी। कर्नल डाल्टन खरवार को चेरो के काफी सन्निकट मानते हैं। उनके अनुसार कभी गोरखपुर और शाहाबाद में काफी प्रभावशाली थे। परन्तु गोरखा लोगों के द्वारा भगाये जाने पर वे पलामू आ गये। उस समय अन्य जन-जातियों के अलावा खरवार पलामू में काफी संख्या में थे। चेरो लोगों ने उनसे सैनिक का काम लिया। .... चेरो और खरवार में वैवाहिक-संबंध भी होता रहा है। उदाहरण के लिए पलामू के राजा (चेरो) ने रामगढ़ के राजा मनिनाथ सिंह (खरवार) की बहन के साथ शादी की थी, क्योंकि दोनों अपनी उत्पत्ति राजपूत से मानते हैं।[2]

रसेल अपनी उक्त पुस्तक में आगे लिखते हैं कि - ''खरवार, जो कत्था बनाते रहे हैं, बम्बई में ''कथाकारी'', सेन्ट्रल प्रोविन्सेज में ''खैरचूरा'', बंगाल में "खैरी'' और युनाइटेड प्रोविन्सेज में ''खैराहा" के रूप में जाने जाते रहे हैं। खैर बनाने वाले इस समुदाय को खरवार हीन दृष्टि से देखते हैं। उनके साथ वे वैवाहिक संबंध स्थापित नहीं करते हैं।

रिजले के उपस्थापन के आधार पर रसेल का यह मत है कि छोटानागपुर के खरवार चेरो और संथाल के पेशा की उपज है, जब कि कैमूर पहाड़ी के खरवार गोन्ड और सवर के पेशा के। इस प्रकार पेशागत प्रभाव के कारण ही उनका सामाजिक-जीवन उच्च या निम्न-स्तर का माना गया है।

---

1 लैंड एन्ड पिपुल ऑफ ट्राइबल बिहार, बिहार ट्राइबल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, राँची, नर्मदेश्वर प्रसाद, 1961 (पृ. 123)

2 कास्टम एन्ड ट्राइब्स ऑफ सेन्ट्रल विन्सेज ऑफ इन्डिया 1916

कर्नल डाल्टन ने उनके पेशागत विभाजन पर प्रकाश डालते हुए उनकी उप-जातियों का विवरण प्रस्तुत किया है। उनमें महतो का अर्थ होता है गाँव का मुखिया या प्रधान। उसी प्रकार रावत या राउत भी प्रधान का ही सम्बोधन है। माँझी भी संथाल लोगों में ग्राम प्रधान के रूप में जाना जाता है। इससे भी यह स्पष्ट होता है कि खरवार की उप-जातियों का विभाजन पेशागत कार्यों या पदों के आधार पर काल क्रमानुसार होता रहा है।[3]

2. आव्रजन (माइग्रेशन) का इतिहास :

खेरवारी या खेरवाली सभ्यता के उद्‌भव और विकास तथा विस्तार से खरवार जन-जाति का इतिहास जुड़ा हुआ है। श्री हेम्ब्रम के अनुसार पूर्व वैदिक-काल के कई सील और शिला लेख मेसोपोटामियां में (उर, लगास, उम्मा, किश) तथा एलन (सुसा) में मिले हैं, जिससे यह सिद्ध होता है कि पूर्व वैदिक-युग में भारतीयों का उनके साथ व्यापारिक संबंध था। .... परवर्ती काल में रचित रामायण और महाभारत ग्रन्थों के अध्ययन से यह लगता है कि अनार्य कहे जाने वाले लोग किसी बहुत ही सभ्य एवं सुसंस्कृत पूर्वजों के वंशज थे। उसी सभ्यता को श्री हेम्ब्रम ने ''खेरवाल'' सभ्यता के रूप में प्रस्तुत किया है। उन्होंने आगे चलकर इस सभ्यता के विकसित ग्राम्य प्रशासन, देशभक्ति आदि पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला है। उन्होंने अनार्य अथवा खेरवाल सम्यता के विकास की कालावधि 5000 बी. सी. से 3000 बी. सी. तक माना है। इस काल से संबंधित खुदाई में मिली खोपड़ियों की जाँच करने पर पता चला है कि वह ''प्रोटो-आस्ट्रोलायड'' या आस्ट्रिक प्रजाति के लोग थे। आस्ट्रिक लोगों की सभ्यता एवं संस्कृति सिन्धु घाटी में फुली-फली थी। विद्वानों का यह भी मत है कि उसके पूर्व द्रविड़-सभ्यता का उद्‌भव और विकास सिन्धु घाटी में हुआ था।

श्री हेम्ब्रम ने के. एम. पन्निकर का प्रसंग देते हुए लिखा है कि ऋग्वेद में वर्णित भारतीय अनार्य लोग कोई और नहीं, वरन् सिन्धु घाटी सभ्यता से संबंधित लोग ही थे, जिन्होंने कई किलों का निर्माण भी किया था। उनके अनुसार खरवार जन-जाति पूर्व वैदिक या वैदिक काल में सिन्धु घाटी में भी रही थी और वहीं से विभिन्न क्षेत्रों में उसका प्रव्रजन हुआ।[4]

श्री हेम्ब्रम यह भी मानते हैं कि खरवार ही मूल प्रजाति है, जिससे संथाल

---

3 कास्टस एन्ड ट्राइब्स ऑफ सेन्ट्रल प्रोविन्सेज ऑफ इन्डिया, मैकमिलन एन्ड को.

4 आस्ट्रिक सिविलाइजेशन ऑफ इन्डिया, एन. हेम्ब्रम, 1979, पृ. - 28 से 37.

जन-जाति की शाखा निकली। संथालों की विनती में सिन्धु घाटी की सम्पन्नता का वर्णन मिलता है :

''चेते तेदाह छितानम गुगुरिचकान?
चेते तेदाह बोयोम ला - ला माहकान?
तोवा तेहाद छितानाम गुगुरिच कान?
दहे तेदाह बोयोम ला ऽ ला माह कान?

अर्थ :- हे छिता (नाम), तुम फर्स को किस चीज से धो रहे हो। हे बोयोम, तुम फर्स को किस चीज से लिप रहे हो। हे छिता, तुम तो दूध से फर्स को धो रहे हो औ हे बोयोम, तुम तो दही से फर्स का लिप रहे हो।''

श्री हेम्ब्रम ने मोहंजोदड़ो, हड़प्पा और कालिबरगा में मिले विकसित सभ्यता के अवशेषों को भी खेरवाली या खरवारी सभ्यता का अवशेष माना है।

उपर्युक्त तथ्यों और रसेल, डाल्टन, रिजले आदि विद्वानों द्वारा प्रस्तुत तथ्यों पर विचार करें तो ऐसा प्रतीत होता है कि खरवार जन-जाति अपने मूल स्थान से पलायन कर उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश होती हुई बिहार के कैमूर पहाड़ी पर आकर बस गयी। कैमूर क्षेत्र में उनके आगमन की कालावधि के संबंध में कोई प्रसंग नहीं मिलता। परन्तु यदि इतिहासकारों द्वारा प्रस्तुत तथ्यों की गहराई से छानबीन की जाय तो सिन्ध घाटी क्षेत्र से द्रविड़ मूल के लोगों, जिसमें खरवार भी आते हैं, के पलायन की कालावधि का कुछ हद तक पता चल जाता है। इस सन्दर्भ में इतिहासकार श्री गोखले के अनुसार - ''ईसा पूर्व 2500 वर्ष पूर्व सिन्धु के लरकाना जिले के मोहंजोदड़ो और पंजाब के मौंटगोमरी जिले के हड़प्पा में बहुत ही उन्नत किस्म की सभ्यता और संस्कृति विकसित हुई थी, जैसा कि पुरातात्विक अवशेषों से पता चलता है। इनके अलावा 60 अन्य स्थानों का पता चला है, जो समकालीन प्रतीत होते हैं और जिनका विस्तार पूर्व में शिमला की पहाड़ियों से लेकर पश्चिम में सुक्ताजेन-दो (बलूचिस्तान कोस्ट) तक तथा उत्तर में डाबरकोट से दक्षिण में ताप्ती और नर्मदा नदी की घाटी तक फैले हुए हैं।

इस सभ्यता की मुख्य विशेषता थी - विकसित खेती। .... अधिकांश औजार एवं उपकरण पत्थर के बने थे, जबकि लोग तांबा का उपयोग जानते थे। युद्ध के हथियार कम थे। परन्तु युद्ध की तैयारी के रूप में "किलाबन्दी'' के अवशेष मिले हैं। .... वहाँ देवी-देवताओं में शिव (महायोगी), पशुपति (जंगली जानवरों के देवता) और दुर्गा की पूजा करते थे। देवी-दुर्गा उर्वरता की देवी थीं और महामारी आदि से बच्चों की रक्षा करती थीं। वहाँ साँढ़, शेर, पीपल वृक्ष, पहाड़ और नदियों

की पूजा करने के प्रमाण मिले हैं। पवित्र-स्थान के भी अवशेष मिले हैं। ..... ऋग्वेद में सशस्त्र आर्य हमलावरों और बाढ़ के कारण इसके नष्ट होने के संकेत मिलते हैं। .... इस सभ्यता का अन्त लगभग ई. पू. 1500 में हुआ होगा।

उस समय प्रचलित "विनती'' मिले हैं (1017) जो 33 देवताओं को संबोधित हैं। उन्हें बलि देते समय उच्चरित किया जाता था। उस समय के प्राप्त विवरण से पता चलता है कि उनके पूर्ववर्ती (आर्य) राजाओं द्वारा काले, चिपटी नाक, रूखी बोली वाली जनजातियों को परास्त किया गया, जिनके सुरक्षित शहर सम्पन्न थे और जो धनी तथा व्यापारी थे।

सिन्धु घाटी से होकर वे पूरब-उत्तर की ओर यमुना और गंगा घाटी के उपजाऊ मैदान में आ बसे। वे (आर्य) मुख्यत: लकड़ी के बने रथ पर चलते थे और रथों में घोड़ों का उपयोग करना जानते थे। इसके बाद आर्य बिहार में आये और जंगल साफ कर बसते गये, जिसका उल्लेख सतपथ ब्राह्मण में मिलता है।[1]

उपर्युक्त तथ्यों से यह ज्ञात होता है कि ई. पू. 1500 वर्ष के आसपास द्रविड़ मूल के लोग सिन्धु घाटी छोड़ दिये होंगे और वहाँ से गंगा और यमुना नदियों की उर्वर घाटी में आ बसे होंगे। परन्तु जैसा कि ज्ञात होता है कि सिन्धु घाटी में बसने के बाद आर्य यमुना-गंगा नदियों की घाटी की ओर बढ़ गये थे, जहाँ द्रविड़ मूल के लोग पहले से ही आकर बसे थे। अत: इस स्थान पर भी आर्यों से द्रविड़ों का संघर्ष हुआ होगा और उन्हें उस स्थान से भी पलायन करना पड़ा होगा। संभवत: वे उसी कालावधि में उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और उससे सटे बिहार के पहाड़ी और जंगली क्षेत्रों में आकर बस गये होंगे। द्रविड़ मूल की जनजातियों की एक शाखा खरवार की ही रही होगी, जो आज भी इन क्षेत्रों में काफी संख्या में बसे हुई है।

जैसा कि पूर्ववर्ती प्रसंगों में अभिव्यक्त किया गया है, ''खरवार' जन-जाति के उत्कर्ष एवं पराभव का इतिहास कैमूर पहाड़ी पर अवस्थित रोहतासगढ़ से काफी घनिष्ठता से जुड़ा हुआ है। वे अपना मूल स्थान रोहतासगढ़ ही बताते हैं, अथवा उन्हें अपने पूर्वजों के संबंध में रोहतासगढ़ से जुड़ी घटनाएँ ही थोड़ी-बहुत याद हैं। इस सन्दर्भ में श्री मानगोविन्द बनर्जी लिखते हैं - ''रोहतासगढ़ मुन्डा परम्परा का ''रूईदासगढ़'' ही है। यह वही किला है जहाँ राजा हरिश्चन्द्र से लेकर बंगाल के अपदस्थ नवाब मीर कासिम तक हजारों लोगों की शरण-स्थली रही है। इस किले और इस क्षेत्र से खरवार, कोल, चेरो और अगरिया अथवा असुर के बीच हुए संघर्षों

1 भारतवर्ष : पोलिटिकल एन्ड कल्चरल हिस्ट्री ऑफ इन्डिया, स्टर्लिंग पब्लिसर्स न्यू दिल्ली, 1982 - बाल कृष्ण गोबीन्द गोखले (पृ. 11 से 25)

का संबंध रहा है। खरवारों के बीच प्रचलित लोक-कथाओं के अनुसार रोहतासगढ़ उन्हीं का था और वहाँ के वे शासक थे। वहीं से वे पलामू आये।

रोहतासगढ़ में मिले एक शिलालेख में ''प्रतापधवल'' नामक राजा का नाम खुदा हुआ है, जो खयरवाल या खरवाल वंश का था। प्रो. किलहार्न के अनुसार यह नाम खरवार जनजाति के नाम का ही अवशेष है। दूसरा शिलालेख सासाराम के निकट ताराचन्डी स्थान में और तीसरा शिलालेख 1158 ई. का तिलौथू से 5 मील पश्चिम तुतराही झरना के पास मिला है। इस वंश का अन्य अभिलेख के रूप में रोहतास के एक दीवार की खुदाई में मिला है, जिसे प्रतापधवल राजा के वंशज एवं उत्तराधिकारी ने खुदवाया था और जिसके नाम के साथ भी ''प्रताप'' जुड़ा हुआ है।[1]

बिहार डिस्ट्रिक्ट गजेटियर में श्री राय चौधरी ने भी शाहाबाद जिले के रोहतास के महत्त्व पर यथेष्ट रूप से प्रकाश डाला है और इसके ऐतिहासिक और राजनैतिक महत्त्व का उल्लेख किया है। उनके अनुसार - ''मुस्लिम बिहार के दक्षिणी भाग में रोहतास घाटी में अनेक अनार्य जातियाँ रहती थीं, जिन्हें राजा अशोक भी अपने काल में दबाने में असमर्थ था। तिलौथू से पश्चिम पूरी रोहतास घाटी में चेरो, सवर, खरवार और वर्तमान धांगर और भूइयाँ के पूर्वज रहते थे। चेरो राजा मुकुन्ददेव से राजपूतों ने कैमूर घाटी के निचले भाग को कब्जे में लिया था।

श्रीराय चौधरी के अनुसार शाहाबाद जिला गजेटियर, 1924 में यह है कि - ''रोहतासगढ़ का पत्थर का बना किला सूर्यवंशी राजा हरिश्चन्द्र के पुत्र रोहिताश्व के नाम पर है। जो पवित्र पहाड़ी पर अवस्थित है। .... एक समय रोहतास खरवार, उराँव, और चेरो की आवास भूमि रहा है। खरवार अपने को सूर्यवंशी कहते हैं और राहिताश्व के वशंज मानते हैं। चेरो पलामू पर हमला करने के पूर्व अपने को रोहतास के निवासी बताते हैं। उराँव भी अपने को रोहतासगढ़ का मालिक बताते हैं और सरहुल की एक रात जब वे खा-पीकर नाच-गान में मस्त थे, हिन्दुओं ने हमला कर उनसे छीन लिया।

हिन्दु-काल से संबंधित रोहतास के इर्द-गिर्द मिले शिलालेखों से इसके इतिहास का पता चलता है। 1169 ई. का एक शिलालेख प्रताप धवल (राजा) द्वारा बनवाई गई सड़क का विवरण देता है। प्रतापधवल जपला का राजा था। तुतराही और ताराचन्डी (सासाराम) में मिले शिलालेखों से पता चलता है कि वह "खयरवल वंश'' का था, जो "खरवाल वंश'' का ही बोधक है (प्रो. किल्होर्न)। 1223 ई. का

---

1 ऐन हिस्टोरिकल आउटलाइन ऑफ प्रि-ब्रिटिश छोटानागपुर, एजुकेशनल पब्लिकेशन्स, 26/ए, जेल रोड, राँची, मानगोबिन्द बनर्जी, 1989 (पृ. 62/63)

लाल दरवाजा पर मिले शिलालेख से पता चलता है कि प्रताप धवल के बाद प्रताप नामक राजा हुआ था।

1539 (मुस्लिम काल) में रोहतासगढ़ हिन्दुओं के हाथ से निकल कर शेरशाह के अधीन चला गया था। शेरशाह ने तत्कालीन हिन्दु राजा से अपने परिवार को सुरक्षित रखने के लिए आश्रय की मांग की थी। परन्तु बाद में धोखा देकर उसने अफगान सैनिकों को स्त्री वेष में महल में प्रवेश करा कर हमला बोल दिया और राजा को मार भगाया।

आईन-ए-अकबरी में इस किला का वर्णन मिलता है - ''यह किला 14 कोस में फैला है। इसमें फौव्वारे और झरने हैं। बगीचा और झील भी हैं।'' अन्य अभिलेखों से पता चलता है कि इसकी सुरक्षा के लिये तीन दरवाजे थे, जो तोप और पत्थर के गोलों से सुरक्षित थे। ऊपर में नगर, गाँव और मक्के के खेत आबाद थे। वहाँ फौजी छावनी का स्थान हरेक चार महीने पर बदल दिया जाता था।

मानसिंह जब बिहार और बंगाल का गवर्नर हुआ तो उसने रोहतासगढ़ को अपना आवास बनाया। उसने किले की मरम्मत करायी, पर्सियन कला के अनुसार नये बगीचे लगवाये और भवन बनवाये। 1644 ई. रोहतासगढ़ में वहाँ के गवर्नर ने शाहजहाँ के परिवार को सुरक्षित रखा था, जब उसके राजकुमार बगावत कर दी थी।

बंगाल के नवाब मीर कासीम की पराजय के बाद उसकी बेगमें भी इस गढ़ में आकर आश्रय ली थीं। यह घटना 1764 की थी।

जब कैप्टेन गोडार्ड ने टिकारी से चलकर रोहतास पर हमला किया था, तो रोहतासगढ़ के तत्कालीन दीवान शाहमल ने आत्मसमर्पण कर दिया। कैप्टेन गोडार्ड ने वहाँ के सैनिक भंडार को नष्ट करा दिया और कुछ सैनिकों को वहाँ छोड़ दिया जो एक साल रहकर महल को वीरान छोड़कर चल दिये। पुनः 1857 के सिपाही विद्रोह की अवधि में कुंवर सिंह (जगदीशपुर) के छोटे भाई अमर सिंह ने इस गढ़ से विद्रोह का संचालन किया था।[2]

इस प्रकार कैमूर पहाड़ और रोहतासगढ़ न केवल खरवारों के उत्थान-पतन का साक्षी रहा है, वरन् अशोक के काल से ब्रिटिश हुकूमत के काल तक बिहार ही नहीं, दिल्ली के सिंहासन के उत्थान-पतन का मूक गवाह रहा है। आज भी वह दुर्जेय किला कैमूर पर कालजयी बन कर गर्व से खड़ा है। इसी क्षेत्र से पलायन कर खरवार जन-जाति के लोग पलामू आदि जिलों में गये थे।

---

2 बिहार डिस्ट्रिक्ट गजेटियर : शाहाबाद, 1966, गुलजार बाग प्रेस, पटना श्री पी. सी. राय चौधुरी (पृ. 58 से 74)

खरवार द्वारा पलामू में प्रवेश के संबंध में श्री हवलदारी राम ने एक गवेषणापूर्ण इतिहास प्रस्तुत किया है, जो पलामू के इतिहास के साथ-साथ खरवार के पलामू आगमन की घटना को भी प्रस्तुत करता है। श्री गुप्त के अनुसार - ''पलामू में विभिन्न कालावधि में विभिन्न जातियों / जनजातियों का आगमन हुआ। उसे विभिन्न कालों में विभाजित किया गया है :

(क) कोल काल - इस काल में कोल जनजातियों का आगमन पलामू में हुआ।

(ख) रक्सेल-चेरो काल - इस कालावधि में रक्सेल राजपूत और चेरो राजाओं ने पलामू पर हमला कर उस पर शासन किया।

(ग) द्रविड़ काल - इस काल का संबंध पलामू में, खरवारों के आगमन से है। खरवारों के बाद चेरो पलामू में आये थे। द्रविड़ काल का प्रारम्भ 14वीं शताब्दी माना जाता है। जब पठान जाति द्वारा उराँव जन-जाति को परास्त कर रोहतासगढ़ छोड़ने को मजबूर कर दिया गया। उराँव काफी समय से रोहतास में रह रहे थे। विद्वानों का मत है कि वे नर्मदा नदी की घाटी से आकर इस क्षेत्र में बसे थे। पलामू से भागकर उराँव राँची जिले के विभिन्न भागों में फैल गए। उराँव के पूर्व से ही खरवार कैमूर की पहाड़ियों से आकर बस गये थे। ऐसा प्रतीत होता है कि उराँव लोगों के पलायन के बाद रोहतासगढ़ पर पुनः कब्जा करने का प्रयास खरवारों द्वारा किया गया था। रोहतासगढ़ से प्राप्त एक प्रस्तर लेख को देखकर इतिहासकार प्रो. किलहोर्न ने प्रतापधौला नामक सरदार को ('खेरवाल') (खरवार) जाति का प्रधान माना है। तिलौथू (रोहतास) के पास फुलवारी नामक स्थान से प्राप्त शिलालेख से पता चलता है कि खैरवालों (खरवारों) के नायक अथवा सरदार का रोहतासगढ़ और उसके आस-पास के भू-भागों में पूरा आधिपत्य था। उस समय खरवालों ने सोन नदी के पश्चिमी भू-भाग पर तथा पलामू के जपला परगना की उपजाऊ भूमि पर अपना आधिपत्य जमा लिया था। पलामू के बड़े-बूढ़े एक लोक-गीत गाते हैं, जो पलामू किले और रोहतासगढ़ के संबंधों को उजागर करता है :

"ऊँचति गढ़ पलमुआ हो, निचहिं गढ़ रूईदास।"

ऐसी किंवदन्ती है कि जब पलामू किले की चोटी (बुर्ज)पर मशाल जलती थी तब रूईदासगढ़ (रोहतासगढ़) के बुर्ज पर लोग उसे देख पाते थे।[1]

---

1 पलामू का ऐतिहासिक अध्ययन, हलधर प्रेस, डाल्टेनगंज, पलामू, 1972, हवलदारी राम गुप्त हलधर

इस प्रकार लेखक के अनुसार पलामू में खरवारों का आगमन 14वीं. सदी के आस-पास शुरू हुआ जो बहुत वर्षों तक चलता रहा। उसके बाद ही कालक्रमानुसार खरवार जनजाति के लोग राँची, गुमला, लोहरदगा, हजारीबाग आदि जिलों में जाकर बसते गये। सर्वेक्षण के समय भी उपर्युक्त ऐतिहासिक तथ्यों को कई बुजुर्ग खरवारों ने सम्पुष्ट किया।

खरवार जनजाति के लोग गंगा की घाटी और दियारा क्षेत्र में मुंगेर, भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार आदि क्षेत्रों में काफी वर्षों से जाकर बस गये हैं। वे भी अपना पुराना इतिहास लगभग भूल चुके हैं और इस क्षेत्र में अपने पूर्वजों के आने की कालावधि लगभग 400 वर्ष पूर्व बताते हैं। यदि ऐतिहासिक घटनाओं को उनके कथन से जोड़ कर विचार किया जाय तो संभवतः शेरशाह के शासनकाल (1522 के बाद) से उनका आगमन इस क्षेत्र में संभावित लगता है। उस समय बिहार और बंगाल पर शेरशाह के उदय के पूर्व मुगलों का शासन था। यह भी संभव है कि खरवार सैनिक के रूप में इस क्षेत्र में आये और अपनी वीरता के कारण जागीर प्राप्त कर बस गये। इस क्षेत्र में जो खरवार बसे हैं, उनमें कई अच्छे भूमिपति हैं। सूचनानुसार बांका जिला के बौसी प्रखंड में खरवार जन-जाति का एक बड़ा स्टेट लक्ष्मीपुर में था। पूर्व में प्रस्तुत तथ्यों के आलोक में यह भी संभावना व्यक्त की जा सकती है कि आर्यों का आगमन जब गंगा की उर्वर भूमि पर हुआ होगा, उस समय उस क्षेत्र में रहने वाले खरवार गांगेय क्षेत्र के सुरक्षित दियारा के कम उपजाऊ और वनाच्छादित भू-भाग में जाकर बस गये होंगे।

—— ** ——

अध्याय - 3

आवास क्षेत्र एवं जनसंख्या

वर्तमान सन्दर्भ में खरवार जन-जाति का आवास क्षेत्र बिहार में कैमूर की पहाड़ी (दक्षिण) से लेकर उत्तर-पूरब में कटिहार और पूर्णियाँ तक के विस्तृत भू-भाग में फैला हुआ है। बिहार के बाहर मध्य प्रदेश के सुरगुजा, बिलासपुर, सतना, सिद्धी छतरपुर और रीवा में उनकी अच्छी आबादी है। उसी प्रकार उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर एवं सोनभद्र जिलों में भी निवास करते हैं। पश्चिम बंगाल के मालदह जिले में भी उनकी जनसंख्या काफी है।

(क) खरवार जनसंख्या के लगभग 60 प्रतिशत पलामू (गढ़वा सहित) में, लगभग 12 प्रतिशत राँची जिले (गुमला और लोहरदगा सहित) में, 11 प्रतिशत कैमूर तथा रोहतास जिले में तथा शेष आबादी भागलपुर, मुंगेर, साहेबगंज, कटिहार आदि जिलों में फैली हुई है। 1981 की जनगणना के अनुसार बिहार में उनकी कुल जन-संख्या 2,22,758 है, जो कुल जनजातीय जनसंख्या का 3.83 प्रतिशत होता है। जनजातीय जनसंख्या की दृष्टि से खरवार का पाँचवाँ स्थान है।

बिहार के विभिन्न जिलों में अनुसूचित जनजाति की कुल जनसंख्या के अनुपात में खरवार जन-जाति की कुल जनसंख्या 1981 की जनगणना के अनुसार निम्न प्रकार है : 1'

टेबुल - 1

क्र.सं.	जिला	अनु, जन-जाति की कुल जन सं.	खरवार जनजाति की कुल जन सं.	प्रतिशत
1	2	3	4	5
1.	शाहाबाद (रोहतास) एवं कैमूर सहित	45,040	18597	41.19
2.	मुंगेर	60,851	1542	02.53
3.	भागलपुर	92,107	22,256	24.16
4.	पूर्णियाँ	1,13,640	594	00.52

1	2	3	4	5
5.	संथालपरगना (दुमका, देवघर गोड्डा) साहेबगंज, पाकुड़ सहित	13,67,768	46,742	03.42
6.	पलामू (गढ़वा सहित)	351,432	1,02,423	29.14
7.	हजारीबाग (चतरा) सहित	198,792	2,065	01.04
8.	राँची (गुमला, लोहरदगा) सहित	17,32,032	10,799	00.62
9.	सिंहभूम (पूर्वी एवं पश्चिमी)	12,61,504	513	00.04
10.	धनबाद (बोकारो सहित)	1,92,777	532	00.28
11.	कटिहार	87,791	11,781	13.42
12.	गिरिडीह	2,24,808	1,082	00.48

(ख) जनसंख्या में वृद्धि की दर :

विभिन्न वर्षों के जनगणना-प्रतिवेदनों से ज्ञात होता है कि वार्षिक जनसंख्या वृद्धि की दर लगभग 27 प्रतिशत है, जबकि 10 वर्षीय वृद्धि की दर 2.60 प्रतिशत से 5 प्रतिशत तक है, जो कि निम्नांकित आंकड़ों से स्पष्ट होता है :

टेबुल-2

क्र.सं.	जनगणना वर्ष	खरवार की कुल जनसंख्या	जनसंख्या में वृद्धि दर का प्रतिशत
1	2	3	4
1.	1941	77,589	3.20
2.	1961	1,09,357	2.60
3.	1971	139,212	2.82
4.	1981	2,22,758	5.00

इनमें जन्म-दर में वृद्धि का प्रतिशत संतोषप्रद कहा जा सकता है। सर्वेक्षण में यह भी पाया गया कि इनकी महिलाओं में ''बांझपन'' की स्थिति नगण्य है और सर्वेक्षित 50 महिलाओं में एक महिला सन्तानहीन मिली, जिसकी सन्तानोत्पत्ति की

आयु समाप्त हो चुकी थी। इनमें "शिशु मृत्यु-दर" भी अपेक्षाकृत कम है और प्रति 1000 जीवित जन्मे शिशुओं में मृत्यु-दर औसतन 70 से 80 तक पाई गई। उनकी जनसंख्या में औसतन संतोषजनक वृद्धि-दर का एक यह भी प्रमुख कारण है।

(ग) लिंगानुपात :

इनकी जनसंख्या की यह भी विशिष्टता है कि पुरुषों की जनसंख्या के अनुपात में महिलाओं की जनसंख्या कम है। पारिवारिक सर्वेक्षण में भी यह तथ्य उभर कर सामने आया। 1000 पुरुषों के अनुपात में महिलाओं की संख्या 990 से 995 है, जो कि 1981 की जनगणना प्रतिवेदन से स्पष्ट होता है। यह अनुपात अलग-अलग जिलों में भिन्न-भिन्न पाया जाता है, जैसा कि टेबुल -3 पर अवलोकनीय है :

टेबल -3

खरवार जनजाति की लिंगानुपात (जनगणना - 1981)

क्र.स.	जिला	ग्रामीण जनसंख्या		शहरी जनसंख्या	
		पुरुष	महिला	पुरुष	महिला
1	2	3	4	5	6
1.	शाहाबाद (रोहतास/कैमूर)	9241	8824	296	227
2.	पूर्णियाँ	278	265	24	27
3.	कटिहार	5980	5708	65	28
4.	मुंगेर	684	704	83	71
5.	भागलपुर	11,466	10,751	34	5
6.	संथालपरगना	23,998	22,651	68	25
7.	धनबाद	217	167	43	148
8.	गिरिडीह	518	535	15	13
9.	हजारीबाग	900	893	147	125
10.	पलामू	51,482	50,490	273	178
11.	राँची	5,364	5334	56	45
12.	सिंहभूम	140	238	129	106

(घ) जनसंख्या का घनत्व :

जनसंख्या का घनत्व कई बातों पर निर्भर करता है, जिनमें भौगोलिक कारण सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। 1961 और 1971 की जनगणना के अनुसार छोटानागपुर एवं संथालपरगना का औसत जन-घनत्व क्रमशः 148 तथा 179 व्यक्ति प्रति वर्ग कि. मी. था, जबकि बिहार राज्य का औसत जन-घनत्व क्रमशः 271 एवं 324 व्यक्ति प्रति/वर्ग कि. मी. था। धनबाद जिले का जन-घनत्व छोटानागपुर में सबसे अधिक क्रमशः 408 तथा 490 व्यक्ति प्रति वर्ग कि. मी. था, जबकि पलामू जिले का सबसे कम-94 तथा 119 व्यक्ति प्रति वर्ग कि. मी. था। जनजातीय घनत्व (प्रति वर्ग कि. मी.) छोटानागपुर और संथालपरगना में अपेक्षाकृत और अधिक कम है। जन-जातीय समुदाय अधिकांशतः जंगल या पहाड़ी क्षेत्रों में बसा हुआ है। अतः भौगोलिक कारणों से वहाँ का जन-घनत्व कम होना स्वाभाविक है। 1961 तथा 1971 की जनगणना के अनुसार छोटानागपुर और संथालपरगना में जन-जातीय जन घनत्व क्रमशः 50 तथा 51 व्यक्ति प्रति वर्ग कि. मी. था, जबकि बिहार राज्य में 1961 तथा 1971 में जनजातीय जन-घनत्व क्रमशः 24 और 28 व्यक्ति प्रति वर्ग कि. मी. था। एक सर्वेक्षण के अनुसार पहाड़ी और जंगल क्षेत्र में खरवार जन-जाति का जन-घनत्व लगभग 60 व्यक्ति प्रति वर्ग कि. मी. है, जबकि समतल मैदानों में उनका जन-घनत्व लगभग 90 व्यक्ति प्रति वर्ग कि. मी. है। 1981 की जनगणना के अनुसार जनजातीय जन-घनत्व (खरवार सहित) में जिलावार वृद्धि का प्रतिशत निम्न प्रकार है जो जनजातीय क्षेत्र से संबधित है :

टेबुल -4

क्र.सं.	जिला का नाम	जनजातीय घनत्व में वृद्धि का प्रतिशत (1981)
1	2	3
1.	बिहार राज्य	33.42
2.	बिहार राज्य संथालपरगना	66.92
3.	संथालपरगना	96.81
4.	धनबाद	64.31
5.	गिरिडीह	23.46
6.	हजारीबाग	23.46

7.	पलामू	27.72
8.	राँची	94.49
9.	सिंहभूम (पूर्वी/पश्चिमी)	93.81

जनसंख्या के घनत्व में वृद्धि का कारण जन संख्या में वृद्धि के साथ-साथ शहरीकरण तथा औद्योगिक विकास माना जा सकता है।

(ङ) आयु-संरचना एवं वैवाहिक-स्थिति :

आयु संरचना के आधार पर खरवार की अधिकतम जनसंख्या 0–14 वर्ष के आयु वर्ग की है, जो कुल जनसंख्या का लगभग 42 प्रतिशत होता है। 15 से 44 वर्ष के आयु वर्ग का प्रतिशत 38 है और 45 वर्ष तथा उससे अधिक आयु वर्ग में 20 प्रतिशत आते हैं। 1981 की जनगणना के अनुसार उनकी वैवाहिक स्थिति का जिलावार आंकड़ा – टेबुल – 5 पर अवलोकनीय है :

टेबुल -5

वैवाहिक स्थिति	विभिन्न आयु वर्ग									
	10-14 वर्ष		15-19 वर्ष		20-49 वर्ष		50-59 वर्ष		60 वर्ष एवं अधिक	
	पु	म	पु	म	पु	म	पु	म	पु	म
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
1. रोहतास/कैमूर										
कुल	1226	1035	659	606	3605	3661	734	579	799	728
शादी नहीं किये	1148	865	407	123	184	7	4	–	–	1
शादी-शुदा	78	168	250	480	3272	3529	656	463	622	350
विधुर/विधवा	–	1	2	3	137	121	91	115	170	375
परित्यक्ता/अलगाव	–	–	–	–	11	3	1	2	–	–
2. पूर्णियाँ										
कुल	40	46	25	15	102	117	22	17	17	11
शादी नहीं किये	40	46	27	8	16	4	1	–	–	–
शादी-शुदा	–	–	2	7	83	94	19	12	11	4
विधुर/विधवा	–	–	–	–	2	14	2	5	6	7

वैवाहिक स्थिति	विभिन्न आयु वर्ग									
	10-14 वर्ष		15-19 वर्ष		20-49 वर्ष		50-59 वर्ष		60 वर्ष एवं अधिक	
	पु	म	पु	म	पु	म	पु	म	पु	म
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
परित्यक्ता/ अलगाव	–	–	–	–	1	4	–	–	–	–
3. कटिहार										
कुल	834	751	511	371	2090	2160	348	391	498	452
शादी नहीं किये	828	727	491	128	302	19	1	–	–	1
शादी-शुदा	6	23	20	237	1753	1981	321	296	396	161
विधुर/विधवा	–	–	–	3	33	38	25	95	102	290
परित्यक्ता/अलगाव	–	1	–	4	2	20	1	–	1	–
4. मुंगेर										
कुल	95	83	51	66	322	307	44	50	30	38
शादी नहीं किये	82	55	60	12	15	273	–	1	–	–
शादी-शुदा	13	27	21	54	296	28	41	24	21	11
विधुर/विधवा	1	–	–	–	10	1	3	25	9	27
परित्यक्ता/ अलगाव	–	–	–	–	2	–	–	–	–	–
5. भागलपुर										
कुल	1541	1291	816	614	3732	3894	708	665	900	759
अविवाहित	1513	1291	595	161	504	10	4	–	2	–
विवाहित	27	99	81	448	3186	3678	667	527	722	417
विधुर/विधवा	1	2	–	2	42	188	37	144	176	443
परित्यक्ता/अलगाव	–	–	–	–	1	11	–	2	–	–
6. संथालपरगना										
कुल	3222	2705	2177	1915	8963	8647	1487	1311	1391	1380
अविवाहित	3112	2178	1699	427	915	51	6	3	4	4

वैवाहिक स्थिति	विभिन्न आयु वर्ग									
	10-14 वर्ष		15-19 वर्ष		20-49 वर्ष		50-59 वर्ष		60 वर्ष एवं अधिक	
	पु	म	पु	म	पु	म	पु	म	पु	म
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
विवाहित	109	109	471	1475	7824	7975	1326	881	1078	439
विधुर/विधवा	–	4	2	10	190	558	153	227	306	935
परित्यक्ता/अलगाव	–	5	4	17	34	61	2	–	3	2
7. धनबाद										
कुल	21	29	14	155	99	15	10	7	4	
अविवाहित	26	19	23	2	11	–	–	–	–	–
विवाहित	–	2	5	12	142	85	12	7	5	–
विधुर/विधवा	–	–	–	–	2	12	3	3	2	4
परित्यक्ता/अलगाव	–	–	–	–	–	2	–	–	–	–
8. गिरिडीह										
कुल	75	72	46	48	222	220	35	28	15	28
अविवाहित	66	54	27	9	12	–	–	–	–	–
विवाहित	8	18	18	38	200	194	29	11	11	5
विधुर/विधवा	2	–	–	–	8	26	6	17	4	23
परित्यक्ता/अलगाव	–	–	–	1	2	–	–	–	–	–
9. हजारीबाग										
कुल	127	91	91	398	359	53	57	59	60	
अविवाहित	144	121	75	37	61	2	1	1	1	–
विवाहित	1	6	15	54	324	324	41	31	47	23
विधुर/विधवा	–	–	–	–	10	32	9	26	12	39
परित्यक्ता/ अलगाव	–	–	–	–	1	1	–	–	–	–
10. पलामू										
कुल	6732	5917	4275	4154	19425	19187	3707	3702	3027	3102
अविवाहित	6348	5150	2575	1094	990	96	15	1	9	1

वैवाहिक स्थिति	विभिन्न आयु वर्ग									
	10-14 वर्ष		15-19 वर्ष		20-49 वर्ष		50-59 वर्ष		60 वर्ष एवं अधिक	
	पु	म	पु	म	पु	म	पु	म	पु	म
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
विवाहित	374	747	1647	3012	17517	18225	3285	2393	2349	1313
विधुर/विधवा	3	5	25	15	239	89	382	779	649	1759
परित्यक्ता/अलगाव	5	6	27	25	1	4	24	28	19	27
11. राँची										
कुल	706	647	495	501	2075	2077	369	333	278	327
अविवाहित	693	605	390	279	223	42	1	–	4	4
विवाहित	13	41	98	216	1751	1875	315	197	204	100
विधुर/विधवा	–	–	3	2	73	132	46	132	69	222
परित्यक्ता/अलगाव	–	–	4	4	27	27	5	–	–	–
12. सिंहभूम-पूर्वी/पश्चिमी										
कुल	36	30	34	39	105	89	22	13	9	14
अविवाहित	36	30	33	31	29	7	1	1	–	–
विवाहित	–	–	1	8	74	70	19	6	9	3
विधुर/विधवा	–	–	–	–	1	10	2	6	–	11
परित्यक्ता/अलगाव	–	–	–	–	–	2	–	–	–	–
13. बिहार										
कुल	14967	12932	9436	8617	41827	41574	7681	6774	7175	7045
अविवाहित	14308	12127	6699	2366	3334	748	38	8	26	9
विवाहित	643	1665	2668	6150	36970	39020	6842	4927	5685	2781
विधुर/विधवा	7	12	32	35	1200	2062	770	1800	1538	4222
परित्यक्ता/अलगाव	5	13	35	52	321	223	34	35	24	2

स्रोत – जनगणना, 1981, भारत सरकार।

1981 की जनगणना के आंकड़ों के विश्लेषण से पता चलता है कि खरवार जन-जाति में अभी भी ''बाल विवाह'' की प्रथा प्रचलित है और 10 से 14 वर्ष

की आयु में कुल 643 लड़के और 1665 लड़कियों का विवाह सम्पन्न हुआ। 15 से 19 वर्ष की आयु में 1668 लड़के और 6150 लड़कियाँ दाम्पत्य सूत्र में बाँधे गये। 20 और 49 वर्ष के आयु वर्ग में सबसे अधिक 36970 युवक एवं 39020 लड़कियाँ विवाहित पाई गयीं।

क्षेत्रीय सर्वेक्षण में पता चला कि पूर्व में खरवार अपने लड़के-लड़कियों की कम आयु में शादी कर देना प्रतिष्ठा की बात समझते थे। परन्तु अब बाल-विवाह की प्रथा में काफी कमी आई है। जहाँ शिक्षा का प्रचार-प्रसार अधिक हुआ है, वहाँ शिक्षा (उच्च शिक्षा) पूरी कर लेने और नौकरी पाने के बाद ही लड़कों की शादी की बात सोचते हैं। परन्तु स्त्री-शिक्षा की काफी कमी है और अधिकांश खरवार लड़कियाँ प्राइमरी या मिडिल स्तर तक ही पढ़ाई कर विद्यालय जाना छोड़ देती हैं। फलस्वरुप अभिभावक उनकी शादी शीघ्र कर देना चाहते हैं।

तिलक दहेज की कुप्रथा उनमें नहीं है, इस कारण लड़कियों की शादी तय करने में कोई दिक्कत नहीं होती है। 50 परिवारों के सर्वेक्षण में केवल एक लड़की लगभग 28 वर्ष की अविवाहित पाई गई (बिशुनपुर प्रखंड) के चिंगरी गाँव में) उसकी शादी में विलम्ब का कोई तर्कपूर्ण कारण नहीं बताया गया। इसे एक तरह से अपवाद माना जा सकता है।

इनमें ''तलाक'' की प्रथा नहीं के बराबर है, जैसा कि जनगणना के आंकड़ों और सर्वेक्षण से पता चलता है। साथ ही, विधवा विवाह की परम्परा लोकप्रिय होने के कारण महिलाओं का पुनर्विवाह हो जाता है। इस प्रकार खरवार की वैवाहिक स्थिति अन्य कई जनजातियों से अच्छी है, जिनमें "वधु मूल्य'' (गोनोंग) की परम्परा है और इसके कारण अनेकों लड़कियाँ कुआंरी रह जाती है।

वैवाहिक स्थिति की जिलावार समीक्षा करने पर यह तथ्य उभर कर सामने आता है कि जहाँ शिक्षा की कमी है, वहाँ बाल-विवाह का प्रचलन अधिक है और 10 वर्ष से 19 वर्ष की अल्पायु में लड़के एवं लड़कियों की शादी कर दी जाती है। 10 वर्ष से कम आयु में विवाह कर देने का कोई उदाहरण सर्वेक्षण या 1981 के जनगणना प्रतिवेदन में नहीं मिला। अल्पायु में (10 से 14 एवं 15 से 19 वर्ष की आयु में) लड़कों की अपेक्षा लड़कियों की शादी की संख्या अधिक है। ऊपर वर्णित तथ्य निम्नांकित जिलों के जनगणना-प्रतिवेदन से स्पष्ट होता है :

टेबुल -6

(जनगणना - 1981)

क्र.सं.	जिला का नाम	10 से 14 वर्ष की आयु में विवाहितों की संख्या		15 से 19 वर्ष की आयु में विवाहितों की संख्या	
		पुरुष	महिला	पुरुष	महिला
1	2	3	4	5	6
1.	पलामू	374	747	1647	3012
2.	संथाल परगना	109	109	471	1475
3.	रोहतास	78	168	250	480
4.	भागलपुर	27	99	81	448
5.	राँची (गुमला लोहरदगा	13	41	98	216

उपर्युक्त आंकड़ों से यह स्पष्ट है कि पलामू में सबसे अधिक एवं राँची (गुमला-लोहरदगा सहित) में सबसे कम अल्पायु में विवाह सम्पन्न हुए हैं। 1981 के बाद स्थिति में काफी बदलाव आये हैं और सर्वेक्षण में अल्पायु विवाह का कोई दृष्टान्त नहीं मिला।

खरवार जन-जाति की अधिकांश जनसंख्या गाँवों में बसती है। शहर में नौकरी से जुड़े हुए लोग ही रहते हैं। जो शहर में घर बनाकर रहते हैं, उन्होंने भी गाँव को पूरी तरह छोड़ा नहीं है। खरवार अधिकांश खेतिहर या खेतिहर मजदूर हैं, इस कारण भी उनकी आबादी का अधिकांश भाग गाँवों में रहता है। जनगणना-प्रतिवेदनों के अनुसार ग्रामीण और शहरी आबादी का प्रतिशत निम्न प्रकार पाया गया :-

टेबल -7

जनगणना वर्ष	ग्रामीण जनसंख्या (प्रतिशत)	शहरी जनसंख्या प्रतिशत
1961	97.39	2.61
1971	97.80	4.20
1981	93.77	6.23

सर्वेक्षण से पता चला है कि अभी भी 1981 के बाद इस प्रतिशत में लगभग 2 प्रतिशत की वृद्धि हुई है अथवा लगभग 91 प्रतिशत लोग गाँवों में ही बसे हुए हैं और लगभग 9 प्रतिशत लोग ही गाँव छोडकर शहर में बस गए हैं।

(च) कार्यशील जनसंख्या :

1981 की जनगणना के अनुसार खरवार की कुल जनसंख्या 2,22,758 में से कुल कार्यशील जनसंख्या 84069 (पुरुष 702797 महिला - 13793) है, जो कुल मजदूर हैं। इस प्रकार कार्यशील जनसंख्या का अधिकांश भाग कृषि अथवा कृषि मजदूरी से जुड़ा हुआ है। कार्यशील जनसंख्या का जिलावार विवरण ''पेशा'' संबंधी अध्याय में दिया जा रहा है।

(छ) धार्मिक जनसंख्या :

यह ज्ञातव्य है कि खरवार जन-जाति पूरी तरह हिन्दु मतावलम्बी हैं। इस सन्दर्भ के अनुसार पूर्व में विद्वानों ने भी अपने विचार व्यक्त किये हैं। 1981 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या में से (खरवार) के 2,21737 हिन्दु, 130 मुस्लिम, 273 इसाई, सिख तथा 74 जैन धर्मावलम्बी हैं। शेष अन्य धर्मों अथवा सरना आदि जनजातीय धर्मों के मानने वाले हो सकते हैं, जिसका जनगणना-प्रतिवेदन में स्पष्ट उल्लेख नहीं किया गया है। धर्म-संबंधी जनसंख्या का जिलावार प्रतिवेदन ''धार्मिक व्यवस्था'' संबंधी अध्याय में दिया जा रहा है।

(ज) शिक्षा आधारित जनसंख्या :-

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, खरवार जन-जाति में शिक्षा की बहुत कमी है। उनकी कुल जनसंख्या 2,22,758 में से 80908 पुरुष एवं 1,02.480 महिलाएं अशिक्षित या निरक्षर हैं। अनौपचारिक एवं औपचारिक रूप से 17153 पुरुष एवं 7777 महिलाएँ साक्षर हुई हैं। प्राथमिक स्तर तक शिक्षा पाने वाले पुरुषों की संख्या 20223 और महिलाओं की संख्या 4407 है। मिडिल पास पुरुष 6384 और महिलाएं 1124, मैट्रिक पास पुरुष 3672 और महिला 221 तथ उच्चतर माध्यमिक/आईए पास पुरुष 568 एवं महिला 40 है। उच्च एवं तकनिकी शिक्षा के आंकड़े नगण्य हैं। शिक्षा संबंधी जिलावार आंकड़े "शिक्षा'' संबंधी अध्याय में दिये जा रहे हैं।[1]

4. भौगोलिक क्षेत्र :

भौगोलिक दृष्टि से बिहार विविधताओं का प्रदेश है, जो इसकी भौगोलिक संरचना, जलवायु, वन, कृषि, पर्यावरण आदि में अवलोकनीय है। बिहार प्रदेश उत्तरी गोलार्द्ध में 21,58'' 10^0 से 27^0 31'' 15'' अक्षांश उत्तर तथा 83^0 $19^0$50'' से 88^0 17''40^0 देशान्तर पूर्व में स्थित है। इसका क्षेत्रफल 173877 वर्ग कि. मी. है।

---

1 स्रोत - 1981 जनगणना

यह राज्य उत्तर से दक्षिण दिशा की ओर 605 कि. मी. लम्बा तथा पूर्व से पश्चिम 483 कि. मी. चौड़ा है। इसमें कहीं उच्च पर्वत श्रेणियाँ हैं तो कहीं विशाल मैदान है। खरवार जन-जाति के भौगोलिक आवास क्षेत्र को समझने के लिए बिहार के भौगोलिक विभाजन को जानना आवश्यक है, क्योंकि इस जन-जाति की जनसंख्या का विस्तार दक्षिण-पश्चिम में कैमूर पहाड़ी श्रृंखला से लेकर उत्तर-पूर्व में कटिहार एवं पूर्णियाँ तक है।

बिहार दो प्राकृतिक भागों में विभाजित है। इसका उत्तरी भाग गंगा तथा उसकी सहायक नदियों के जलोढ़ से निर्मित है, जिसका कृषि-उत्पादन की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह भू-भाग राज्य के 42 प्रतिशत क्षेत्र में फैला हुआ है। इसका दक्षिणी भाग समुद्र तल से 300 मीटर से 600 मीटर तक की ऊँचाई कैमूर की पहाड़ी श्रृंखला, छोटानागपुर का पठार और रामगढ़ राजमहल की पहाड़ी श्रृंखला के रूप में फैला हुआ है। उत्तरी भाग मुख्यत: कृषि प्रधान क्षेत्र है तो दक्षिण पठारी भाग वन एवं खनिज सम्पदा से परिपूर्ण है।

उत्तरी गंगा के मैदान में गण्डक-घाघरा का दोआब, मिथिला का मैदान तथा कोशी और महानन्दा का मैदान है। दक्षिणी गंगा के मैदान में गंगा-सोन का दोआब, मगध का मैदानी भाग और अंग का मैदान आता है। छोटानागपुर के पठारी भाग में पात या पाट का पठार, राँची का पठार और छोटानागपुर का पठार सम्मिलित हैं। पात का पठार (नेतरहाट का पठार) छोटानागपुर का सबसे ऊँचा पठारी भाग है जो 2500 से 3600 फीट तक ऊँचा है। यह पाट क्षेत्र गुमला, लोहरदगा (पुराना राँची जिला) और पलामू जिला में फैला हुआ है। यह क्षेत्र सघन वनों के साथ-साथ बाक्साइड, चूना पत्थर आदि से भरपूर है। राँची का पठार 2000 फीट की अधिकतम ऊँचाई में फैली हुई है, जिसकी तराई में उपजाऊ कृषि भूमि भी है। इस पठार का विस्तार उत्तर में दामोदर नदी तक और दक्षिण में स्वर्णरेखा नदी तक चला गया है। इस क्षेत्र में वनों के साथ-साथ कोयला भी प्रचुर मात्रा में मिलता है, जो छोटानागपुर के निचले भाग में अवस्थित है। इस क्षेत्र में पलामू, हजारीबाग, गिरिडीह, धनबाद और सिंहभूम आते हैं। कोयला के अलावा इस क्षेत्र में लोहा पत्थर, मैंगनिज, ताम्बा पत्थर, यूरेनियम आदि के अपार भंडार हैं।

बिहार के इस दक्षिणी भाग में प्राचीन काल से अब तक अनेकों भौगोलिक परिवर्तन होते रहे हैं, जिसके भू-वैज्ञानिक प्रमाण यहाँ पाये जाने वाले विभिन्न प्रकार की चट्टानों में मिलता है, जिनमें आर्कियन कल्प की चट्टानें इस क्षेत्र के दो तिहाई भाग में धारवाड़ काल की चट्टानें उत्तरी और दक्षिणी सिरे पर, विन्ध्य कल्प की

चट्टानें कैमूर के पठार पर, गोंडवाना कल्प की चट्टानें छोटानागपुर के मध्य भाग में पूरब से पश्चिम (कोयला क्षेत्र) तक फैली हुई हैं। क्रिटेसियस कल्प की चट्टानें लावा से निर्मित हैं और पश्चिमी भाग में पाई जाती हैं। टर्शियरी चट्टानों से गंगा के मैदानी भाग का विकास हुआ है। दक्षिण बिहार का यह भाग और गंगा, सोन और दामोदर नदी के तटीय मैदान विभिन्न जनजातियों के साथ-साथ खरवार जन-जाति के बिहार में प्रवेश करने एवं बस जाने के लिए उपयुक्त स्थल साबित हुए हैं।[1] कैमूर का पठार मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश से आने वाली खरवार जन-जाति का प्रवेश द्वार माना जाता है। उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर, सोनभद्र जिला तथा मध्य प्रदेश के जशपुर, सुरगुजा, अम्बिकापुर आदि में अभी भी खरवार काफी संख्या में हैं। ये क्षेत्र भौगोलिक दृष्टि से बिहार के कैमूर और पलामू के गढ़वा और गुमला जिला से सटे हुए हैं।

भौगोलिक दृष्टि से वे बिहार के निम्नांकित जिलों में बसे हुए हैं, जिनका भौगोलिक क्षेत्रफल आदि का विवरण दिया जा रहा है। उनकी अधिकांश आबादी पलामू एवं उससे सटे गुमला-लोहरदगा जिलों में है, जहाँ वे कैमूर से आये थे।

टेबुल -8

(खरवार जन-जाति का भौगोलिक आवासीय-क्षेत्र)

क्र.सं.	प्रमंडल	जिला	जिला का क्षेत्रफल	प्रखंड, जहाँ खरवार बसते हैं	कुल जनसंख्या (1991)	खरवार की जनसंख्या (1981)
1	2	3	4	5	6	7
1.	पटना	रोहतास	3851 व.कि. मी.	चेनारी, रोहतास, अकोढ़ीगोंला, डिहरी	1917416	118597
2.	पटना	कैमूर	3362 व.कि. मी.	भगवानपुर, अधौरा,	9,83,269	
3.	पूर्णियाँ	पूर्णियाँ कटिहार	3229 व.कि. मी.	बरहराकोठी	1878885	594
4.	पूर्णियाँ	कटिहार	3057 व.कि. मी.	कटिहार, प्राणपुर, मनिहारी, बरारी, अहमदाबाद	1825380	11,781

1 बिहार दिग्दर्शन, स्टार पब्लिकेशन, पटना, प्रो. शिवशंकर सिंह, पृ. 143 से 148

क्र.सं.	प्रमंडल	जिला	जिला का क्षेत्रफल	प्रखंड, जहाँ खरवार बसते हैं	कुल जनसंख्या (1991)	खरवार की जनसंख्या (1981)
1	2	3	4	5	6	7
5.	भागलपुर	भागलपुर	2570 व.कि. मी.	कहलगाँव, पीरपैती, गोपालपुर, रंगरा	19,09967	22,256
6.	संथालपरगना	साहेबगंज	1600 व.कि. मी.	साहेबगंज, बोरिया	7,36,835	46742
7.	संथालपरगना	गोड्डा	2110 व.कि. मी.	ठाकुर गंगटी	8,61,182	
8.	उत्तरी छोटानागपुर	हजारीबाग	5049 व.कि. मी.	हजारीबाग, बड़कागाँव रामगढ़ आदि।	16,01,567	2065
9.	उत्तरी छोटानागपुर	गिरिडीह	6892 व.कि. मी.	गिरिडीह, पीराटांड़ आदि।	22,25,480	1082
10.	दक्षिणी छोटानागपुर	राँची	7698 व.कि. मी.	लापुंग, ओरमांझी, अरकी आदि	22,14,048	
11.	दक्षिणी छोटानागपुर	गुमला	9877 व.कि. मी.	बिशुनपुर, रायडीह घाघरा	11,53976	
12.	दक्षिणी छोटानागपुर	लोहरदगा	1491 व.कि. मी.	सेन्हा घाघरा	2,88,886	10799
13.	पलामू प्रमंडल	पलामू गढ़वा	12749 व.कि. मी.	लातेहार, गारू, महुआडांड़, बरवाडीह, मनिका, रंका, चन्दवा आदि	16,49,841	1.02,423

5. जलप्रवाह एवं नदियाँ :

बिहार के आर्थिक विकास में नदियों की प्रमुख भूमिका रही है। नदियों की घाटी में आदि काल से मानव-सभ्यता और संस्कृति फलती-फूलती रही है। सबसे प्राचीन सभ्यता का उद्‌भव और विकास सिन्धु नदी की घाटी में ही हुआ। नदियाँ कृषि, सिंचाई, परिवहन, मत्स्य-पालन आदि का संसाधन उपलब्ध कराती हैं। साथ ही, विद्युत उत्पादन में इनकी अहम भूमिका है। साथ ही, नदियाँ बाढ़ के दिनों में अपने साथ नयी और उपजाऊ मिट्टी लाकर खेतों को अधिक उर्वर बनाती हैं।

छोटानागपुर में प्रवाहित स्वर्णरेखा नदी में पहले काफी मात्रा में स्वर्ण कण मिलते थे। अभी भी उसके बालू में सोना मिलता है। नदियाँ औद्योगिक विकास में भी सहायक होती हैं। बिहार में विभिन्न जनजातियों का आगमन यहाँ की नदी घाटी में ही हुआ। दामोदर नदी के किनारे हजारीबाग से कुछ दूर बड़कागाँव घाटी में पहाड़ी गुफाओं में सिन्धु घाटी सभ्यता के समकालीन के शैल-चित्र मिले हैं, जिससे यह प्रतीत होता है कि द्रविड़ सभ्यता इस क्षेत्र में पहले से विकसित हुई होगी। खरवार जन-जाति के लोग भी गंगा, सोन, कोसी आदि नदियों के किनारे आकर बस गये जहाँ आज भी वे रह रहे हैं।

जलप्रवाह की दृष्टि से बिहार की नदियों को तीन समूहों में बांटा जा सकता है :-

(क) वे नदियाँ जो हिमालय से निकल कर दक्षिण और पूरब की ओर बहती हैं और गंगा या उसकी सहायक नदियों में मिल जाती हैं। इनमें गंगा के साथ-साथ बूढ़ी गंडक, बागमती, कोसी, काली कोसी, कमला, महानन्दा आदि नदियाँ हैं, जिनके दियारा क्षेत्र में मुंगेर, भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार, पूर्णियाँ आदि जिलों में खरवार काफी संख्या में बसते हैं। ये नदियाँ एक ओर इनके कृषि विकास के लिए वरदान हैं, तो दूसरी ओर बाढ़ की विभीषिका से काफी नुकसान पहुँचाती हैं। गंगा नदी पर फरक्का बराज बनने के बाद भागलपुर का कहलगाँव, पिरती, कटिहार और साहेबगंज का कुछ क्षेत्र बाढ़ आने से जून से सितम्बर तक जलमग्न रहता है, जिसके कारण भदई फसल अक्सर मारी जाती है।

(ख) वे नदियाँ जो दक्षिण से निकल कर उत्तर की ओर गंगा या उसकी सहायक नदियों में मिलती हैं। इन नदियों में सोन, उत्तरी एवं दक्षिणी कोयल, पुनपुन, सकरी, फल्गु, दामोदर, स्वर्णरेखा, बराकर, अजय आदि हैं। इनमें अधिकांश नदियाँ बरसाती हैं और गर्मी में सूख जाती हैं। वर्षा-ऋतु में ये भयंकर रूप धारण कर लेती हैं और कहीं-कहीं बाढ़ भी आ जाती है। सोन नदी की घाटी और उसके किनारे पर अवस्थित रोहतास पहाड़ी (कैमूर) पर ही खरवार आदि काल में बिहार में आकर बसे थे और जहाँ से वे बिहार के विभिन्न क्षेत्रों में फैल गये। उत्तरी कोयल और ओरंगा नदी की घाटी में भी खरवार की जनसंख्या काफी है। इन नदियों से वे अपनी खेती के लिए सिंचाई का काम लेते हैं। वे नदियाँ जो पठार से निकल कर पूरब और दक्षिण की ओर

सूचना स्रोत - बिहार दिग्दर्शन, स्टार पब्लिकेशन, पटना (पृ. 320 से 378) एवं सर्वेक्षण

बहती हैं। दक्षिण बिहार की कई नदियाँ इस श्रेणी में आती हैं, जिनमें कई छोटी-छोटी नदियाँ भी हैं। इनमें स्वर्णरेखा और दामोदर प्रमुख हैं। दामोदर नदी के किनारे अनेकों कोयले की खानें हैं और दामोदर सबसे अधिक प्रदूषित नदी मानी जाती है।[2]'

6 बिहार की मिट्टियाँ :-

मिट्टी कृषि-जीवन का मुख्य आधार है। मिट्टी की उर्वरता और गुणवत्ता पर ही किसान का आर्थिक-विकास निर्भर करता है। अमेरिका के मिट्टी विशेषज्ञ डा. बेनेट के अनुसार - ''मिट्टी भू-पृष्ठ पर मिलने वाले असंगठित पदार्थों की वह ऊपरी परत है जो मूल चट्टानों अथवा वनस्पति के योग से बनती है। विभिन्न जलवायु में और विभिन्न चट्टानों से बनी मिट्टियों में एकरूपता की कमी और उर्वरा शक्ति में भिन्नता पाई जाती है।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (दिल्ली) द्वारा मिट्टियों का वर्गीकरण निम्न प्रकार प्रस्तुत किया गया है :

1. लाल मिट्टी, 2. काली मिट्टी, 3. लैटेराइट मिट्टी, 4. क्षार युक्त मिट्टी, 5. हल्की काली दलदली मिट्टी, 6. काप मिट्टी, 7. रेतीली मिट्टी, 8. वनों वाली मिट्टी

बिहार में पाई जाने वाली मुख्य मिट्टी के चार प्रकार हैं :-

(क) पहाड़ी प्रदेश की मिट्टियाँ (ख) नदियों द्वारा लाई गई मिट्टियाँ
(ग) दक्षिणी पठार की मिट्टियाँ (घ) अन्य मिट्टियाँ

इनमें क्र. क और ग श्रेणी की मिट्टियाँ कैमूर पहाड़ी और छोटानागपुर तथा राजमहल की पहाड़ियों पर मिलती हैं जो कम उपजाऊ होती हैं। क्र. ख प्रकार की मिट्टी मुख्यत: गंगा, सोन आदि नदियों की घाटी अथवा दियारा क्षेत्र में पाई जाती है, जो तुलनात्मक दृष्टि से कुछ अधिक उपजाऊ होती है। मुंगेर, भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार, पूर्णियाँ आदि के दियारा क्षेत्र में, जहाँ खरवार बसते हैं, इसी तरह की मिट्टी पाई जाती है। पठारी क्षेत्र में लाल मिट्टी, रेतीली मिट्टी, लैटेराइट मिट्टी मिलती है, जो कम उपजाऊ होती है। कहीं-कहीं काली मिट्टी भी मिलती है, जो अधिक उपजाऊ होती है।

---

2 बिहार दिग्दर्शन, स्टार पब्लिकेशन, पटना (पृ. 156 से 160)

7. जलवायु :-

वर्षा, तापमान और आर्द्रता आदि को लेकर बिहार में चार जलवायु क्षेत्र हैं:-

(क) उत्तरी-पूर्वी आर्द्र प्रदेश - इसमें पूर्णियाँ, सहरसा, किसनगंज, अररिया आदि।

(ख) उत्तरी-पश्चिमी आर्द्र प्रदेश - पूर्वी एवं पश्चिमी चम्पारण, गोपालगंज, बेतिया, सिवान आदि जिले इस क्षेत्र में आते हैं।

(ग) मध्यवर्ती उष्ण एवं अर्द्ध शुष्क क्षेत्र - इसमें रोहतास, कैमूर, गया, औरंगाबाद, भागलपुर आदि जिला आते हैं।

(घ) छोटानागपुर और संथालपरगना का आर्द्र क्षेत्र - इस क्षेत्र की ऊँचाई समुद्र तल से 1500 से 1050 मीटर तक है। इस क्षेत्र में 1650 मि. मी. तक वर्षा होती है और तापमान कम रहता है। इस क्षेत्र में राँची, गुमला, लोहरदगा, सिंहभूम, साहेबगंज आदि जिला आते हैं।[1]

खरवार जन-जाति के लोग अधिकांशत: छोटानागपुर के पलामू, राँची (गुमला-लोहरदगा सहित) और संथालपरगना के साहेबगंज और गोड्डा जिले में बसते है, जहाँ का मौसम अनुकूल रहता है। भागलपुर, कटिहार आदि के दियारा क्षेत्र का मौसम गर्म और आर्द्रता भरा रहता है। भागलपुर औसतन अधिक तापमान का क्षेत्र है और राँची सबसे कम। सर्वाधिक आर्द्रता का क्षेत्र भागलपुर है और न्यूनतम औसत आर्द्रता का क्षेत्र डाल्टेनगंज (पलामू) है।

8. वर्षा का वितरण :-

बिहार में छोटानागपुर का पठारी भाग औसत रूप से अधिक वर्षा का क्षेत्र है। नेतरहाट में सर्वाधिक वर्षा होती है। अधिक वर्षा का कारण ऊँचाई और वनाच्छादित क्षेत्र का होना है। इस क्षेत्र में अधिकतम वर्षा 1200 से 1650 मि. मी. होती है। छोटानागपुर में पलामू का कुछ भाग वर्षा के छाया-क्षेत्र (रेन शैडो) में पड़ता है, जहाँ कम वर्षा होती है। छोटानागपुर समुद्र से भी अपेक्षाकृत निकट है, जिस कारण मेघपूर्ण सागरीय हवाएँ इस क्षेत्र में वर्षा करती हैं।

बिहार में वर्षा की निम्नांकित विशेषताएँ हैं :

(क) बिहार की सम्पूर्ण वर्षा का 80 प्रतिशत भाग ग्रीष्म ऋतु में दक्षिणी-पश्चिमी मौनसून से जून से सितम्बर माह के बीच प्राप्त होता है।

---

1 बिहार दिग्दर्शन, स्टार पब्लिकेशन, पटना (पृ. 148 से 153 एवं 168 तक)

(ख) ग्रीष्मकालीन वर्षा अविश्वसनीय होती है। अतिवृष्टि में बाढ़ और अनावृष्टि से सूखे की स्थिति बनी रहती है।

(ग) वर्षा काल का आगे-पीछे होना इस क्षेत्र के कृषि-कार्य को प्रभावित करता है।

(घ) वर्षा का वितरण भी सामान्य नहीं होता है।

(ङ) वर्षा लगातार न हो कर रुक-रुक कर होती है।

(च) किसी भाग में तेज वर्षा होती है तो कहीं फुहार मात्र होकर रह जाता है।

(छ) पठारी क्षेत्र में राँची और सिंहभूम में वर्षा अधिक दिनों तक होती है तो सारण और गोपालगंज में कम दिनों तक होती है।[2]

वर्षा के असंतुलित एवं अनिश्चित होने से कृषि कार्य पर बुरा असर पड़ता है। इससे कृषि उत्पादन के साथ-साथ पूरी आर्थिक-व्यवस्था चरमरा जाती है। वर्ष 1998 में बेमौसम की जोरों की वर्षा और ओलापात से गेंहूँ, दलहन, तेलहन, आलू आदि की खेती बहुत अधिक प्रभावित हुई है और इन जिन्सों का भाव ऊँचा रहा है। इस तरह के मौसम के कारण आम और लीची की फसल भी मारी गई है। अन्य लोगों की तरह खरवार लोगों की खेती काफी बरबाद हई है।

9. पर्यावरण एवं वन :-

(क) विद्वानों का मत है कि मानव जीव-विज्ञान एवं सम्पूर्ण मानव जीवन उसके चारों तरफ फैले भौतिक और अभौतिक पर्यावरण से प्रभावित एवं नियंत्रित होता है। मानव-जीवन के विकास एवं अवरोध में पर्यावरण की अहम भूमिका होती है। पर्यावरण में व्याप्त दृश्यमान पदार्थों (पेड़-पौधों, पशु-पक्षी, जीव-जन्तु आदि) के साथ-साथ अदृश्य तत्वों (ताप, सूर्य किरणों, हवा आदि) का परिस्थितिकी के निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। मानव जीवन, उसकी सामाजिक-व्यवस्था, संस्कृति आदि के निर्माण और विकास में पर्यावरण के दृश्यमान और अदृश्य - दोनों तत्वों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। विद्वानों का यह मत है कि मानव-जीवन की विविधता भू-भौतिकी तत्वों की उपस्थिति से प्रभावित और नियंत्रित होती है।

भौतिकी पर्यावरण के साथ-साथ विद्वानों द्वारा सूक्ष्म पर्यावरण (माइक्रो इन्विरौंनमेंट) की भी बात कही गयी है। मानव द्वारा घर बनाकर वस्त्रादि धारण

2 बिहार दिग्दर्शन, स्टार पब्लिकेशन, पटना (पृ. 149 से 153)

कर पर्यावरण में परिवर्तन जो भी लाया गया है, मानव वैज्ञानिक उसे ही ''सूक्ष्म पर्यावरण'' की संज्ञा देते हैं। दृश्यमान सूक्ष्म पर्यावरण चक्र को या जगत के निम्नांकित मूल तत्वों को सर्वश्री मिल्लर एवं विज ने प्रस्तुत किया है :-

व्यक्ति
|
जनसंख्या
|
समुदाय
|
जगत (बायोसफियर)

सूक्ष्म एवं दृश्यमान पर्यावरण में मनुष्य या व्यक्ति का प्रमुख स्थान है।[1]'' पर्यावरण के अनुकूल होने पर या प्रतिकूल होने पर ही मानव का शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास निर्भर करता है। खरवार जनजाति कृषि से अधिक जुड़ी हुई है। जहाँ वह पूरी तरह खेती से अपने को आत्म-निर्भर बना दी है- जैसे गंगा की घाटी या दियारा क्षेत्र में - वहाँ उसने अपने पर्यावरण को अपने विकास के अनुकूल बना दिया है। परन्तु पलामू, राँची (गुमला एवं लोहरदगा) आदि वन्य एवं पहाड़ी क्षेत्रों में बसने वाले खरवार अधिक विपरीत पर्यावरण में जीवन-यापन कर रहे है, क्योंकि वनों के कट जाने से वहाँ की स्थिति वनों एवं वनोत्पादित पदार्थों पर निर्भर करने की नहीं रह गई है। इस कारण उनका आर्थिक विकास बाधित हुआ है। वनों के विनाश से वर्षापात में भी कमी आई है और वन्य जीवों - पशु-पक्षी की संख्या भी बहुत तेजी से घटी है।

पर्यावरण प्रदूषण की समस्या भी बिहार में काफी बढ़ी है और कल-कारखानों, ताप विद्युत गृहों. बड़े-बड़े बाँधों के निर्माण आदि से भी पर्यावरण प्रदूषित हुआ है। अत्यधिक वाहनों (मोटर वाहनों) के कारण भी वायु एवं ध्वनि-प्रदूषण काफी बढ़ा है। जल-प्रदूषण के फलस्वरुप इस जनजातीय क्षेत्र से बहने वाली दामोदर सबसे अधिक प्रदूषित नदी है। गंगा नदी भी काफी हद तक प्रदूषित हो चुकी है। इस प्रदूषण से इस क्षेत्र में रहने वाले खरवार भी काफी प्रभावित हुए हैं।

(ख) वन :- बिहार में मुख्य वनों का क्षेत्र छोटानागपुर एवं संथालपरगना रहा है। पूर्व में कैमूर पहाड़ पर भी काफी घने जंगल थे, परन्तु बहुत कम जंगल

1 इन्ट्रोडक्शन टू एन्थ्रोपोलाजी, ए. एस मिल्लर एन्ड चार्ल्स ए. विज, प्रोन्टिस हाले, एंजल वर्ड किलप्स, न्यू जर्शी (पृ. 34-36)

रह गये हैं। पर्यावरण और पारिस्थितिकी के निर्माण और विनाश में वनों की भी अहम भूमिका है। बिहार में वनों का कुल क्षेत्रफल लगभग 29230 वर्ग कि. मी. है, जो बिहार के पूरे भू-भाग का 17 प्रतिशत है। पर्यावरण को संतुलित रखने के लिए कुल भू-भाग का 33 प्रतिशत वनों से आच्छादित रहना आवश्यक है। कुल वन-क्षेत्र में से 5050 वर्ग कि.मी. क्षेत्र आरक्षित वनों का है और शेष सुरक्षित वन का। प्रतिशत के हिसाब से वनों का वितरण निम्न प्रकार है :-

(क) 33 प्रतिशत एवं अधिक----- 14237 वर्ग कि.मी.

(ख) 19 से 33 प्रतिशत तक ----- 7622 वर्ग कि.मी.

(ग) 1 से 19 प्रतिशत तक ----- 4809 वर्ग कि.मी.

खरवार जन-जाति के क्षेत्र में वनों की स्थिति निम्नांकित टेबुल में दर्शायी गयी है :-

टेबुल - 9

क्र.	जिला	भौगोलिक क्षेत्रफल व. कि. मी.	वनों का क्षेत्र व.कि. मी. घना वन-खुला वन-मैनग्रोव			वनों का क्षेत्र का कुल प्रतिशत योग	
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	रोहतास	7213	585	1043	-	1628	22.57
1	**2**	**3**	**4**	**5**	**6**	**7**	**8**
2.	पूर्णियाँ	7943	5	14	-	19	0.24
3.	मुंगेर	7908	523	444		967	12.23
4.	भागलपुर	5589	39	172		211	3.78
5.	संथाल परगना	14206	282	1171		1453	1023
6.	धनबाद	2996	7	88		95	3.17
7.	गिरिडीह	6892	506	934		1440	20.89
8.	हजारीबाग	11165	2456	2349		4885	43.04
9.	पलामू	12749	2686	2147		4833	37.93

10.	राँची	18266	2004	2550	4554	24.93
11.	सिंहभूम	13440	3095	1504	4599	34.22

उपर्युक्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि वनों के आच्छादन का क्षेत्र काफी कम है। वनों के विकास एवं पर्यावरण सुधार के लिए वन विभाग द्वारा सामाजिक वाणिकी कार्यक्रम चलाये गये हैं। इस कार्यक्रम का मूल उद्देश्य है :-

(क) वन-रोपण एवं प्रबन्धन में ग्रामीणों की भागीदारी

(ख) छोटानागपुर एवं संथालपरगना तथा अन्य क्षेत्रों में बसने वाली जनजातियों का आर्थिक-विकास

(ग) वन-रोपण के कार्य को प्रोत्साहित करना।

(घ) क्षय हुए वनों का पुनर्वास।

(ङ) सड़कों के किनारे, बाँधों, आहर, तालाब आदि पर वृक्ष लगाकर मिट्टी के क्षरण को रोकना।

(च) इस परियोजना में लगे लोगों को इसकी नयी तकनीक एवं तरीकों का प्रशिक्षण देना।

पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी के संरक्षण एवं विकास की दिशा में यह एक महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम है, जिससे संबंधित क्षेत्र के अन्य लोगों के अलावा खरवार भी लाभान्वित हुए हैं। प्रतिवेदित वर्ष के बाद भी सामाजिक वाणिकी कार्यक्रम चलता रहा है। इस कार्यक्रम में गैर-सरकारी / स्वयंसेवी संगठनों की सहभागिता काफी सराहनीय रही है। विकास भारती, विशुनपुर, गुमला द्वारा सामाजिक वाणिकी के क्षेत्र में लगभग 75,46,000 पौधे गुमला, लोहरदगा तथा पलामू जिला के विभिन्न क्षेत्रों में लगाये गए, जिससे खरवार तथा अन्य जाति के 35117 व्यक्ति लाभान्वित हुए। इस संस्था द्वारा 1318 लोगों को प्रशिक्षित भी किया गया। विकास भारती की उपलब्धि के फलस्वरूप 1991-92 में उसे "प्रियदर्शिनी इन्दिरा गाँधी वृक्ष मित्र पुरस्कार" से केन्द्र सरकार द्वारा सम्मानित किया गया। इस कार्य में जनजातीय क्षेत्र में रामकृष्ण मिशन, राँची, होली क्रास, हजारीबाग, महिला संत जेवियर विद्यालय, चाईबासा आदि का भी कार्य सराहनीय रहा है।[1]"

1 द स्टेट ऑफ फारेस्ट रिपोर्ट - 1991, भारत सरकार, वन एवं पर्यावरण विभाग, देहरादून एवं वार्षिक प्रशासनिक प्रतिवेदन, वन विभाग, वन अनुसन्धान प्रमंडल, राँची।

इन क्षेत्रों में आबादी के बढ़ने और वनों की अंधाधुंध कटाई, जंगल काट कर खेत बनाने, बड़ी-बड़ी सिंचाई एवं विद्युत-परियोजनाओं के निर्माण, खनिज पदार्थों के उत्खनन आदि से भी वन एवं पर्यावरण के साथ-साथ वन्य-प्राणी भी प्रभावित हुए हैं। वन्य प्राणियों के संरक्षण एवं विकास के लिए सरकार द्वारा कई राष्ट्रीय उद्यान एवं अभयारण्यों की स्थापना बिहार में की गई है :-

टेबल - 10

1.	राष्ट्रीय उद्यान, हजारीबाग	-	185.25 वर्ग कि.मी.
2.	दलमा वन्य जीव अभयारण्य पू. सिंहभूम	-	193.22 वर्ग कि.मी.
3.	बेतला अभयारण्य, पलामू	-	979.27 वर्ग कि.मी.
4.	व्याघ्र परियोजना, पलामू	-	अप्राप्त
5.	कैमूर वन्य जीव अभयारण्य, भभुआ/ सासाराम	-	342.22 वर्ग कि.मी

जिन क्षेत्रों में खरवार जन-जाति के लोग रहते हैं, उन क्षेत्रों के जंगल एवं पहाड़ियों पर विभिन्न प्रकार की जड़ी-बूटी एवं औषधीय गुणों से युक्त पौधे पाये जाते हैं, जिनका सेवन वे स्वयं करते हैं तथा उन्हें बेच कर आर्थिक लाभ भी प्राप्त करते हैं। ऐसे पेड़-पौधों का विवरण निम्न प्रकार है :

टेबुल - 11

क.सं.	जड़ी-बूटी/पौधों का नाम		रोग का नाम, जिसमें प्रयोग होता है
1	बघरेंडी	-	जले अंग पर लगाया जाता है। इसके खाने से दस्त होता है।
2.	बनाबार	-	पेचिस और डायरिया को ठीक करता है। इसका फल रक्त को साफ करने के काम में आता है।
3.	बरियारी	-	पेट दर्द की दवा।
4.	भोंसरी	-	सर्प दंश की दवा।
5.	भुई जामुन	-	गठिया वात एवं सूजन ठीक करता है।

क.सं.	जड़ी-बूटी/पौधों का नाम	रोग का नाम, जिसमें प्रयोग होता है
6.	बीघी मन्दार	– प्रसव के बाद रक्त-शुद्धि के लिए दिया जाता है।
7.	चौली	– हैजा होने पर दिया जाता है।
8.	कठकरेजनी या जेठी मधु	– खांसी में दिया जाता है।
9.	चितावर	– बुखार, पेट दर्द और हाइड्रोसील में दिया जाता है।
10.	छोटी दूधी	– बुखार, चर्म रोग, पेशाब की बीमारी ठीक करता है।
11.	दातरोम सिंगी	– हड्डी को जोड़ने के काम में आता है।
12.	दुधिया	– देह दर्द, बुखार और पेचिस में काम आता है।
13.	घोरबाछ	– बच्चों को बुखार में, देह दर्द तथा सिर दर्द ठीक करने के लिये देते हैं।
14.	गुलेंची	– प्रसूता के दूध बढ़ाने के लिए।
15.	गुर सुकरी या कुकुर बिचा	– डायरिया और पेचिस की दवा।
16.	हड़जोड़वा	– टूटी हड्डी जोड़ने के लिये।
17.	परही	– बुखार, हैजा आदि होने पर काम में आता है। गर्भवती के खाने पर गर्भपात हो जाता है।
18.	सियार पोंछी	– सेप्टिक घाव की दवा।
19.	रकतसार	– सूजन ठीक करता है।
20.	सतावर	– गर्मी लगने से हुए बुखार की दवा।
21.	तिरियो	– पेट दर्द, खूनी पेचिस और पेशाब में खून को रोकने की दवा।
22.	चिरायता	– बुखार एवं रक्त साफ करने की दवा।

क.सं.	जड़ी-बूटी/पौधों का नाम	रोग का नाम, जिसमें प्रयोग होता है
23.	सनई	– पेट साफ करने की दवा।
24.	भेलवा	– इसके फल के रस को सिर (ललाट) में लगाकर सिर दर्द दूर करते हैं। यह बहुत जलनशीली होता है।
25.	सखुआ बीज	– गर्भ निरोधक होता है।
26.	अर्जुन	– इसके छाल के रस का प्रयोग हृदय रोग में होता है।
27.	आँवला, हरे, बहेरा	– इससे त्रिफला बनता है, जो पेट की बीमारी, कब्जियत आदि को दूर करता है।

इस प्रकार खरवार जन-जाति का जीवन पूर्व में काफी समय तक वनों एवं वनोत्पादित चीजों पर निर्भर करता था। कभी उनके पूर्वज इन्हीं वनों में पाये जाने वाले ''खैर'' वृक्ष से कत्था निकाल कर और उसे बेच कर अपना भरण-पोषण करते थे। परन्तु अब वे उस पेशे से अलग हो चुके हैं। वनों के विनाश से उनके क्षेत्र का पर्यावरण काफी प्रभावित हुआ है। इसका विपरीत प्रभाव उनके आर्थिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर पड़ा है।

(ख) भाषा एवं बोली :- भाषा की दृष्टि से ''खरवारी'' या ''खेरवारी'' भाषा आस्ट्रिक भाषा परिवार की एक मुख्य शाखा या भाषा है। इसकी सात उप-भाषाएँ हैं :-

1. मुंडारी 2. संथाली 3. हो 4. खड़िया 5. आसुरी
6. बिरहोरी 7. धारू [1]''

डा. ग्रियर्सन के अनुसार भाषा के क्षेत्र में ''कोलारियन'' शब्द का प्रयोग सभी अड़चनों के बाद भी काफी बड़े क्षेत्र में हुआ। परन्तु कोपेनहेगेन के विद्वान श्री स्क्रेफस्रड और प्रो. थोमसन ने इस क्षेत्र में एक नये शब्द - ''खेरवारियन'' या ''खरवारियन'' (खेरवारी या खरवारी) का प्रयोग किया। संथाली परम्परा के अनुसार ''खेरवार'' या ''खरवार' उस आदिकालीन जन-जाति का संबोधन है, जिससे संथाल, हो, मुन्डा, भूमिज आदि जनजातियाँ निकली हैं। उनके भाषा-सर्वेक्षण में

1 मुंडारी हिंदी शब्द कोष, श्रीमती स्वर्ण लता प्रसाद, बिहार जनजातीय कल्याण शोध संस्थान मोराबादी राँची।

''खेरवारी'' को मुख्य मुंडा भाषा के रूप में रखा गया है, जिसमें थोड़े उच्चारण भेद के साथ संथाली, मुंडारी, हो आदि बोलियाँ (विभाषाएँ) बोली जाती हैं।[1]''

इससे स्पष्ट होता है कि खरवारी मूल भाषा से मुंडारी आदि भाषाओं का विकास हुआ। इनकी बोली को श्री प्रसाद ने ''इन्डोआर्यन भाषा'' के निकट बताया है।[2]''

परन्तु वर्तमान सन्दर्भ में किये गये क्षेत्रीय सर्वेक्षण से पता चला है कि खरवार जनजाति अपनी मूल भाषा एवं बोली को पूरी तरह भूल चुकी है। अब वे जहाँ बस गए हैं, वहीं की बोली अपना लिये हैं। प्रायः सभी खरवार हिन्दी बोलते हैं। श्री डाल्टन ने जे.टी. ब्लन्ट का प्रसंग देते हुए उनकी (खरवार की) प्राचीन बोली (1974) के विषय में लिखा है कि ''वे इन्डो आर्यन या आस्ट्रिक भाषा'' बोलते थे। उन्होंने उनकी बोली से संबंधित कुछ शब्द नमूने के रूप में प्रस्तुत किये गये हैं :-

तत्कालीन खरवारी	–	शब्द हिन्दी अर्थ
गोपुकनी	–	खाना
गोबुरो	–	बैठना
मिन्का	–	नमक
चनगुर	–	बकरी
उगुनदुता	–	आग
केरोना	–	बाघ
मुज्जाई	–	झोपड़ी
चन्दुरमा	–	चन्द्रमा
सूरजन देवता	–	सूर्य

परन्तु उपर्युक्त शब्दों को मुंडारी शब्दों से तुलना करने पर वे बिल्कुल भिन्न प्रतीत होते हैं और अपभ्रंश जैसे लगते हैं।

श्री हडसन और श्री बुचानन ने उनकी बोली को "किरातों'' की बोली के समकक्ष माना है।1[3]''

---

1 लिग्विस्टिक सर्वे ऑफ इन्डिया, भाग-2, जी. ए. ग्रियर्सन (पृ. 8)

2 लैंड एन्ड पिपुल ऑफ ट्राइबल बिहार, नर्मदेश्वर प्रसाद, बिहार जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, राँची, बिहार।

3 डिस्क्रिप्टिव एथनोलॉजी ऑफ बंगाल, 1960, इ.टी. डालटन (पृ. 121-126)

सम्प्रति क्षेत्रानुसार उनकी बोलियों का निम्न प्रकार विभाजन किया जा सकता है :-

टेबुल - 12

क्रमांक	खरवार के आवास क्षेत्र/ जिला	-	बोली या विभाषा
1	2		3
1.	राँची, गुमला, लोहरदगा	-	नागपुरी या सादरी
2.	पलामू, गढ़वा	-	भोजपुरी मिश्रित मगही
3.	कैमूर, रोहतास	-	भोजपुरी एवं बघेली मिश्रित भोजपुरी
4.	मुंगेर, भागलपुर, कटिहार साहेबगंज	-	अंगिका

गिरिडीह, हजारीबाग, सिंहभूम, धनबाद आदि जिलों में वे वहाँ की प्रचलित बोली बोलते हैं। वे अपने क्षेत्र में बसने वाली अन्य जनजातियों - मुंडा, हो, संथाल, उराँव आदि की बोली भी जानते हैं। परन्तु वे उनका प्रयोग अपने घरों में नहीं करते हैं।

—— ❋❋ ——

अध्याय -4

सामाजिक जीवन

खरवार जनजाति का सामाजिक जीवन काफी संगठित और सुदृढ़ होता है। अपने समाज के नियमों और परम्पराओं को पूरी निष्ठा से पालन करना वे अपना धर्म समझते है। इस जन-जाति का समुदाय बिहार के विभिन्न क्षेत्रों - कैमूर से लेकर कटिहार एवं पूर्णियाँ तक फैला हुआ है। वे विभिन्न जनजातियों एवं गैर-जनजातियों के बहुसंख्यक समुदायों के बीच में बस गये हैं। अतः उनके सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों पर उनके पड़ोसियों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। पूर्व के अध्याय में विद्वानों के विचारों को प्रस्तुत करते हुए यह दर्शाया गया है कि खरवार पूर्णतः हिन्दु परम्परा में अपने को ढाल चुके हैं और बहुत-सी जनजातीय सामाजिक परम्पराएँ वे पूरी तरह भूल चुके हैं। वे अपना संबंध सूर्यवंशी राजा हरिश्चन्द्र से जोड़ते हैं। अतः वे अपने को सूर्यवंशी राजपूत भी कहते हैं। मध्य प्रदेश के जशपुर और बिहार में हजारीबाग के रामगढ़ राज परिवार से भी उनका संबंध रहा है। साथ ही, चेरो राजाओं (पलामू के) के साथ वे काफी घुल-मिल कर रहे हैं और अतीत में उनसे प्राप्त जागीर के मालिक भी थे। परन्तु कालक्रमानुसार वे भूमिहीन और विपन्न होते गये। आज के वर्तमान सन्दर्भ में उनकी सामाजिक स्थिति आर्थिक विपन्नता के कारण उतनी विकसित नहीं हो सकी है, जितनी संथाल, मुंडा या हो जाति की। डा. सिंह ने उन्हें सामाजिक दृष्टि से दो वर्गों में बांटा है :- 1. मुन्डा खरवार 2. सूर्यवंशी खरवार जो जनजातीय क्षेत्रों (पलामू, राँची, गुमला आदि) में बसे हैं और जनजातीय परम्परा को मानते हैं, उन्हें मुंडा खरवार में रखा जा सकता है। उनके समाज में गोत्र-परम्परा आदि मुंडा जन-जाति की तरह प्रचलित है, परन्तु जो सूर्यवंशी खरवार हैं, वे पूरी तरह हिन्दु-परम्परा को मानते हैं और उनके सामाजिक रीति-रिवाज हिन्दु समाज की तरह ही हैं।[1]

खरवार समुदाय में एक कहावत प्रचलित है :-

"बढ़ले राजपूत, घटले खरवार"

अथवा जो आर्थिक रूप से सम्पन्न हैं, वे अपने को राजपूत मानते हैं और जो गरीब और विपन्न हैं, वे अपने को खरवार कहते हैं। आर्थिक स्थिति और सामाजिक

---

1 द सिड्यूल्ड ट्राइब - भौलूम-3, पिपुल्स ऑफ इन्डिया, डा. के. एस. सिंह (पृ. 493)

स्तर के आधार पर वे ''बड़का" और "छोटका'' खरवार भी कहे जाते हैं।

खरवार समुदाय के जो लोग भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार आदि स्थानों पर बस गये हैं और जिनमें शिक्षा का प्रचार-प्रसार अधिक है, उनका सामाजिक जीवन अधिक विकसित है। इसके विपरीत जो दुर्गम पहाड़ी या जंगली क्षेत्रों में बस गये हैं, उनके समाज में पिछड़ापन अधिक है। उनका समाज अभी भी जनजातीय लोक-परम्पराओं से अधिक जुड़ा हुआ है।

(क) परिवार की बनावट :-

परिवार मानव-समाज की एक महत्त्वपूर्ण इकाई है और विद्वानों ने परिवार को मानव-समाज का इतिहास कहा है। मानव-सभ्यता के विकास का इतिहास परिवार के गठन एवं विकास से ही प्रारम्भ होता है।

परिवार की बनावट के भेद के संबंध में समाजशास्त्री डा. मुखर्जी ने सात प्रकार के परिवारों के भेद प्रस्तुत किये हैं :- [2]

1. मूल या केन्द्रीय परिवार
2. विवाह संबंधी परिवार
3. संयुक्त और विस्तृत परिवार
4. एक विवाही परिवार
5. बहु विवाही परिवार
6. मातृ सत्तात्मक या मातृ वंशीय परिवार
7. पीतृ सत्तात्मक या पितृ वंशीय परिवार

उपर्युक्त संदर्भ में किये गये सर्वेक्षण से पता चला हैं कि खरवार जन-जाति का परिवार संयुक्त एवं विस्तृत के साथ-साथ पितृ सत्तात्मक है। एक विवाही होते हुए भी कहीं-कहीं बहु विवाही के उदाहरण मिलते हैं। परन्तु ऐसे मामले अपवाद में आते हैं। उनके परिवार की बनावट को जानने के लिए जो सर्वेक्षण किये गए हैं, उनमें से अलग-अलग क्षेत्रों के 5 परिवार की सूची उदाहरण एवं प्रमाण के रूप में प्रस्तुत की जा रही है। इससे यह भी साबित होता है कि उनमें एकल परिवार की परम्परा नहीं है :-

---

2 वही डा. रवीन्द्र नाथ मुखर्जी (पृ. 238 से 242)

टेबुल - 13

1. उत्तरदाता - देवतु खरवार, पिता - स्व. हरमखन खरवार, उम्र-60 वर्ष, शिक्षा-5वां पास, गोत्र - कांसी, पेशा - कृषि एवं बढ़ईगीरि, ग्राम- चिंगरी, पो. - बनारी, थाना / प्रखंड - विशुनपुर, जिला - गुमला, राज्य- बिहार।

क्र. सं.	परिवार के सदस्य का नाम	उत्तरदाता	लिंग	आयु	शिक्षा	पेशा	विवाहित/ अविवाहित
1.	2.	3.	4.	5.	6.	7.	8.
1.	फगुनी देवी	पत्नी दूसरी	स्त्री	45	निरक्षर	गृहिणी	विवाहित
2.	श्रीनिवास खरवार	पुत्र पहले पत्नी का	पु.	35	7वां पास	खेती मजदूरी	विवाहित
3	चीमो देवी	पतोहू	स्त्री	34	निरक्षर	गृहिणी	तदैव
4.	कुंअर खरवार	पौत्र	पु.	17	5वां पास	कृषि	अविवाहित
5.	मदन खरवार	पौत्र	पु.	15	8वां	विद्यार्थी	तदैव
6.	अमर खरवार	पौत्र	पु.	12	5वां	विद्यार्थी	तदैव
7.	रामवृक्ष खरवार	भाई	पु.	50	3रा पास	कृषि	विवाहित
8.	जयकरण खरवार	पुत्र	पु.	25	मैट्रिक फेल	कृषि	विवाहित
9.	कालीचरण खरवार	पुत्र	पु.	22	मैट्रिक फेल	कृषि	विवाहित
10.	जगेसरी देवी	पुत्रवधु	स्त्री	22	निरक्षर	गृहिणी	विवाहित
11.	भरथ खरवार	पौत्र	पु.	8	3रा	विद्यार्थी	अविवाहित
12.	शम्भू खरवार	पौत्र	पु.	5	1ला	विद्यार्थी	अविवाहित
13.	जगतरी कुमारी	पौत्री	स्त्री	7	1ला	विद्यार्थी	अविवाहित
14.	अन्तरू देवी	भवह	स्त्री	35	निरक्षर	गृहिणी	विवाहित
15.	हीराराम खरवार	भतीजा	पु.	32	नन-मैट्रिक	खेती	विवाहित
16.	जयनन्दन खरवार	भतीजा	पु.	25	5वां पास	खेती	अविवाहित
17.	दिनेश खरवार	भतीजा	पु.	16	10वां	विद्यार्थी	अविवाहित

1.	2.	3.	4.	5.	6.	7.	8.
18.	सुगन्ती कुमारी	भतीजी	स्त्री	26	निरक्षर	गृहिणी	अविवाहित
19.	अर्चना कुमारी	भतीजी	स्त्री	6	1ला	छात्रा	अविवाहित
20.	नीरज खरवार	भतीजा	पु.	3	–	–	अविवाहित
21.	मुन्ना	भतीजा	पु.	2	–	–	अविवाहित
22.	कृपाल सिंह खरवार	भाई	पु.	50	निरक्षर	खेती	अविवाहित

2. उत्तरदाता – जुगेश्वर सिंह खरवार, पिता – महाबीर खरवार, उम्र– 30 वर्ष, शिक्षा – निरक्षर, गोत्र – बेहरवार, पेशा– कृषि, मजदूरी, ग्राम – मुक्का, पो. – पांडेपुरा, प्रखंड – लातेहार, जिला – गुमला।

1.	महाबीर सिंह	पिता	पु.	60	निरक्षर	मजदूरी	विवाहित
2.	लुरक सिंह	भाई	पु.	40	निरक्षर	मजदूरी	विवाहित
3.	लाछो देवी	माँ	स्त्री	50	निरक्षर	गृहिणी	विवाहित
4.	राधो देवी	पत्नी	स्त्री	30	निरक्षर	गृहिणी	विवाहित
5.	प्रमिला देवी	भवह	स्त्री	25	निरक्षर	गृहिणी	विवाहित
6.	अनिल सिंह	पुत्र	पु.	14	निरक्षर	मजदूरी	अविवाहित
7.	फुलचन्द सिंह	पुत्र	पु.	12	6ठा	विद्यार्थी	अविवाहित
8.	रीना कुमारी	पुत्री	स्त्री	9	निरक्षर	–	अविवाहित
9.	मीना कुमारी	पुत्री	स्त्री	6	निरक्षर	–	विवाहित

3. उत्तरदाता – अरविन्द कुमार सिंह , पिता – महाबीर दीनानाथ सिंह, उम्र – 36 वर्ष, शिक्षा – बी. एससी., गोत्र – कश्यप, पेशा – सरकारी नौकरी (कार्य पालक अभियन्ता), ग्राम – बड़ी कोदरजन्ना, पो. – बड़ी कोदरजन्ना, प्रखंड / जिला – साहेबगंज।

1.	दीनानाथ सिंह	पिता	पु.	56	निरक्षर	नौकरी	विवाहित
2.	पार्वती देवी	माँ	स्त्री	50	निरक्षर	गृहिणी	विवाहित
3.	अलका सिंह	पत्नी	स्त्री	28	शिक्षित	गृहिणी	विवाहित
4.	चन्द्रशेखर आजाद	भाई	पु.	27	बी.ए.	बेरोजगार	अविवाहित

1.	2.	3.	4.	5.	6.	7.	8.
5.	मयंक नायक	पुत्र	पु.	6	1ला	विद्यार्थी	अविवाहित
6.	तुलिका नायक	पुत्री	स्त्री	3	–	–	अविवाहित

4. उत्तरदाता–धनिक लाल सिन्हा, पिता – स्व. बलराज सिन्हा खरवार, उम्र – 65 वर्ष, शिक्षा – बी.ए., गोत्र – कश्यप, पेशा – सेवा निवृत्त जिला कल्याण पदाधिकारी, ग्राम – बनियाँ, पो. – भवानीपुर, प्रखंड – रंगड़ा (गोपालपुर), जिला – भागलपुर।

1.	शैव्या रानी	पत्नी	स्त्री	55	निरक्षर	गृहिणी	विवाहित
2.	शैलेन्द्र कुमार	पुत्र	पु.	27	स्नातक अभियांत्रिकी	बेरोजगार	अविवाहित
3.	सुधांशु शेख	पुत्र	पु.	23	स्नातक अभियांत्रिकी		अविवाहित
4.	अर्चना कुमारी	पुत्री	स्त्री	18	मैट्रिक छात्र		अविवाहित
5.	राजीव रंजन	पुत्र	पु.	14	मैट्रिक छात्र		अविवाहित

5. उत्तरदाता – कैलाश सिंह, पिता – शिवमुन्सी सिंह, उम्र–19 वर्ष, शिक्षा – आई. ए., गोत्र – काशी, पेशा – कृषि, ग्राम – दीघार, पो. – कोल्हुआ, प्रखंड – अधौरा, जिला – कैमूर (भभुआ)।

1.	शिवमुन्सी सिंह	पिता	पु	60	निरक्षर	कृषि	विवाहित
2.	धनमतिया देवी	माँ	स्त्री	55	निरक्षर	गृहिणी	विवाहित
3.	लालजी सिंह	भाई	पु.	35	साक्षर	कृषि	दो पत्नी
4.	लालधारी सिंह	भाई	पु.	30	निरक्षर	कृषि	विवाहित
5.	लालबहादुर सिंह	भाई	पु.	28	निरक्षर	कृषि	विवाहित
6.	लाल सिंह	भाई	पु.	26	निरक्षर	कृषि	विवाहित
7.	राजकुमार सिंह	भाई	पु.	22	बी.ए.	बेरोजगार	अविवाहित
8.	धनपतिया देवी	भाभी	स्त्री	32	निरक्षर	गृहिणी	विवाहित
9.	बसमतिया देवी	भाभी	स्त्री	30	निरक्षर	गृहिणी	विवाहित

6. उत्तरदाता –श्री अम्बिका प्रसाद, पिता – स्व. ईश्वर प्रसाद, उम्र – 65 वर्ष, शिक्षा – बी. ए. बी. एल., गोत्र – कश्यप, पेशा – कृषि एवं सदस्य बिहार; विधान सभा, ग्राम – बरोहिया, पो. – बुधुचक, प्रखंड – कहलगाँव, जिला– भागलपुर।

1.	2.	3.	4.	5.	6.	7.	8.
1.	गोबीन्द प्र. सिंह	चाचा	पु.	82	मैट्रिक	कृषि	विवाहित
2.	नोनी गोपाल सिंह	चाचा	पु.	73	नन मैट्रिक	कृषि	विवाहित
3.	अनिरुद्ध प्र. सिंह	भाई	पु.	50	एम. ए.	व्याख्याता	अविवाहित
4.	डा. अखिलेश्वर कुमार	चचेरा भाई	पु.	38	एम.बी.बी. एस.	सरकारी सेवा	विवाहित
5.	मनोज कुमार	चचेरा भाई	पु.	34	कृषि स्नातक	सरकारी सेवा	विवाहित
6.	मनोहर कुमार	चचेरा भाई	पु.	30	पशु चि. स्नातक	सरकारी सेवा	अविवाहित
7.	डा. अरविन्द कुमार	पुत्र	पु.	38	एम.बी. बी.एस.	सरकारी सेवा	विवाहित
8.	अमरेन्द्र कुमार	पुत्र	पु.	35	बी. ए.	बेरोजगार	अविवाहित
9.	अमरेश कुमार	पुत्र	पु.	32	एम. ए.	विद्यार्थी	अविवाहित
10.	अनुरंजन कुमार	पुत्र	पु.	29	एम. ए.	विद्यार्थी	अविवाहित
11.	अनिल कुमार	भतीजा	पु.	7	2रा	विद्यार्थी	अविवाहित
12.	अर्चित कुमार	भतीजा	पु.	5	–	–	अविवाहित
13.	अमन	पौत्र	पु.	7	1ला	विद्यार्थी	अविवाहित
14.	विक्टर	पौत्र	पु.	4	–	–	अविवाहित
15.	श्रीमती प्रसाद	पत्नी	स्त्री	65	निरक्षर	गृहिणी	विवाहित
16.	श्रीमती अरविन्द	पतोहु	स्त्री	30	मैट्रिक	गृहिणी	विवाहित
17.	श्रीमती अखिलेश्वर	पतोहु	स्त्री	35	मैट्रिक	गृहिणी	विवाहित
18.	श्रीमती मनोज	पतोहु	स्त्री	30	मैट्रिक	गृहिणी	विवाहित

टेबुल सं. 16 में दर्शाये गए 6 खरवार परिवार की बनावट से यह स्पष्ट है कि उनका परिवार एक संयुक्त परिवार की श्रेणी में आता है। सर्वेक्षित 6 परिवारों में निम्न प्रकार की विशिष्टता पाई गई, जो अन्य परिवारों के साथ भी सामान्यत: लागू होता है।

1. जनजातीय क्षेत्र के खरवार अपने उपनाम में ''खरवार' शब्द का प्रयोग करते हैं, जबकि कैमूर, भागलपुर, साहेबगंज आदि जिलों में रहने वाले "खरवार' इस जातिबोधक उपनाम या टाइटल को नाम के अन्त में नहीं जोड़ते।

2. विभिन्न क्षेत्रों में वे नाम के अन्त में अलग-अलग उपनाम या टाइटल जोड़ते हैं। जैसे-खरवार, गंझू, सिंह, मंडल, प्रसाद, सिन्हा, नायक आदि।

3. सभी परिवारों में महिलाओं से पुरुषों की संख्या अधिक है। यह स्थिति जनगणना प्रतिवेदन में भी पाई गई है, जिसका उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है।

4. अधिकांश परिवारों में शिक्षा का अभाव हैं और स्त्री शिक्षा और अधिक कम है।

5. भागलपुर, कटिहार, साहेबगंज, पूर्णियाँ आदि क्षेत्रों के सभी खरवार अपने को ''कश्यप गोत्र'' का बताते हैं, जबकि जनजातीय क्षेत्र के खरवारों के विभिन्न गोत्र हैं, जो जनजातीय परम्परा के अनुरूप हैं।

6. जनजातीय क्षेत्र के नामकरण में जनजातीय नामों के उदाहरण मिलते हैं, यथा फगुनी, जगेसरी, जगतरी, लाछो, धनपतिया, बसमतिया, लुरक सिंह, हीरामन खरवार आदि। दूसरी ओर जो लोग गंगा की घाटी में भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार आदि में बस गए हैं, और शिक्षा के क्षेत्र कुछ आगे बढ़ गए हैं, उनके यहाँ नामकरण पर आधुनिकता और शहरीकरण का प्रभाव स्पष्ट झलकता है। यथा - चन्द्रशेखर, मंयक, तुलिका, सुधांशु, अर्चना, अनुरंजन, अर्चित, विक्रम आदि। इस तरह से परिवारिक नामकरण में ''खरवार' शब्द का प्रयोग समाप्त प्राय है।

(ख) परिवार में काम का बँटवारा :

परिवार में कार्य का बँटवारा आयु के आधार पर सामान्यत: होता है। जो बहुएं पर्दा करती हैं, वे घर के भीतर का सारा काम - खाना बनाना, बर्तन धोना, घर की साफ-सफाई, बच्चों की देख-रेख आदि का कार्य करती हैं। प्रत्येक घर में प्राय: ओखल-मूसल या ढेकी रहता है। परिवार की स्त्रियाँ धान कूटने और चावल छाँटने

का काम करती हैं। जाँता या चक्की से वे गेहूँ, चावल, मकई आदि से आटा बनाती हैं। खरवार महिलाएँ खेती के कार्य में भी पुरुषों की मदद करती हैं और रोपनी, कटनी, निकौनी, ओसवनी आदि कार्य स्वयं करती हैं। घर की लड़कियाँ और वयस्क महिलाएँ कुआँ, डांड़ी, नदी आदि से पानी लाती हैं और पशुओं की भी देख-रेख करती हैं। जंगल से जलावन आदि वे लाती हैं। किशोर वय के लड़के-लड़कियाँ अपने मवेशियों को चराने के लिए ले जाते हैं। महुआ वृक्ष में फूल लगने पर परिवार की महिलाएँ, लड़के, लड़कियाँ सभी अहले सुबह महुआ का फूल चुनने जाते हैं। परिवार के वयस्क सदस्य मजदूरी करने गाँव में या बाहर जाते हैं। गरीब घर की महिलाएँ भी पुरुषों के साथ जिले के बाहर अथवा राज्य के बाहर काम करने (मजदूरी) जाती हैं।

परिवार में महिलाओं का सम्मानपूर्वक स्थान होता है। वृद्ध महिलाओं को परिवार में आदर की दृष्टि से देखा जाता हैं और बहुएँ उनकी सेवा करती हैं। वृद्ध महिला या पुरुष से कोई भारी काम नहीं लिया जाता है।

(ग) नातेदारी और नातेदारी के शब्द :-

खरवार में नातेदारी और रिश्तेदारी के दो मुख्य आधार हैं - 1. मूल परिवार के नातेदार 2. वैवाहिक संबंधों से बने रिश्तेदार। उनके रिश्तेदारी के सम्बोधन के शब्द क्षेत्रानुसार अलग-अलग हैं, जो उस क्षेत्र की स्थानीय भाषा या बोली से प्रभावित लगते हैं।

टेबुल - 14

रिश्तेदारी / नातेदारी के सम्बोधन

क्र. सं.	रिश्तेदारी के हिन्दी शब्द	खरवार जन-जाति द्वारा व्यवहृत रिश्तेदारी के शब्द			
		राँची, गुमला आदि	पलामू	कैमूर, रोहतास	भागलपुर, कटिहार आदि
1	2	3	4	5	6
1.	पिता	बाबा, बाप	बाप	बाप, बाबू	बाप
2.	माता	माय, आयो	माई	माई, महतारी	माय
3.	दादा	आजा	आजा	दादा	दादा
4.	दादी	आजी	आजी	दादी	दादी
5.	नाना	आजा	आजा, नाना	नाना	नाना

1	2	3	4	5	6
6.	नानी	आजी	आजी, नानी	नानी	नानी
7.	पति	आपन आदमी	दुल्हा, मरद	मरद, दुल्हा	साई
8.	पत्नी	मोर जनी	दुल्हीन	मेहरारू	बहु
9.	सास	सास	सास, माई	सास	सास
10.	श्वसुर	ससुर	ससुर	ससुर	ससुर
11.	चाचा	चाचा, छोटका बाप	काका	चाचा, काका, पितिया	पितिया
12.	चाची	चाची, छोटकी माय	काकी	चाची, काकी पितिया	चाचा, पितिया
13.	फुआ	फुफु	फूआ	फूआ	पीसी
14.	फुफा	फूफा	फूफा	फूफा	पीसा
15.	मामा	मामा	मामा	मामा	मामा
16.	मामी	मामी	मामी	मामी	मामी
17.	साला	सारा	सारा	साला, सार	साला
18.	साली	सारी	सारी	साली	साली
19.	सरहज	सरहज	सरहज	सरहज	सरहज
20.	बड़ा भाई	दादा	दादा, भाई	भईया, भाई	भैया
21.	भाभी	भउजी	भौजाई	भउजी	भउजी
22.	भवह (छोटे भाई की पत्नी)	भाहो	भाहो	भवह	भहो
23.	भसुर	भैंसुर	भसुर	भसुर	भैंसुर, बड़ो मड़र
24.	बहन	बहिन	बहिनी	बहिन, बहिनियाँ	बहन
25.	मौसा	मौसी	मोसा	मउसा	मौसा
26.	मौसी	मोसी	मौसी	मउसी	मौसी
27.	गोतनी	गोतनी	गोतनी	गोतनी	गोतनी

28.	सौत	सैतीन	सैतीन	सौतीन	सौतीन
29.	बहनोई	भट्ट	भाटू	पाहुन, जीजा, बहनोई	बहनोई
30.	पौत्र	नाती	नाती	पोता	पोता
31.	पौत्री	नतिनी	नतिनी	पोती	पोती
32.	साला का साला	यार	गोई	साला	बजड़ साला
33.	साला का बहनोई (साढ़ू)	भाटू, दादा	गोई	साढ़ू	भाई जी
34.	सहेली/सखी	सहिया गोय	साथी	सखी	सखी
35.	मेहमान	गोतिया	पहुना	पहुना	पहुना

उपर्युक्त विवरणी से यह स्पष्ट होता है कि खरवार जन-जाति द्वारा रिश्तेदारी/नातेदारी द्वारा कोई भी शब्द जनजातीय मूल (मुन्डारी, संथाली आदि) का नहीं प्रतीत होता हैं इन पर स्थानीय बोलियों का पूरा प्रभाव है।

(घ) संबधों में हँसी-मजाक एवं निषेध :

अन्य जनजातियों की तरह खरवार में भी कुछ संबंधों में हँसी-मजाक खूब चलता है। परन्तु कुछ संबंध ऐसे हैं, जहाँ हँसी-मजाक निषिद्ध है। निम्नांकित टेबल। में इसे प्रस्तुत किया गया है :

टेबुल - 15

1. हंसी-मजाक वाले संबंध :

जीजा एवं साली में।

देवर और भाभी में।

सरहज एवं उसकी बहनों के साथ।

साला एवं बहनोई में।

ननद एवं नन्दोसी के साथ।

दादा और पोती में।

नाना और नतिनी में।

2. हंसी-मजाक के लिए वर्जित / निषिद्ध संबंध :

भवह एवं भसुर में
भाई-बहन में (मौसेरा, चचेरा, फुफेरा - सभी में।
चाची, मामी, फुआ तथा चाचा, मामा, फुफा के साथ।
माता-पिता के साथ।
सास-ससुर के साथ।

(ङ) अन्य जनजातियों / जातियों के साथ संबंध :

अपने मूल स्थान छोड़ने के बाद खरवार जन-जाति का समुदाय बिहार के कैमूर पहाड़ी, पलामू, गुमला, भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार आदि जिलों में जाकर बस गया। कैमूर क्षेत्र में वे अपने को सूर्यवंशी राजपूत मानते रहे हैं। अत: वहाँ के स्थानीय राजपूत, अहिर आदि जाति के लोगों से इनका सम्पर्क रहा, जिनकी आबादी उस क्षेत्र में अधिक है। हिन्दु-विधि से शादी-विवाह करने और अन्य धार्मिक अनुष्ठान सम्पन्न कराने के लिए उन्हें ब्राह्मण जाति का सहयोग लेना पड़ा। इन अवसरों पर नाई की भी आवश्यकता होती है। अत: इस जाति के लोगों के सम्पर्क में भी वे आये। अब उस क्षेत्र के खरवारों का संबंध वहाँ के ब्राह्मणों एवं नाई के साथ यजमान और पुरोहित का हो गया है। हिन्दुओं के पर्व-त्योहार - होली, दशहरा, छठ, दीपावली आदि मनाने के कारण वे वहाँ के हिन्दु समुदाय के अभिन्न अंग बन गये हैं।

जो खरवार पलामू में आकर बसे, उनका सम्पर्क वहाँ बाद में आकर बसे चेरो जन-जाति से हुआ। चेरो राजाओं में खरवार लोगों को अपनी सेना में रखा और उनके सहयोग से पलामू के ''रक्सेल'' राजाओं को परास्त कर पलामू जिले को अपने कब्जे में ले लिया। खरवार उन्हें अपना भाई और निकट संबंधी मानते हैं। चेरो जब पलामू के शासक बने तो उनसे खरवारों को कई परगनाओं में जागीरदारी भी मिली। उस समय खरवार काफी सम्पन्न थे। परन्तु जमीन्दारी समाप्त होने के बाद धीरे-धीरे वे काफी विपन्न हो गये। अब वहाँ उनकी आर्थिक-स्थिति अच्छी नहीं है। उस क्षेत्र में रहने वाले परहिया, बिरजिया, भोगता, ग्वाला, बनियाँ. ब्राह्मण, नाई आदि सभी से सौहार्दपूर्ण संबंध रखते हैं। वहाँ के खरवार भी अपने को सूर्यवंशी मानते हैं और जनजातीय रीति-रिवाज के साथ-साथ हिन्दु रीति-रिवाज को भी शादी-विवाह, पर्व-त्योहार आदि अवसरों पर मानते हैं।

भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार, पूणियाँ आदि जगहों में भी वे राजपूत, भूमिहार, बनियाँ, ब्राह्मण आदि के बीच बसे हुए हैं। अत: उनके साथ भी उनका सौहार्दपूर्ण

सामाजिक संबंध है। वे हर अवसरों पर उनका सहयोग लेते और देते हैं। वहाँ के संथाल और उराँव तथा पहाड़िया जन-जाति के साथ भी वे मिल-जुल कर रहते हैं।

गुमला, लोहरदगा, राँची आदि जिलों में उनके क्षेत्र में असुर, बिरहोर, बिरजिया, उराँव, खडिया आदि जनजातियाँ बसती हैं। अत: उनका एक वर्ग पूरी तरह जनजातीय परम्परा से जुड़ा हुआ है और उनका सामाजिक एवं धार्मिक जीवन जनजातीय लोकविश्वासों पर आधारित है। वे भी जहेरथान और सरना में पूजा करते हैं, उस क्षेत्र के जनजातीय मूल के देवी-देवताओं और प्रेतों की पूजा करते हैं और उनके लिए मुर्गा, बकरा आदि की बलि चढ़ाते हैं। वे धार्मिक अनुष्ठान बैगा और पाहन से सम्पन्न कराते हैं। शादी आदि के अवसरों पर वे ब्राह्मण और नाई की मदद लेते हैं।

(च) उत्तराधिकारी संबंधी नियम :

खरवार जन-जाति में परिवार का मुखिया ही परिवार की चल एवं अचल सम्पत्ति का मालिक होता है। विभिन्न स्रोतों से (खेती मजदूरी, नौकरी, व्यापार आदि) जो आय होती है, उसका लेखा-जोखा घर का मुखिया ही रखता है। उसके जीवन-काल में अचल सम्पत्ति - जमीन का बंटवारा वयस्क पुत्रों में या छोटे भाइयों में नहीं होता है। पिता के मरने पर उसके सभी पुत्र चल एवं अचल सम्पत्ति के समान रूप से बराबर-बराबर के अधिकारी होते हैं। सामान्यत: खेत आदि का बंटवारा बहुत कम होता है। किसी तरह विवाद होने पर जातीय पंचायत - ''चट्टा या चटाई'' के सहयोग से सुलझा लिया जाता है। काफी वर्ष पूर्व किसी-किसी क्षेत्र में उत्तराधिकार के नियमानुसार बड़े लड़के को सम्पत्ति का कुछ अधिक अंश हिस्सा के रूप में मिलता था। परन्तु अब यह परम्परा समाप्त हो गई है।

परिवार में लड़कियों (विवाहित एवं अविवाहित) को परिवार की चल-अचल सम्पत्ति पर कोई अधिकार नहीं बनता है। जब तक वे अविवाहित रहती हैं, तब तक परिवार की सम्पत्ति का भोग करती हैं। विवाह के बाद ससुराल चले जाने पर मायके की सम्पत्ति पर उनका कोई अधिकार नहीं रह जाता। विधवा हो जाने पर पुनर्विवाह होने तक मायके में उनका भरण-पोषण भर किया जाता है। "घर दामाद या घरजमाई'' का भी प्रचलन खरवार जन-जाति में बहुत कम है। वे दामाद को भी परिवार की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी नहीं मानते हैं। पिता के मरने के बाद भी कभी सभी भाई अपने सबसे बड़े भाई या चाचा के नियंत्रण में संयुक्त रूप से रहते हैं और तब सम्पत्ति के बंटवारा का प्रश्न नहीं उठता है। पिता के मरने के बाद विधवा माँ किसी भी बेटे के साथ रह सकती है और उसी सम्पत्ति से उसका भी भरण-पोषण होता है। सम्पत्ति के बँटवारे को लेकर मुकदमेबाजी के दृष्टान्त बहुत कम मिलते हैं।

(छ) महिलाओं की भूमिका :

खरवार जनजाति में महिलाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है। खरवार उन्हें गृहस्थी की मालकिन मानते हैं और उन्हें यथेष्ट आदर एवं महत्त्व देते हैं। घर की सबसे वरीय या बूढ़ी स्त्री (दादी या माँ) अपने अधीनस्थ सभी महिला सदस्यों - बहु, बेटी, पोती, ननद आदि को नियंत्रित करती है और उनके कार्य एवं कृत्य निर्धारित करती है। घर में धान कूटने, चावल छाँटने, गेहूँ आदि पीसने के भारी काम से लेकर रसोई बनाने आदि का काम महिलाएँ ही सम्पन्न करती हैं। खेती के समय रोपनी, निकौनी, कटनी आदि का काम अधिकांशत: परिवार की महिलाएं ही करती हैं। बाजार-हाट जाकर खरीद-बिक्री का भी काम वे कर लेती हैं। भूमिहीन गरीब परिवार की अनेक महिलाएँ अपने पतियों के साथ बाहर जाकर मजदूरी भी करती हैं।

शादी-विवाह, पर्व-त्योहार आदि अवसरों पर उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। घर में आये मेहमानों का स्वागत-सत्कार वे ही करती हैं। गर्भवती और प्रसूता की वे विशेष ध्यान देकर देख-रेख करती हैं। परिवार की कोई स्त्री यदि काम करने में कम रुचि रखती है (कोढ़नी) तो भी पुरुष उसे तिरस्कृत नहीं करते। कहीं-कहीं परिवार में गोतनी, सास-पतोह, ननद-भौजाई में कुछ झगड़ा - तकरार सुनने को मिलता है। परन्तु उसके बहुत कम उदाहरण मिलते हैं। चूँकि उनके समाज में बधु-मूल्य या गोनोह की प्रथा नहीं है और वर पक्ष वाले भी तिलक-दहेज नहीं लेते; इस कारण ''बहु प्रताड़ना'' के उदाहरण नहीं मिलते हैं। खरवार महिलाओं में शिक्षा का घोर अभाव है। इस कारण उनका विकास बाधित होता है और आर्थिक रूप से अपने पतियों पर पूर्ण रूप से निर्भर करती हैं। केवल मजदूरी करके ही वे अपने तथा अपने परिवार को कुछ आर्थिक सहायता दे पाती है। उनकी अशिक्षा का मुख्य कारण उनमें वर्तमान पुरानी परम्परा और पर्दा प्रथा है। वे जवान लड़कियों को कहीं दूर पढ़ने के लिए भेजना नहीं चाहते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बालिका उच्च विद्यालय एवं महाविद्यालय की कमी भी उनकी शिक्षा में बाधक है।

(ज) वंश एवं गोत्र :

''वंश'' के विषय को परिभाषित करते हुए प्रसिद्ध विद्वान होबेल लिखते हैं- ''वंश समूह साधारणत: पाँच या छ: पीढ़ियों से अधिक पहले का एक परिचित संस्थापक या सामान्य पूर्वज के उत्तराधिकारियों का एक विस्तृत और एक पक्षीय रक्त संबंधित समूह है।[1]*

---

1 मैन इन द प्रिमिटिव वर्ल्ड, होबेल, न्यू यार्क, 1958 (पृ. 343)

डा. मुखर्जी वंश के संबंध में होबेल के सिद्धान्तों को मानते हुए लिखते हैं वंश समूह एक सामान्य ऐतिहासिक और वास्तविक पूर्वज से संबंधित समस्त रक्त संबंधी वंशजों का एक समूह होता है।'' 2[2*]

इस प्रकार वंश का संबंध उन पूर्वजों से होता है, जिनसे उनके वंशज या रक्त से संबंधित उत्तराधिकारियों की पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती रहती है। वंश परिवार का मूल का आधार होता है और वह एक परिवार की विशिष्टता बनाये रखता है।

वंश समूह दो प्रकार के होते हैं, जैसा कि विद्वानों का मत है।

1. मातृवंशीय वंश समूह -

जो वंश समूह माता से या मातृ पक्ष से चलता है और जिसके वंशज माँ के रक्त समूह से जाने जाते हैं, उसे मातृवंशीय वंश समूह कहा जाता है।

2. पितृ वंशीय समूह -

जो वंश समूह पिता के रक्त संबंधी पूर्वजों के आधार पर चलता है, उसे पितृ वंशीय वंश समूह कहा जाता है।

उपर्युक्त तथ्यों के आलोक में खरवार जन-जाति पितृ वंश समूह की है क्योंकि उनका वंश समूह पिता एवं उनके पूर्वजों के आधार पर ही जाना जाता है। वंश का महत्त्व विवाह के अवसर पर विशेष रूप से देखा जाता है और इसके आलोक में अपने निकट के रक्त संबंधियों में शादी नहीं होती है। खरवार जनजातियों में अपने वंश के प्रति या उसके संबंध में कई तरह की अवधारणाएँ हैं। रोहतास पहाड़ी (कैमूर पहाड़) पर बसने वाले अथवा वहाँ से दूसरी जगहों पर जाकर बस गये अपने को राजा हरिश्चन्द्र के पुत्र रोहिताश्व का पूर्वज मानकर अपने को ''सूर्यवंश'' का मानते हैं। बिहार में रामगढ़ और जशपुर (मध्यप्रदेश) के राजपरिवार के पूर्वज खरवार जन-जाति के थे, जैसा कि विद्वानों का मत है। परन्तु कालक्रमानुसार दोनों परिवार के लोगों ने विभिन्न राजपूत या क्षत्रिय राज परिवारों के साथ वैवाहिक संबंध स्थापित कर राजपूत या क्षत्रियवंशी हो गये।

गोत्र एवं गोत्र-चिन्ह :-

''गोत्र'' के संबंध में सर्वश्री मजुमदार एवं मदान का मत है - ''एक गोत्र अधिकांश रूप से कुछ वंशों का योग होता है और वे अपनी उत्पत्ति एक कल्पित

---

2 सामाजिक मानव शास्त्र की रूप रेखा, डा. रवीन्द्रनाथ मुखर्जी, (पृ. 243/249)

पूर्वज से मानते हैं, जो कि मानव, मानव के समान, पशु, पक्षी, पेड़-पौधे या निर्जीव वस्तु तक हो सकते हैं।'' [1*]

गोत्र भी दो प्रकार होते हैं :-1. पितृ वंशीय 2. मातृ वंशीय एक गोत्र के कई उप-गोत्र भी होते हैं। गोत्र का सिद्धान्त केवल उत्पत्तिमूलक ही नहीं होता है। वरन जिनसे एक वंश विशेष का कल्याण हुआ है, उस वस्तु के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए भी गोत्र का नामकरण कर दिया जाता है।

डा. मुखर्जी द्वारा गोत्र के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए उसके कार्यों का उल्लेख किया गया है :-

1. यह पारस्परिक सुरक्षा और सहायता प्रदान करता है।
2. गोत्र से संबंधित नियमों के आधार पर जन-जाति समुदाय नियंत्रित होता है।
3. इसके आधार पर अपने सदस्यों से बहिर्विवाह संबंधी नियमों का पालन करवाता है।
4. गोत्र सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखने, धर्म से संबंधित कृत्यों को करने तथा गोत्र सम्पत्ति की देख-रेख करने का कार्य करता है।[2]

गोत्र के साथ ही उससे संबंधित "टोटमवाद'' का जनजातीय जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है।

टोटमवाद (टोटेमिज्म):

अनेक जनजातीय संस्कृतियों में धर्म तथा सामाजिक संगठन के तत्त्व और विशेषताएँ अनोखे ढंग से मिली-जुली रहती हैं और वह इस अर्थ में कि ये जनजातियाँ किसी भौतिक पदार्थ, पशु या पेड़-पौधों से अपना एक रहस्यमय संबंध जोड़कर अलौकिक विश्वासों को पनपाती हैं एवं अपने सामाजिक जीवन को उसके आधार पर नियमित करती हैं। मानवशास्त्री जनजातियों को ''टोटमवादी'' (टोटेमिक) कहते हैं और जिससे ये लोग एक रहस्यमय संबंध होने का दावा करते हैं, उसे टोटेम कहते हैं। ''टोटेम'' शब्द का बोध उत्तरी अमेरिका के इन्डियनों से सर्वप्रथम श्री जे. लॉग ने सन् 1791 में किया था और जे. एफ. मैकलिनन ने एक आदिम

---

1 एन इन्ट्रोडक्सन टू सोशल एन्थ्रोपोलॉजी, डी. एन. मजुमदार एवं मदान, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बॉम्बे, 1957 (पृ. 113/114)

2 एशिया पब्लिशिंग हाउस, डा. रवीन्द्रनाथ मुखर्जी (243 से 249)

सामाजिक संस्था के रूप में टोटमवाद के महत्त्व को सबसे पहले स्वीकारा था।[3*]

टोटम जनजातियों के सामाजिक संगठन का एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण आधार है। इसके आधार पर गोत्र-जीवन संगठित तथा विवाह आदि नियंत्रित होते हैं। टोटमवाद के संबंध में कई विद्वानों ने अपने-अपने विचार व्यक्त किये हैं :-

श्री हाबल -

टोटम एक पदार्थ, प्राय: एक पशु अथवा एक पौधा है जिसके प्रति एक सामाजिक समूह के सदस्य विशेष श्रद्धाभाव रखते हैं और जो यह अनुभव करते हैं कि उनके टोटम के बीच भावनात्मक समानता का एक विशिष्ट बन्धन है। [4*]

श्री फ्रायड -

''वास्तव में टोटम एक पशु है (चाहे भक्ष्य हो तथा हानि रहित, भयंकर हो तथा डरावना) और यदा-कदा एक पौधा अथवा एक प्राकृतिक पदार्थ (जैसा वर्षा का जल) भी हो सकता है, जिसका कि उस गोत्र से घनिष्ठ संबंध हो।[5*]

गोल्डेन विजर -

''गोत्रों में विभाजित अनेक आदिम जनजातियों में गोत्र नाम एक पशु, पौधा अथवा प्राकृतिक पदार्थ से लिया गया है और गोत्र के सदस्य इन पशुओं अथवा वस्तुओं के प्रति विशिष्ट मनोभाव रखते हैं। इसी को मानवशास्त्री टोटम कहते हैं।''

श्री गोल्डेन विजर के अनुसार-

''गोत्रों, उनके टोटम तथा उससे संबंधित विश्वासों प्रथाओं व संस्कारों के योग से बननेवाली संस्था को टोटम कहते हैं।[6]''

टोटमवाद की विशेषताएँ :-

डा. मुखर्जी ने निम्नांकित विशेषताओं को प्रस्तुत किया है :

1. टोटम के साथ एक गोत्र के लोग अपना गूढ, अलौकिक और पवित्र संबंध मानते हैं।

---

3 रेसेज एन्ड कल्चर्स ऑफ इन्डिया, डी. एन. मजुमदार, एशिया पब्लिशिंग हाउस बॉम्बे, 1958 (पृ. 333)

4 मैन इन द प्रिमिटिव वर्ल्ड, ई. ए. हाबेल, पृ. 512

5 टोटेम एन्ड टैबू, सिग्मन्ड फ्रायड

6 इन्साइक्लोपिडिया ऑफ द सोशल साईन्सेज, ए. गोल्डेन विजर, वॉलूम - 17, 1957, पृ. 657

2. टोटम उस शक्ति का अधिकारी है जो उस समूह के सदस्यों की रक्षा करती है, चेतावनी देती है तथा उनके भविष्य के कार्यों को निर्देशित करने के लिए भविष्यवाणी करती है।

3. टोटम को मारना, खाना या चोट पहुँचाना निषिद्ध है।

4. टोटम से संबंधित उस गोत्र विशेष के सदस्य उसी से संबंधित हैं और परस्पर भाई-भाई या भाई-बहन हैं।

5. एक टोटम के सदस्य आपस में विवाह आदि नहीं करते हैं। प्रत्येक टोटम समूह बहिर्विवाह (एक्जोगेमस) होता है।

6. हानिकारक या खतरनाक (बाघ, सांप आदि) टोटम को भी नुकसान नहीं पहुँचाया जाता है।

7. कभी-कभी टोटम से संबंधित पशु की बलि देने की छूट होती है, जो अपवाद माना जाता है।[1*]

डा. मुखर्जी ने टोटम के निम्नांकित भेद बताये हैं :

1. **गोत्र टोटम** :- इसका संबंध पूरे गोत्र से होता है और वंश परम्परागत रूप से चलता रहता है।

2. **पितृवंशीय टोटम** :- यह टोटम पिता के वंश के आधार पर होता है और प्रत्येक वंश का एक अलग टोटम होता है।

3. **मातृवंशीय टोटम** :- माता के वंश से संबंधित टोटम मातृवंशीय टोटम कहलाता है।

4. **व्यक्तिगत टोटम** :- यह किसी व्यक्ति विशेष से संबंध रखता है, किसी गोत्र से नहीं।

5. **लिंग टोटम** :- कुछ समुदायों में स्त्री और पुरुष दोनों का ही टोटम अलग-अलग होता है।

6. **विभक्त टोटम** :- कई समाजों में किसी पशु या पक्षी के पूरे शरीर को टोटम न मान कर उसके किसी अंग को (दिल, लिवर आदि) टोटम मान लिया जाता है। मूल गोत्र के अनेक भागों में विभक्त होने पर ऐसा होता है।

---

1 सामाजिक मानव शस्त्र की रूप-रेखा, डा. रवीन्द्रनाथ मुखर्जी, विवेक प्रकाशन, 7-यू.ए. जवाहर नगर, दिल्ली, 1995 (पृ. 65 से 88)

7. **गर्भधारण कराने वाला टोटम :**- आस्ट्रेलिया की जनजातियों में यह लोक विश्वास है कि टोटम की कृपा से ही स्त्रियाँ गर्भधारण करती हैं।

8. **बहुसंख्यक टोटम :**- कभी-कभी एक ही गोत्र समूह के दो या अधिक टोटम होते हैं।**1**[2*]

खरवार जन-जाति के गोत्र एवं टोटम के विषय में एच. एच. रिजले ने 1891 में उनके 75 गोत्र बताये थे। परन्तु कालक्रमानुसार खरवार विभिन्न स्थानों पर जाकर बसते गये और अपने मूल गोत्र को भूलते गये। वर्तमान में रोहतास (कैमूर), पलामू, गुमला, लोहरदगा, हजारीबाग आदि क्षेत्र के खरवार अभी भी अपने गोत्र और गोत्र-प्रतीक मानते हैं और सगोत्री विवाह नहीं करते। परन्तु भागलपुर, कटिहार, पूर्णियाँ आदि क्षेत्रों के खरवार अपना गोत्र "कश्यप" बताते हैं और कहीं-कहीं अपवाद स्वरूप सगोत्री शादी-विवाह के उदाहरण मिले हैं। इस तरह उनमें अन्तर्विवाह और बहिर्विवाह दोनों परम्पराएँ प्रचलित हैं। पलामू आदि जनजातीय क्षेत्रों के खरवार अभी भी सगोत्री विवाह नहीं करते और उनमें बहिर्विवाह की परम्परा रूढ़ है। भागलपुर आदि गंगा के दियारा क्षेत्र के लोगों से पूछताछ करने पर पता चला है कि शादी-विवाह के अवसर पर अपना गोत्र नहीं बताने के कारण उन्हें "कश्यप गोत्र" का मान लिया गया। यह भी संभव है कि वे मूल "कच्छप गोत्र" से कश्यप गोत्र के हो गए। क्षेत्रीय सर्वेक्षण में उनमें निम्नांकित गोत्र एवं गोत्र- प्रतीक का पता चला, जिसे वे अभी भी मानते हैं।

टेबुल - 16

क्र.सं.	**गोत्र का नाम**	**प्रतीक वस्तु / चिह्न (टोटम)**
1	**2**	**3**
1.	कांसी	एक घास
2.	समदुआर	असामान्य दरवाजा का घर
3.	चर दयाल	चार कोठा का घर
4.	कौड़ियार	कौड़ी
5.	नीलकंठ	एक पक्षी
6.	चुन्दीयार	चावल की खुद्दी

2 सामाजिक मानव शस्त्र की रूप-रेखा, डा. रवीन्द्रनाथ मुखर्जी, विवेक प्रकाशन, 7-यू.ए. जवाहर नगर, दिल्ली , 1995 (पृ. 65 से 68)

1	2	3
7.	हंसदगिया	हंसिया
8.	बहेरवार	बहेरा का वृक्ष / फल
9.	बेसरवार	एक पक्षी
10.	देवलबन्ध	एक वृक्ष
11.	नुन्हुआर	नमक
12.	टोपोवार	एक चिड़ियां
13.	बघवार	बाघ
14.	हंसबेगिया	एक चिड़ियां (हँस)
15.	लोहवार	लोहा
16.	बरेवा	एक चिड़ियां / पक्षी
17.	कछुआ	कछुआ
18.	रजवार	रस्सी
19.	इन्दवार	एक मछली
20.	केरकेटा	एक चिड़ियां
21.	धान	धान
22.	डिला	हल
23.	ढिंकी	ढेंकी
24.	चान्दन	चन्दन का पेड
25.	परधिया	कृषि यंत्र (जुआठ)
26.	बेसरा	एक पक्षी
27.	मोहकल	एक पक्षी
28.	कुंस	घास
29.	चुनियार	अनाज का छोटा कण
30.	करमुआर	करम का पेड़

1	2	3
31.	साहिल	साहिल जानवर
32.	टिर्की	एक पक्षी
33.	भगुआ	बाघ
34.	सोनवनी	एक पक्षी
35.	बेन्द्रा	बन्दर
36.	कसुनुआ	अज्ञात
37.	रावन	राक्षस गोत्र का बोधक
38.	नोन	नमक
39.	सोय	एक मछली
40.	कश्यप (कच्छप)	कश्यप ऋषि (कछुआ)

खरवार भी अपने गोत्र से संबंधित पशु-पक्षी आदि के प्रति पवित्र भाव रखते हैं और उन्हें नुकसान नहीं पहुँचाते हैं।

(झ) विवाह :

भारतीय समाज में विवाह एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक एवं धार्मिक कृत्य है, जो सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन को कतिपय सिद्धान्तों एवं आदर्शों के आधार पर सुसंगठित और विनियमित करता है। विवाह की व्यवस्था द्वारा ही आज का समाज एवं परिवार सुसंगठित है। यह वह पवित्र बन्धन है, जो दो व्यक्तियों को ही नहीं. दो परिवारों को एक दूसरे से जोड़ देता है। जनजातीय समुदाय में भी विवाह का विशेष महत्त्व है। विवाह के कई प्रकार एवं उससे संबंधित नियम परम्परा के रूप में उनमें कई पीढ़ियों से चले आ रहे हैं। खरवार जन-जाति में भी विवाह के कई नियम एवं पद्धतियाँ प्रचलित हैं। इनमें कुछ नियम एवं पद्धति उनकी जनजातीय परम्परा से जुड़े हुए हैं, तो कुछ उस समाज से लिये गये हैं, जिसके बीच में वे सैकड़ों वर्षों से रहते आये हैं।

विवाह के संबंध में डा. मुखर्जी ने अपने विचार व्यक्त करते हुए उसके चार भेद प्रस्तुत किये हैं [1]:-

1 सामाजिक मानव शस्त्र की रूप-रेखा, डा. रवीन्द्रनाथ मुखर्जी, विवेक प्रकाशन, 7-यू.ए. जवाहर नगर, दिल्ली , 1995 (पृ. 190 से 205)

1. एक विवाह (मोनोगेमी)
2. बहु पति विवाह (पोलिएन्ड्री)
3. बहु पत्नी विवाह (पोलिगेमी)
4. समूह विवाह (ग्रुप मैरेज)

खरवार जन-जाति में एक विवाह की प्रथा है। कहीं-कहीं बहुपत्नी (दो पत्नी) विवाह के दृष्टान्त मिलते हैं, जिसे अपवाद माना जा सकता है।

डा. मुखर्जी ने विवाह साथी चुनने के विभिन्न तरीकों की चर्चा करते हुए 8 प्रकार के चयन के तरीकों या प्रचलित प्रथा का वर्णन किया है।[1]*

1. परिविक्षा विवाह (प्रोबेशनरी मैरेज)
2. हरण विवाह (मैरेज बाई कैप्चर)
3. परीक्षा विवाह (मैरेज बाई ट्रायल)
4. क्रय विवाह (मैरेज बाई परचेज)
5. सेवा विवाह (मैरेज बाई सर्विस)
6. विनिमय विवाह (मैरेज बाई एक्सचेंज)
7. सहमति और सहपलायन विवाह (मैरेज बाई म्यूचुअल कनसेंट एन्ड इलोपमेंट)
8. हठ विवाह (मैरेज बाई इन्ट्रूजन)

इन प्रथाओं या परम्पराओं का प्रचलन बिहार की विभिन्न जनजातियों में किसी न किसी रूप में प्रचलित है। परन्तु खरवार जन-जाति में विवाह मुख्यत: माता-पिता या अभिभावक द्वारा ही तय किये जाते हैं और वर या कन्या पक्ष को किसी को दहेज नहीं देना पड़ता है। जिस लड़की का चयन माता-पिता द्वारा अगुआ (बिचौलिया) की राय लेकर कर दिया जाता है, लड़के की शादी वहीं उसी लड़की के साथ होती है। अब कहीं-कहीं प्रेम विवाह (सहमति एवं पलायन)के उदाहरण मिलते हैं। कहीं-कहीं विनिमय विवाह भी सम्पन्न होते हैं, जहाँ दोनों पक्षों के वर-वधु के अभिभावक उन्हें अपनी पसन्द से चुनते हैं।

गुमला जिला में (बिशुनपुर प्रखंड) विवाह की एक नई परम्परा का प्रचलन देखने को मिला है। यदि कोई युवक या युवती के माता-पिता शादी का खर्च वहन

1 तदैव तदैव तदैव

नहीं कर सकते हैं तो चयनित लड़की को बहु बनाकर अपने घर में रख लेते हैं। जब उनकी आर्थिक स्थिति ठीक होती है तो अपने समाज को शादी का भोज देकर उसे सामाजिक मान्यता दिलवा देते हैं। इस तरह की सामाजिक मान्यता प्राप्त करने में कभी-कभी वर्षों लग जाते हैं। इस क्रम में बाल-बच्चे भी हो जाते हैं। इस प्रथा में यह वाध्यता है कि जब तक वे दोनों सामाजिक मान्यता नहीं प्राप्त कर लेंगे, उनके लड़के-लड़कियों की शादी नहीं हो सकेगी।

उनमें अन्तर्जातीय विवाह का प्रचलन बहुत कम है। परन्तु रिजले ने एक उदाहरण देते हुए यह प्रस्तुत किया है कि खरवार और चेरो जन-जाति के बीच शादी होती रही है। उनके अनुसार पलामू राजा (चेरो) के एक संबंधी ने रामगढ राजा मनिनाथ सिंह (खरवार) की बहन से शादी की थी।[2]

उसी प्रकार डा. सिंह ने अन्तर्जातीय विवाह के संबंध में लिखा है कि खरवार कंवर और गोंड जन-जाति में भी शादी करते हैं।[3] परन्तु सर्वेक्षण में इस प्रकार का उदारहरण देखने को नहीं मिला। एक-दो केस ऐसे मिले, जिसमें खरवार युवकों ने ईसाई मतावलम्बी लड़कियों से शादी कर ली है, जिसे अभिभावक द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है। ऐसे मामले में खरवार की जातीय पंचायत (चट्टी) उन्हें जाति से निष्कासित कर देती है।

खरवार में (विशेषकर जनजातीय क्षेत्र में) वर या वधु खोजने का काम एक बिचौलिया करता है, जिसे "अगुआ'' कहा जाता है। अगुआ की परम्परा रोहतास और कैमूर में भी प्रचलित है। अन्य जनजातियों की तरह वर पक्ष वाले वधु की तलाश में नहीं जाते हैं वरन् लड़कीवाले ही वर खोजने जाते हैं। जब लड़की विवाह योग्य हो जाती है, तब उसके माता-पिता या अभिभावक अगुआ के माध्यम से यह जानकारी प्राप्त करते हैं कि उसके लिए योग्य लड़का कहाँ और किस गोत्र का उपलब्ध है। अगुआ कोई संबंधी या उस परिवार का कोई मित्र हो सकता है। जनजातीय क्षेत्र में लड़के की ओर से अगुआ लड़की खोजने जाता है। परन्तु गंगा के दियारा क्षेत्र में बसे भागलपुर, मुंगेर, साहेबगंज, कटिहार आदि क्षेत्रों में लड़कीवाले योग्य वर का पता स्वयं या अगुआ के माध्यम से लगाते हैं। जहाँ शिक्षा का प्रचार-प्रसार अधिक है और खरवार युवक उच्च पदों पर कार्यरत होते हैं, उनके घर लड़की वाले अक्सर शादी की बातचीत करने आते हैं। शादी में गोत्र का विचार पलामू, गुमला, लोहरदगा, राँची

---

2 ट्राइब्स एन्ड कास्ट्स ऑफ बंगाल, खंड-1, एच, एच, रिजले, फर्मा मुखोपाध्याय, कलकत्ता, 1981 (पृ.-473)

3 द सिडियूल्ड ट्राइब-पिपुल ऑफ इन्डिया, खंड-3, डा. के. एस. सिंह (पृ. 493)

आदि क्षेत्रों में अधिक हैं, जहाँ सामान्यत: बहिर्विवाह की परम्परा है। परन्तु भागलपुर, कटिहार, साहेबगंज आदि में सभी एक ही गोत्र - ''कश्यप गोत्र'' के हैं। अत: वहाँ गोत्र की अपेक्षा रक्त-संबंध का विचार शादी के लिए अधिक किया जाता है।

इनमें पहले बाल-विवाह की प्रथा काफी लोकप्रिय थी और कम आयु में लड़के-लड़कियों की शादी करना वे प्रतिष्ठा का विषय समझते थे। परन्तु अब इस कुप्रथा का प्रचलन बहुत कम है। अभी भी अधिकाशत: लड़कों की शादी 18 से 20 वर्ष में और लड़कियों की शादी 16 से 18 वर्ष में कर दी जाती है, जैसा कि 1981 की जनगणना के आंकड़ों से पता चलता है (टेबुल 5 एवं 6) कहीं-कहीं 10 वर्ष तक में लड़कियों की तथा 12 से 14 वर्ष में लड़कों की शादी के कुछ उदाहरण मिलते हैं।

सर्वेक्षण में ऐसे उदाहरण मिले हैं कि जहाँ परिवार शिक्षित है, वहाँ लड़कियों की शादी तो 18 से 20 वर्ष में कर दी जाती है। परंतु लड़का जब तक नौकरी में नहीं जाता. उसकी शादी नहीं होती है। (टेबुल - 16) परन्तु बहुसंख्यक खरवार अशिक्षित हैं, अत: वैसे परिवार में सामर्थ्य होते ही वयस्क लड़के-लड़कियों की शादी कर दी जाती है।

शगुन विचार :

शादी ठीक करने के लिए या लड़का-लड़की देखने के लिए जाते समय वे शकुन या अपशकुन पर भी विचार करते हैं। वे दिशाशूल पर विश्वास नहीं करते। परन्तु कई दिनों को वे शुभ काम के लिए वर्जित मानते हैं।

शकुन :

जाते समय यदि कोई सियार "हुआँ-हुआँ'' करे।

घड़ा भरकर पानी लेकर आती महिला।

नीलकंठ पक्षी का दर्शन होना। आदि .....

अपशकुन :

गाय का हंकारना। फेंकार या हरिण का रास्ते में मिलना।

गुदरुम (उल्लू) पक्षी का बोलना। खाली घड़ा का दिख जाना।

बांझ स्त्री का दर्शन। सियार या कुत्ते का रोना।

पेड़ की डाल का टूटना। आदि .....

विवाह की पद्धति या परम्परा अलग-अलग क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न प्रकार की है। विवाह सम्पन्न कराने वाले पुरोहित की जाति में भी भिन्नता है। कैमूर, रोहतास, पलामू, भागलपुर, कटिहार आदि क्षेत्रों में शादी कराने का कार्य ब्राह्मण हिन्दु-रीति से सम्पन्न कराते हैं। परन्तु गुमला, लोहरदगा आदि जिलों में पुरोहित के रूप में शादी सम्पन्न कराने का कार्य नाई (नउआ ठाकुर) कराता है। पलामू आदि में नाई ब्राह्मण के सहायक के रूप में कार्य करता है। रोहतास, पलामू आदि में बारी जाति की भी सहायता शादी के अवसर पर ली जाती है।

जनजातीय क्षेत्र में विवाह अधिकांशत: वर के घर पर ही सम्पन्न होता है। जबकि अन्य जिलों में वर-पक्ष वाले बारात लेकर कन्या-पक्ष के घर पर जाकर शादी का कार्य सम्पन्न कर बहु को विदा करा कर लाते हैं। गुमला आदि में कन्या के घर मंड़वा की रस्म पूरी कर वर पक्ष वाले कन्या को अपने घर ले जाते हैं, शादी की शेष रस्मे पूरी की जाती हैं। वर के घर लड़की लाकर शादी करने की पद्धति को वे ''डोला कढ़ाई'' कहते हैं और जब कन्या के घर बारात ले जाकर शादी सम्पन्न कराते हैं, तो उसे ''चढ़ के शादी'' कहते हैं। भागलपुर क्षेत्र में एक और शादी की पद्धति है, जिसे ''बरबज्जी शादी'' कहा जाता है। जिसमें लड़के वाले की आर्थिक स्थिति बारात लेकर जाने की नहीं होती है, वैसे में लड़का लड़की के घर चला जाता है और वहाँ से शादी सम्पन्न होने पर वापस आता है।

पहली पत्नी के जीवित रहने पर खरवार दूसरा विवाह नहीं करते। परन्तु यदि पहली पत्नी ''बांझ'' (सन्तानहीन) हो जाती है. तो उसकी सहमति से वे दूसरी शादी करते हैं। परित्याग करने या तलाक देने की परम्परा खरवार में बिल्कुल नहीं है। यदि कोई स्त्री युवावस्था में विधवा हो जाती है, तो उसकी शादी किसी संबंधी युवक (जैसे देवर) से करा दी जाती है। इस तरह की शादी में मात्र "सिन्दूर लगाई'' का रस्म की जाती है।

अन्य जनजातियों की तरह खरवार में भी ''मंडप'' या ''मड़वा'' में ही शादी की सभी रस्में पूरी की जाती हैं। मंडप कहीं साल वृक्ष की डाल से अथवा कच्चे बांस से बनाकर पत्ता या फूस से छाया जाता है। मड़वा के मध्य में हल का एक भाग ''हरिस'' रखा जाता है, जो शायद उनके कृषि-जीवन की पहचान है।

खरवार जन-जाति में विवाह की विभिन्न पद्धतियों एवं परम्पराओं की जानकारी उनके ब्राह्मण एवं नाई पुरोहित तथा खरवार के कुछ वरिष्ठ सदस्यों से सम्पर्क स्थापित कर उनके गाँव में जाकर ली गई। उसके आधार पर गुमला के बिशुनपुर, पलामू के लातेहार और भागलपुर के कहलगाँव में प्रचलित विवाह के रीति-रिवाजों

को प्रस्तुत किया जा रहा है, जो विवाह के सन्दर्भ में समीचीन प्रतीत होता है।

1. बिशुनपुर (गुमला)- इस जनजातीय क्षेत्र में नाई ही पुरोहित का काम करता है। ऐसे एक पुरोहित - भीखु ठाकुर, ग्राम - सेरका नावागढ़, बिशुनपुर से विवाह-सम्बन्धी निम्न प्रकार की जानकारी दी गई -

''जब अगुआ से सूचना पाकर वर-पक्ष के लोग कन्या के घर जाते हैं, तो लड़की लोटा में पानी लेकर आती है और अपने होने वाले श्वसुर आदि का पैर धोती है। इस बीच ''कन्या निरीक्षण'' का काम हो जाता है। लड़की को ''गोड़धोआई'' के लिए कुछ राशि लड़के के पिता आदि देते हैं। यह एक प्रकार के ''छेका'' की रस्म मानी जाती है। उसके बाद शादी का दिन आदि तय किया जाता है, जिसे ''लगनपान'' कहते हैं। उसके बाद खाना-पानी करके लड़के वाले वापस चले जाते हैं। लड़की वाले भी एक बार लड़के के घर जाकर लड़के को देख आते हैं।

शादी के एक दिन पहले कन्या के घर ''मांडो-कलसा'' का विधान किया जाता है। इस अवसर पर मंड़वा में कन्या को बैठाकर गौरी-गणेश की पूजा करवाया जाता है। यह कार्य नाई द्वारा सम्पन्न कराया जाता है। इस अवसर पर लडके के पिता एवं अन्य संबंधी भी लड़की के घर आ जाते हैं। उस दिन में ही लगनपान की दूसरी रस्म होती है, जिसमें वर और कन्या-पक्ष वाले हल्दी से रंगा चावल और धान की लेन-देन करते हैं। उस दिन मड़वा में हल्दी-कलश की रस्म पूरी की जाती है। सर्वप्रथम कन्या को नाई हल्दी चढ़ाता है और उसके घर एवं गाँव की महिलाएँ उसे (लडकी को) हल्दी लगाती हैं। कन्या के साथ उसी समय से एक लड़की भी रहती है. जिसे ''लोकदिन'' कहा जाता है। परिवार और गाँव की पाँच-छः महिलाएँ गाँव के तालाब, कुआँ या नदी से नया घड़ा में पानी लाकर कन्या को नहलाती हैं। पानी लाने के समय लड़की का भाई या बहनोई जाकर पानी की स्वच्छता बरकरार रखने के लिए पानी को हाथ से उलीचता है, जिसे "पनकटी'' कहते हैं।

उसके बाद संध्या समय नाई आकर "अम्लो'' (इमली घोटाई) की रस्म पूरा करवाता है। इससे पूर्व मड़वा में उपस्थित वर एवं कन्य-पक्ष के सभी लोगों को अरवा चावल का अक्षत बाँटा जाता है, जिसे नाई द्वारा मंत्र पढ़ने पर लोग आशीर्वाद के रूप में लड़की पर छींटते हैं। अमलो का कार्य गाँव या परिवार की पाँच सुहागिन महिलाओं द्वारा सम्पन्न किया जाता है। इस अवसर पर कन्या की माँ अपनी लड़की को बुरी नजर से बचाने के लिए अपने आंचल से कन्या का सिर ढंक कर एक दोने में सरसों रखकर घुमाती है, जिसे "निगोछना'' कहा जाता है।

इसके बाद नाई के नाखून काटने के क्रम में बायें हाथ की कनिष्ट उंगली

(कानी उंगली) से नहरनी से हल्का सा चीरा लगाकर थोड़ा खून निकाल कर उसे रूई या नया कपड़ा के टुकड़े में सुरक्षित रख लेता है। इस रस्म को "सिनई हेरना'' कहते हैं जिसके अनुसार उस रक्त-रंजित रूई या कपड़े को वर के घर भेजा जाता है। यही रस्म वर के घर पर भी सम्पन्न होती है और वर का खून कन्या के घर आता है। शादी के पूर्व उसे लड़के और लड़की के बाँह में बाँध दिया जाता है।

दूसरे दिन वर पक्ष वाले कन्या को लेकर अपने गाँव चले जाते हैं। कन्या के साथ में ''लोकदिन'', उसके परिवार के सभी पुरुष तथा कुछ महिलाएँ तथा गाँव के लोग भी जाते हैं। वर के घर पहुँचने पर द्वार पर ही वर पक्ष की महिलाएँ उसका परिछावन करती हैं। परिछावन के लिए लोढ़ा, दूब घास, सूता से बंधा समाठ (मूसल), पान का पत्ता, आम का पल्लव आदि का प्रयोग किया जाता है। वर की माँ पान के पत्ते पर घी या तेल लगाकर उसे दीप पर सेंक कर कन्या के गालों पर सटाती है। परिछावन के समय सभी महिलाएँ यह गीत गाती हैं:-

''दिन के बोलाली कन्या राइत काहे अइले रे,
सखी-सहेली के बड़ी तें सतवले रे।
हम तो बोलवली छोट-छोट बड़ काहे आले रे,
सखी-सहेली के बड़ी तें सतवले रे।।''

* * *

''घर से भेलयं आयो सुहागिन, आऊ आयो कन्या परिछू'' ''

(अर्थ - हे बहु, हमलोग तो तुमको दिन में बुलायीं थीं। तुम रात में काहें आई हो। तुम अपनी सहेलियों को बहुत सतायी हो (इन्तजार कराते-कराते)। हम लोग तो कम उम्र की बहु मांगी थीं, तुम तो बड़ी होकर आई हो। तुम अपनी सखियों को बहुत अधिक सतायी हो।''

''घर में सुहागिन बहु आ गई है। ऐ माँ, काकी आदि - आप सब लोग बहु को परीछने चलिए।'')

परिछावन के समय सभी महिलाएँ कन्या को आशीर्वाद के रूप में कुछ पैसा देती हैं। कन्या और उसके साथ आई लोकदिन को एक अलग कमरे में ले जाया जाता है।

नाई ''कल्याणी'' के रूप में निर्विघ्न शादी सम्पन्न होने हेतु दरवाजे पर सीधा वृक्ष की डाल, बाँस का कइन, सतावर, धान की बाली, नया हल्दी रंगे कपड़े में सुपारी और अक्षत बाँध कर रख देता है। लड़के के माता-पिता

का पैर महावर (लाल रंग) से रंग कर ''गर्धी बन्धन'' (गठबन्धन) के लिए दोनों की चादर को एक साथ बाँध देता है। उसके बाद दोनों मंड़वा में बैठ कर गौरी-गणेश की पूजा करते हैं। गौरी-गणेश का प्रतीक गोबर से नाई द्वारा बनाया जाता है। इस अवसर पर नये कलश में पवित्र जल डालकर कलश स्थापन किया जाता है। उसके बाद वर के पिता मड़वा के बीच में पांच लोगों की सहायता से दरवाजे से कल्याणी को लाकर गाड़ देता है। वर का पिता एक दोने में पवित्र हंड़िया (चावल की शराब) लेकर कल्याणी पर तपावन के रूप में (अर्घ्य के रूप में) चढ़ाता है। कहीं-कहीं हंड़िया की जगह महुआ की शराब भी चढ़ायी जाती है। उसके बाद वर के माता-पिता मड़वा में पत्तल पर बैठ जाते हैं और बड़े लोग दोनों का चुमावन करते हैं। कल्याणी के बाद चुमावन करा कर जब दोनों कमरे में जाने लगते हैं, हंसी-मजाक करने वाले रिश्तेदार (साला, साली, सरहज, बहनोई आदि) "दुआर छेकाई'' करते हैं और कुछ पैसा लेकर दरवाजे से हट जाते हैं। विवाह की सभी रस्में वर के माँ-बाप उपवास रहकर पूरा करते हैं।

उसके बाद वर की माँ अन्य महिलाओं के साथ ढोल-बाजा लेकर मटकोरवा के लिए किसी पवित्र स्थान पर जाती है। मिट्टी कोड़ने का काम "बैगा'' (आदिवासी पुजारी) करता है। मिट्टी लाने का काम लड़के की बहनें करती हैं। मटकोरवा की मिट्टी जब आंगन में लाकर रखी जाती है, तो उसे बुरी नजर से बचाने के लिए खपड़ा में आग रखकर उसमें नमक, मिर्चा और सरसों जलाकर निगोछती है। इस अवसर पर महिलाएँ गीत भी गाती हैं -

''राई नोन आयो निगोछले देखब रे कोई नजर नत लगाब।''

(वर की माँ राई या सरसों और नमक से मिट्टी को निगोछ रही है। देखो, किसी की बुरी नजर न लग जाए)

इसके बाद वर और कन्या को उनके बहनोई या भाई गोद में उठाकर लाते हैं और उस मिट्टी को स्पर्श कराते हैं। उस अवसर पर मिट्टी लाने वाली लड़कियाँ मिट्टी को आंचल से ढंक लेती हैं और कुछ पैसा लेकर उसे छूने देती हैं। उसी मिट्टी से मड़वा में बेदी बनाई जाती है। नाई चावल के आटे से बने अरपन (ऐपन) से चौका बनाता है, जिस पर वर और कन्या को बैठाया जाता है। कलश स्थापन के बाद गौरी-गणेश पूजन कर कन्या का पिता हल्दी लेकर अपने पितर को अर्पित करता है। उसके बाद कन्या को हल्दी लगाया जाता है।

दूसरे दिन भोर में "घिवढारी'' (घृतढारी) करते हैं और आम के पल्लव से

बना ''बेदी नेवार'' (बन्दनवार) दरवाजे पर टांग देते हैं। वर के माता-पिता घिवढारी के समय उड़द के आटे से बनी 17 छोटी-छोटी रोटियों को विभिन्न दरवाजों पर साट देते हैं, जिसे ''पितरौती'' कहते हैं।

उसके बाद ''लावा भुंजाई'' और ''जोग मंगाई'' की रस्में पूरी की जाती है। इस अवसर पर कन्या का केश पाँच दरवाजों पर तेल से भिंगोया जाता है। इस अवसर पर महिलाएँ गीत गाती हैं -

"जोग मांगे गेली जोगिनियाँ घरे,
रे जोगिनियाँ घरे।
राम तेवली-तेवली जोग मांगली रे।।''

(अर्थ - मैं जोग मांगने जोगीन के घर गई थी। मैं तेल लगा लगा कर जोग मांग लाई हूँ) यह एक प्रकार का शुभ-शगुन माना जाता है।

इसके बाद वर को ''अमलो'' और ''सिनई'' की रस्म पूरा कर जनवासा (बारात ठहरने का स्थान) भेजा जाता है। वहाँ से वर तैयार होकर ''मौर'' या खजूर की बनी टोपी पहन कर अपने बहनोई के कन्धे पर बैठ कर बाजा-गाजा के साथ बारात लेकर कन्या के दरवाजे पर आता है। कन्या का पिता वर के माथे रोली का टीका लगाकर उस पर अच्छत छिड़क कर पत्तल पर बैठाता है और आदर के साथ अंगूठा पकड़ कर मंड़वा में ले जाकर पीढ़ा पर बैठा देता है। उसके बाद ''लावा मेराई'' का कार्य सम्पन्न होता है। दोनों पक्षों के धान से बने लावा को लड़की का भाई मड़वा में छिंटता है, जिसे ''सारा धोती'' कहते हैं, क्योंकि लावा मेराई की धोती साला (कन्या का भाई) को मिलती है।

इसके बाद वर-वधू को "सनेही'' लगाने की रस्म की जाती है, जिसमें रक्त से सना कपड़ा या रूई दोनों की बांह पर बांध दिया जाता है। तत्पश्चात् "सिन्दूर दान'' होता है, जिसमें वर कन्या की मांग में पाँच बार सिन्दूर लगाता है और नाई ठाकुर मंत्र पढ़ता है। उसके बाद वेदी पर प्रज्वलित अग्नि के सात फेरे वर-वधु लगाते हैं। शादी में सात हल्दी, सुपारी, और सात मुट्ठी अरवा चावल का प्रयोग होता है। शादी के अवसर पर मड़वा में एकत्रित महिलाएँ गीत गाती हैं -

''बाबा केरा आगना में एक
गांछ चम्पा सयो तरे,
''गढ़ली राम, बोली रे।
चाचा केरा आंगना में .....
मामा केरा आंगना में .....''

(अर्थ - ''पिता के आंगन में एक चम्पा फूल का वृक्ष था, जिसे हम लोगों ने गढ़ कर अथवा पाल-पोस कर बड़ा किया है। अर्थात कन्या की तुलना चम्पा वृक्ष से की गई है। इसी आधार पर मामा, चाचा आदि के आंगन का भी वह वृक्ष माना गया है)।

विवाह हो जाने के बाद जब बाराती खाना खाने बैठते हैं, तब महिलाएँ व्यंग्य और विनोद भरे गीत गाकर उनका स्वागत करती हैं -

''पतरी जे परिगले ओर ओर,
समधि बइठि गेले जांगजोर।
रांधलि दइल भात केरा के भुंजरी,
परोसी देली पतरी पर,
समधि खाय कमरि भरी-भरी।''

(अर्थ - प्रीति भोज के लिए पत्तल लग गयी है और समधि जी पालथी मार कर बैठ गए हैं। हमलोग उनके खाने के लिए पत्तल पर दाल, भात और केला का भुजिया परोस दिए हैं समधि जी गले तक (कमर भर) भर-भर कर खा रहे हैं।

विवाह सम्पन्न होने के बाद वर पक्ष वाले कन्या पक्ष के लोगों के माथे पर दही का टीका लगाते हैं और कान पर फूल खोंस कर उनका सम्मान करते हैं। अरवा चावल के अच्छत द्वारा वर-वधू को आशीर्वाद देकर विवाहोत्सव का समापन होता है। उसके बाद पीढ़ा या पत्तल बदल कर "गौना'' की रस्म पूरी की जाती है। अन्त में समधि मिलन के बाद बारात की विदाई होती है। चौठारी के बाद कन्या अपने पति के साथ एक-दो दिन के लिए मायके जाती है।

चौठारी के पहले वर-वधु को एक नाटकीय खेल खेलना पड़ता है, जिसमें तीर-धनुष का प्रयोग किया जाता है। वर को किसी वस्तु पर तीर से निशाना लगाना पड़ता है। यदि वह चूक जाता है, तो उस पर हंसी और व्यंग्य किया जाता है। कन्या (वधु) जब विदा होकर अपने ससुराल आती है तो दरवाजे से घर तक बांस की टोकरी रख दी जाती है, जिसमें पैर रखकर वर-वधु घर में प्रवेश करते हैं। उस अवसर पर भी परिछावन होता है।

पलामू जिला में काफी संख्या में खरवार बसते हैं। उनमें प्रचलित शादी-विवाह की पद्धति एवं परम्परा के संबंध में लातेहार में उनके एक ब्राह्मण पुरोहित से जानकारी ली गई। साथ ही, उसे रामानन्द सिंह खरवार, ग्राम-कोने, प्रखंड-लातेहार से भी सम्पुष्ट कराया गया। पलामू में विवाह का सम्पूर्ण धार्मिक-कार्य ब्राह्मण से कराया जाता है और नाई ब्राह्मण पुरोहित के सहायक के रूप में कार्य करता है। विवाह

पूरी तरह हिन्दु-पद्धति से विवाह के लिए प्रचलित ग्रन्थ के आधार पर की जाती है। किसी रस्म में थोड़ा-बहुत फेरबदल करना पड़ता है। उस क्षेत्र में भी "अगुआ'' का प्रचलन है, जो लड़की का अनुसंधान करता है और पसन्द हो जाने पर लड़के के पिता को लाकर लड़की को शगुन के रूप में "बेयाना'' में 5.50 पैसा देता है। यह एक प्रकार का छेका के रूप में लिया जाता है। दूसरे दिन लडकी और लड़के के पिता पंडित (पुरोहित) को बुलाकर शादी का दिन निश्चित कराते हैं। दिन तय हो जाने पर शादी के एक दिन पहले वर के पिता अपने कुछ संबंधियों के साथ कन्या के घर जाते हैं और लड़की तथा लड़की की माँ के लिए कपड़ा और मिठाई ले जाते हैं। बाकी रस्में उसी रूप में सम्पन्न होती हैं, जैसा कि पूर्व में वर्णित किया गया है। शादी के बाद इनमें ''कोहबर'' की परम्परा है, जिसके अनुसार वर-वधु को एक अलग कमरे में रखा जाता है। उस अवसर पर एक प्रकार का नाटक या स्वांग किया जाता है। पत्थल के लोढ़े को कपड़े से ढंक कर वधु को दिया जाता है, जो संभवतः सन्तान होने की भावी सम्भावना का संकेत होता है। वधु उस लोढ़े को अपने पास रखकर थोड़ी देर बाद वर को दे देती है, जो आने वाली सन्तान के भरण-पोषण की जवाबदेही का संकेत है।

शादी के अवसर पर हिन्दुओं की तरह खरवार में भी ''जनेऊ संस्कार'' होता है। परन्तु शादी बाद उसे पुरोहित वापस ले लेते हैं, क्योंकि वे उस जनेऊ की पवित्रता बनाये रखने में सक्षम नहीं है। शादी में वर-पक्ष वाले कन्या को स्वेच्छा से एक या दो थान गहना देते हैं। उनमें भी तिलक-दहेज का प्रचलन नहीं है। लडकी को पसन्द कर शादी के निमित्त छेंकते समय वर के पिता नगद राशि के साथ-साथ उसके हाथ में अरवा चावल और गुड़ रखकर "पटमौरी'' बांध देते हैं। इस अवसर पर गाँव के कुछ लोग गवाह के रूप में उपस्थित रहते हैं।

इनमें हिन्दुओं की तरह सिन्दूरदान के बाद ''बरनैत'' या ''गुरहथी'' की परम्परा है, जिसके अनुसार वर का बड़ा भाई वधु को चाँदी का गहना, साड़ी, सूत का बना मंगलसूत्र देता है। पलामू में कहीं-कहीं वर पक्ष वाले बारात लेकर कन्या के घर जाते हैं और वहाँ विवाह सम्पन्न कराकर कन्या को विदा करा कर दूसरे दिन या तीसरे दिन ले जाते हैं।

कैमूर, रोहतास, भागलपुर, कटिहार आदि क्षेत्रों में भी खरवार की शादी हिन्दु रीति-रिवाज से होती है और ब्राह्मण पुरोहित सम्पन्न कराते हैं। कहीं-कहीं उच्च पदों पर पदस्थापित युवक विवाह में कुछ दहेज की भी अपेक्षा रखने लगे हैं और इसके लिए विजातीय शादी की ओर भी उनका झुकाव हो रहा है।

भागलपुर क्षेत्र में विवाह (खरवार में) की पद्धति के संबंध में उस क्षेत्र के जनप्रतिनिधि एवं विधायक श्री अम्बिका प्रसाद (खरवार) से बातचीत हुई। उस

अवसर पर नौगछिया अनुमंडल के डी. एल. सिन्हा (खरवार) तथा साहेबगंज के अरविन्द कुमार सिंह (खरवार) भी उपस्थित थे। उस क्षेत्र में विवाह को कार्यान्वित करने के लिए बातचीत शुरू होते समय खरवार समुदाय के लोग एकत्रित होकर यह तय करते हैं कि कौन किस तरह का सहयोग देगा। यह तय हो जाने पर ''पनखैया'' रस्म पूरी की जाती है, जिसमें सभी को पान या कटी हुई सुपारी दी जाती है। यह शुभ माना जाता है। पान-कसैली देने की इस परम्परा पर मैथिल-संस्कृति का प्रभाव दिखता है।

उस क्षेत्र में भी छेका करने या तिलक-दहेज का प्रचलन नहीं है। परन्तु कन्या के पिता या अभिभावक लड़का पसन्द हो जाने पर उसे ''मंजूरी'' के रूप में 1/- नगद, धोती, कुर्ता, जूता, मोजा, सूत का बना कमरबन्द और छाता अवश्य देते हैं। इस ''मंजूरी'' के बाद शादी नहीं करना सामाजिक अपराध माना जाता है। शादी में न्योता या निमंत्रण वधु-पक्ष द्वारा हल्दी से रंगी कसैली के माध्यम से दिया जाता है। यह कार्य निम्नांकित संख्या में दी जाने वाली सुपारी द्वारा सम्पन्न किया जाता है :

1. वर या दामाद को - 9 सुपारी - एक सुपारीी वापस कर देता है।
2. समधी को - 7 सुपारी - एक सुपारी वापस कर देता है।
3. जो दामाद लावा भूंजता है- 14 सुपारी
4. अन्य रिस्तेदार - 5 सुपारी

एक सुपारी वापस करना संभवत: निमंत्रण की स्वीकृति का प्रतीक है।

इस क्षेत्र में तीन प्रकार की शादी का प्रचलन है -

1. **चढ़ के या बारात ले जाकर** - वर पक्ष के लोग समारोहपूर्वक बारात लेकर कन्या के घर में जाते हैं और वहाँ शादी सम्पन्न कराकर दुल्हन को लेकर वापस आते हैं।
2. **बरबज्जी शादी**- जब वर पक्ष वाले बारात लेकर जाने में आर्थिक कारणों से असमर्थ रहते हैं, तो केवल लड़का कन्या के घर चला जाता है और शादी के बाद वापस आता है।
3. **सगाई** - विधवा या परित्यक्ता की दोबारा जो शादी होती है, उसे ''सगाई'' कहते हैं। यह बिना किसी समारोह के सम्पन्न होती है।

भागलपुर, साहेबगंज आदि गंगा के दियारा क्षेत्र में विवाह में निम्नांकित रस्में भी होती हैं :-

1. **घृतढारी** – शादी के एक दिन पूर्व ब्राह्मण द्वारा यह सम्पन्न कराया जाता है।

2. **पनभरवा** – लावा भूंजने वाली लडकी का भाई एक हाथ से ही कुँआ से पवित्र जल निकाल कर लाता है, जिससे कन्या स्नान करती है।

3. **मटकोरवा** – विवाह के एक दिन पहले संध्या समय किसी पवित्र स्थान से पनभरवा ही जाकर मिट्टी कोड़ता है। साथ में ढोल-बाजा के साथ महिलाएँ गीत गाती हुई समारोहपूर्वक उस पवित्र मिट्टी को लाती हैं। उसी मिट्टी से शादी की वेदी बनती है।

4. **लावा मेराई** – शादी के दिन मंड़वा में दोनों पक्ष के धान के लावा को मिला कर लड़की का भाई छींटता है।

5. **द्वार छेकाई** – बारात आने पर लड़की का भाई द्वार छेकता है और कुछ नगद उपहार लेकर दरवाजा छोड़ देता है।

6. **धुंआ-धुंआई** – लड़की कोहबर में अन्य सखियों के साथ छिप जाती है (चादर ओढ़कर) और वर को अपनी वधु को खोजना पड़ता है। कभी-कभी वह अन्य युवती को अपनी बहु मानने की मूर्खता कर देता है, जिसके कारण वह हंसी का पात्र बन जाता है। यह विधि शादी के पूर्व सम्पन्न की जाती है।

शादी तय हो जाने पर "लगन" शुरू करते समय महिलाएँ यह गीत गाती है।

''कधिके बोढ़नियाँ गे बेटी, कधि के बोन्हनियाँ,
कवन शबद गे बेटी गे, आंगना बोढ़बले।
सोना के बोढ़नियाँ गे बेटि गे, रूपा के बोन्हनियाँ,
कोइली शबद गे बेटि गे, आंगना बोढ़बले।''

(अर्थ – ''ऐ बेटी, तुम्हारी बढ़नी (झाड़ू) किस चीज की बनी हुई है और उसे किस चीज से बांधा गया है। ऐ बेटी, तुम किस तरह की बोली बोल कर (या गीत गाकर) आंगन को बुहारती हो।

ऐ बेटी, तुम्हारी बढ़नी (झाड़ू) सोने का है और उसे रूपा (चाँदी) से बांधा गया है। ऐ बेटी, तुम कोयल की बोली बोलकर (गाकर) आंगन को बुहारती हो।)

इस प्रकार क्षेत्रानुसार विवाह की पद्धति एवं परम्परा में भिन्नता पाई जाती है। आधुनिकीकरण के इस युग में और अधिक परिवर्तन संभावित है।

खरवार सामान्यत: विवाह के लिए अगहन, माघ, फाल्गुन और बैसाख महीनों को उत्तम मानते हैं। इन महीनों में पंडित (ब्राह्मण) से शुभ-तिथि एवं मुहूर्त निकलवाकर विवाह निश्चित करते हैं।

पहले खरवार अपने सीमित भौगोलिक क्षेत्र में शादी करते थे। परन्तु अब वे विभिन्न जिलों और निकटवर्ती राज्यों में भी शादी करने लगे हैं। इस तरह के कई उदाहरण सर्वेक्षण में मिले हैं, जिनका उल्लेख निम्नांकित टेबुल में किया जा रहा है:

टेबुल - 17

क्र.सं.	वर पक्ष का नाम, पता आदि		कन्या पक्ष का नाम, पता आदि
1.	2.		3.
क.	**राज्य के भीतर**		
1.	डा. परमा नन्द सिंह, ग्राम - बनिया, प्रखंड - गोपालपुर, जिला - भागलपुर	-	यमुना सिंह, ग्राम - बरवाडीह, प्रखंड - बरवाडीह, जिला - पलामू
2.	शशि भूषण सिंह, बरवाडीह, पलामू	-	सूरज नारायण सिंह, ग्राम - परशुरामपुर, प्रखंड - पिरपैंती, जिला - भागलपुर
3.	अरविन्द कुमार सिंह, ग्राम - बड़ाकोदरजना, प्रखंड / जिला - साहेबगंज	-	श्रीकान्त सिन्हा, ग्राम - बनिया, प्रखंड - गोपालपुर, जिला - भागलपुर
ख.	**राज्य के बाहर**		
4.	गोबिन्द प्रसाद सिन्हा, ग्राम - बरोहिया, प्रखंड - कहलगांव, जिला - भागलपुर	-	ग्राम - खेमपुर, प्रखंड / थाना - रतुआ, जिला - मालदह, (प. बंगाल)
5.	केदार प्रसाद सिंह ग्राम - बड़ा कोदरजना, प्रखंड/जिला-साहेबगंज	-	ग्राम - देवीपुर प्रखंड/थाना-रतुआ जिला-मालदह (प. बंगाल)
6.	वासुदेव सिंह, ग्राम / प्रखंड - अधौरा, जिला - कैमूर (भभुआ)		वासुदेव सिंह, ग्राम-नगवा प्रखंड / जिला - सोनभद्र (उत्तर प्रदेश)

1.	2.		3.
7.	डोमा सिंह, ग्राम - चैनपुरा, प्रखंड - अधौरा, (भभुआ)	-	शिवपूजन सिंह, ग्राम - सूअरसोय, प्रखंड / जिला - सोनभद्र उ.प्र.
8.	मुन्सी सिंह, ग्राम - दीधार, प्रखंड - अधौरा, भभुआ	-	मौनी सिंह, ग्राम - सेमरा, प्रखंड - नवगढ़, वाराणसी, उ.प्र.

कैमूर और रोहतास जिला खरवार समुदाय के लोगों के अनेक वैवाहिक संबंध पलामू जिला में हैं।

—— ❋❋ ——

अध्याय - 5

जीवन-चक्र के धार्मिक कृत्य

(क) विभिन्न विद्वानों ने खरवार या खेरवाल के रूप में उस प्रजाति का वर्णन किया है जिससे संथाल जनजाति की भी उत्पत्ति हुई है। आर. वी. रसेल ने कर्नल डाल्टन द्वारा प्रस्तुत एक संथाली लोक-कथा का प्रसंग देते हुए खरवार जनजाति की उत्पत्ति को एक मादा हंस के अंडे से माना है, जिसका उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है।[1*]

इस प्रकार खरवार जनजाति के आदि पुरुष का जन्म एक पक्षी के अंडे से माना गया है और यह लोक-विश्वास अन्य जनजातियों में भी प्रचलित है। सवर और हिल खड़िया की उत्पत्ति मोर के अंडे से माना जाता है।

खरवार अपने को राजा हरिश्चन्द्र के पुत्र रोहिताश्व की संतान भी मानते हैं और इस कारण अपने को सूर्यवंशी राजपूत भी मानते हैं। उनमें यह भी लोक-विश्वास है कि मानव-जन्म केवल स्त्री-पुरुष के समागम से ही नहीं होता, वरन वह ईश्वर की कृपा या इच्छा पर निर्भर करता है। वे पुनर्जन्म को पूर्व-जन्मों का प्रतिफल भी मानते हैं।

जब कोई स्त्री गर्भधारण नहीं करती है तो वे उसका निम्नांकित कारण मानते हैं:-

1. भगवान या काली माई उस पर नाराज है।
2. उस पर किसी प्रेत या चुडैल का प्रभाव है।
3. उसे डायन या ओझा बांझ बना दिया है।
4. वह किसी दुराचरण के कारण माँ नहीं बन सकती है।

परन्तु अब जो पढ़-लिख कर जागरूक हो गये हैं, वे इसे रोग या बीमारी के रूप में लेते हैं और उसका इलाज कराते हैं। परन्तु जनजातीय क्षेत्र में अधिकांश उपर्युक्त बातों को ही बांझपन का कारण बताते हैं और उसके लिए ओझा-गुनी की सहायता लेते हैं। उनमें से बहुत कम यह जानते हैं कि बांझपन का कारण स्त्री या पुरुष अथवा दोनों में किसी शारीरिक दोष अथवा यौन-संबंधी रोग या विकृति से होता है।

बांझपन खरवार समुदाय में भी हेय दृष्टि से देखा जाता है। परन्तु बांझ होने पर भी अपनी पत्नी का परित्याग नहीं करते वरन् उसकी सहमति से सन्तान हेतु दूसरी शादी करते हैं। परिवार में शिशु का जन्म लेना वे एक महत्त्वपूर्ण घटना मानते हैं।

(ख) गर्भाधान एवं गर्भ की पहचान :

खरवार जन-जाति में लड़कियों की शादी सामान्यत: 18 से 20 वर्ष की बीच हो जाती है। शादी के बाद वह ससुराल चली जाती है। सामान्यत: शादी के एक वर्ष के भीतर वह गर्भवती हो जाती है। जब उसका मासिक धर्म होना बन्द हो जाता है, तब यह अनुमान लगाया जाता है कि वह गर्भवती है। इस अवस्था को स्त्रियाँ ''दिन चढ़ना'' कहती हैं। इनमें शिशु जन्म-दर सर्वेक्षण से पता चला कि शादी के बाद 18 वर्ष एवं उससे ऊपर की आयु की 10 बहुओं में 8 बहुएँ एक वर्ष के भीतर गर्भवती हो जाती हैं। कभी-कभी कुंआरी कन्या भी किसी युवक के प्रेम-प्रसंग में फंस कर गर्भवती हो जाती है। ऐसी स्थिति में प्रेमी युवक खरवार जन-जाति का होता है तो उसके साथ उस कन्या की शादी करा दी जाती है। यदि युवक गैर-खरवार जाति का पाया गया तो जड़ी-बूटी खिलाकर उस कुंआरी कन्या का गर्भ नष्ट कर दिया जाता है।

गर्भधारण का पता महिलाएँ कई प्रकार से लगाती हैं :

1. स्त्री का मासिक धर्म यदि एक-दो माह तक रुक जाता है तो समझा जाता है कि वह गर्भ धारण कर चुकी है।
2. पेटे के निचले भाग में उभार आदि शारीरिक लक्षणों को देखकर भी गर्भवती होने का अनुमान लगाया जाता है।
3. मुंह का स्वाद बदलने या बार-बार उल्टी (कै) होने पर भी यह अनुमान लगाया जाता है कि वह गर्भवती है।
4. गर्भवती स्त्रियाँ अक्सर खट्टा या मिट्टी के बर्तन का टुकड़ा खाना पसंद करती हैं।

गर्भ में पुत्र है य पुत्री, इसकी पहचान चार-पाँच महीने का गर्भ होने के बाद बड़ी-बूढी महिलाएँ गर्भवती के शारीरिक लक्षणों को देखकर अनुमान के आधार पर करती हैं। यदि गर्भवती मोटी-ताजी या स्वस्थ रहती है, समझा जाता है कि उसके गर्भ में कन्या है। इसके विपरीत यदि वह दुबली-पतली हो जाती है तो पुत्र का अनुमान लगाया जाता है। यदि गर्भवती का पेट अधिक बड़ा लगता है, तब भी पुत्र होने का अनुमान लगाया जाता है।

गर्भस्थ शिशु को खरवार भी अपने पूर्वजों के पुनर्जन्म के रूप में लेते हैं। गर्भवती हो जाने पर उसकी देख-भाल विशेष रूप से की जाती है ताकि शिशु का जन्म बिना किसी विघ्न-बाधा के सुरक्षित रूप से हो जाय। जनजातीय क्षेत्र में

कहीं-कहीं और जनजातीय क्षेत्र के बाहर खरवार में गर्भवती को सम्मान देने के लिए नया वस्त्र देने का भी प्रचलन है।

ग) गर्भवती के लिए विधि-निषेध :

जनजातीय क्षेत्र में तथा अन्य क्षेत्रों में खरवार जन-जाति में गर्भवती को कई निषेधों को मानना पड़ता है। ये निषेध उसके गर्भ की रक्षा तथा कष्टहीन प्रसव के लिए आवश्यक माने जाते हैं :

1. श्मशान घाट या कब्रगाह में जाने की मनाही है।
2. अकेले नदी, तालाब, झरना, आदि के पास जाना मना है।
3. वह जंगल या निर्जन स्थान में नहीं जा सकती है।
4. श्राद्ध के भोज में वह नहीं भाग ले सकती है।
5. सूर्यग्रहण या चन्द्रग्रहण देखना मना है।
6. गर्भवती को खान-पान में कई चीजें वर्जित हैं
    1. रोवांदार पशु का मांस।
    2. बासी भात, बासी रोटी या बासी मकई का घट्ठा।
    3. पशु-पक्षी का सिर, पैर या अंतड़ी का मांस खाना।
    4. शिकार किये गये पशु या पक्षी का मांस।
    5. बातारी चीजें - जैसे - कोहड़ा, बैंगन, सेम आदि।
    6. कुछ खास किस्म की मछली - जैसे - गोंजी, बामी आदि।
    7. महुआ की शराब या चावल का हंड़िया या ताड़ी।
    8. जोड़ा या जौआं फल या सब्जी।

गर्भवती की देख-भाल उसकी सास या माँ करती है या घर की अन्य वृद्ध महिलाएँ उसका ख्याल रखती हैं।

प्रसव के समय प्रसूता को एक अलग कमरे में रखा जाता है, जिसे ''सउरी'' या ''सौर गृह'' कहते हैं। कहीं-कहीं इसे ''परसौती घर'' भी कहा जाता है। इस कमरे में केवल स्त्रियाँ ही जाती हैं। पुरुषों का जाना वर्जित रहता है। वे केवल आपातकाल में ही जाते हैं। प्रसव के समय घर की बड़ी-बूढ़ी और अनुभवी महिलाएँ प्रसूता को प्रसव कराने में मदद करती हैं। कहीं-कहीं गाँव की महरिन या प्रशिक्षित दाई या

नर्स प्रसव कराने के लिए बुलाई जाती है। अब लोग इस कार्य के लिए प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र, रेफरल अस्पताल या अन्य अस्पताल की भी मदद लेते हैं।

(घ) प्रसव के बाद धार्मिक एवं अन्य कृत्य :-

1. ''नार कटाई'' (नालोच्छेदन) - शिशु के गर्भ से बाहर आते ही महरिन या चमाईन शिशु के "नाल-पुराइन'' को उसके शरीर से अलग कर देती है। पहले यह कार्य किसी पुरानी छुरी या हंसिया से किया जाता था, जिसके कारण ''टिटनस'' हो जाने के कारण अनेक शिशुओं की मृत्यु हो जाती थी। परन्तु अब नाल काटने के लिए ब्लेड अथवा नई और साफ छुरी का प्रयोग किया जाता है। जहाँ ट्रेंड दाई या नर्स प्रसव कराती है, वहाँ ''स्टर्लाइज्ड ब्लेड'' से नाल काटती है। नाल काट कर नाभि में रह गए नाल के शेष भाग को किसी औषधीय पत्ते का रस लगाकर सूखने के लिए छोड़ दिया जाता है। चमाइन ''नारकटाई'' के रूप में कुछ नगद राशि और कपड़ा या अनाज लेती है।

नाल-पुराइन को आंगन में या घर के निकट कहीं सुरक्षित स्थान में जमीन में काफी नीचे गाड़ देते हैं, ताकि उसे कुत्ता या अन्य कोई जानवर निकाल कर खा न जाय। उनमें यह लोक-विश्वास प्रचलित है कि यदि नाल-पुराइन को कोई जानवर खा जायेगा तो जंगल में जाने पर उस शिशु को (बड़ा होने पर) बाघ या अन्य जंगली जानवर द्वारा खा जाने की संभावना बनी रहेगी।

2. छूत एवं छूत की अवधि :- नया जन्म होने पर प्रसव होने के दिन से छः दिन तक छूत माना जाता है। इस अवधि में सौर गृह में कोई नहीं जाता है (बाहरी व्यक्ति) घर में कोई शुभ कार्य नहीं किया जाता है, कहीं कोई भोज खाने या अन्य ऐसे अवसर पर बाहर नहीं जाता है। छठे दिन ठकुराइन आकर प्रसूता का नाखून काटती है और प्रसूता को स्नान कराया जाता है। इस अवसर पर नवजात शिशु को भी नहलाया जाता है। छठे दिन "छट्ठी'' समारोहपूर्वक मनाया जाता है और अपने संबंधियों को तथा सामर्थ्य रहने पर ग्रामवासियों को भी प्रीति-भोज दिया जाता है। पलामू में लड़की होने पर पाँच दिन में और लड़का होने पर छः दिन में छट्ठी होती है।

छट्ठी के दिन रोहतास, कैमूर, पलामू, भागलपुर आदि क्षेत्रों में नवजात शिशु को ''काजर लगाने'' की एक परम्परा या रिवाज है, जिसे नवजात शिशु की फुआ सम्पन्न करती है। वह काजर करने के लिए शिशु के पिता से कुछ नगद पैसा, कपड़ा या अन्य कोई गहना लेती है। उसी दिन से उस शिशु को सरसों तेल से तैयार किया गया काजल आँखों में लगाना शुरू किया जाता है और बुरी नजर से

बचने के लिए उसके ललाट पर भी काजर (काजल) का टीका लगा दिया जाता है। इस दिन बच्चे को नया वस्त्र पहनाया जाता है। इसके बाद प्रसूता छूत से मुक्त हो जाती है और रसोईघर में जा सकती है। भोजपुरी भाषा-भाषी क्षेत्र, सासाराम, भभुआ आदि जगहों में छट्ठी में महिलाएँ गीत भी गाती हैं, जिसे ''सोहर'' कहा जाता है। इस अवसर पर ढोल भी बजाती हैं।

(ङ) नामकरण संस्कार :-

शिशु का नामकरण छट्ठी के दिन या उसके बाद ब्राह्मण या माता-पिता द्वारा किया जाता है। जनजातीय क्षेत्र - पलामू, गुमला, लोहरदगा आदि - में खरवार जनजातीय परम्परा के अनुसार ''सगुन'' निकाल कर नामकरण करते हैं। इसके अनुसार घर का मुखिया थाली या लोटा में पानी भर कर अपने पूर्वजों (पितरों) का नाम लेकर चावल डालता है। यदि किसी एक नाम लेने पर दो चावल एक साथ मिल जाते हैं, तो शिशु का वही नाम रखा जाता है। इस क्षेत्र में खरवार शिशुओं का नाम उनके दादा-दादी के नाम पर रखा जाता है। परन्तु अब अधिकांश नाम ब्राह्मण द्वारा रखे जाते हैं अथवा माता-पिता कोई आधुनिक प्रचलित नाम रख देते हैं, जैसा कि पूर्व के अध्याय में इसका उल्लेख किया गया है। कई नाम पर्व, ऋतु या दिन पर भी आधारित रहते हैं। जैसे - फगनी, बसन्त, वर्षा, शनिचर. मंगल आदि नाम खरवार में बहुत मिलते हैं। नामकरण के अवसर पर कोई समारोह नहीं होता है।

(च) अन्नप्राशन संस्कार या मुंहजुट्ठी :-

खरवार जन-जाति की महिलाएँ शिशु के जन्म के बाद से ही स्तनपान कराना शुरू कर देती हैं और एक-डेढ़ वर्ष तक शिशु को स्तनपान कराती हैं। शिशु जब 5 या 6 महीने का हो जाता है तो ''मुंहजुट्ठी'' (अनप्राशन) का समारोह या रस्म किया जाता है। इस अवसर पर दूध चावल और चीनी या गुड़ से बना खीर नयी कटोरी में लेकर शिशु के दादा, नाना, पिता या मामा उसे खिलाते हैं। इसके बाद ही शिशु को कोई ठोस आहार दिया जाता है। खरवार अपने बच्चे को मुंडा, संथाल आदि की तरह ''हंड़िया'' (चावल की शराब) नहीं पिलाते हैं। खरवार के शिशु कम उम्र से ही ठोस आहार (दाल, भात, खिचड़ी आदि) लेने लगते हैं। औसतन खरवार के बच्चे स्वस्थ पाये जाते हैं।

(छ) कर्ण छेदन :-

इस जन-जाति में लड़कियों का कर्णछेदन अथवा कान छेदने का कार्य कहीं-कहीं लड़की के एक वर्ष का होने पर और कहीं-कहीं 4 वर्ष का हो जाने

पर कराया जाता है। पहले खरवार के लड़कों का भी कर्णछेदन कराया जाता था और उन्हें कुंडल या सोने का कील कान में पहनायी जाती थी। सर्वेक्षण के समय कई बुजुर्ग एवं वयोवृद्ध खरवार के कान छिदे हुए पाये गए। परन्तु अब लड़कों के कान को छिदवाने की परम्परा समाप्त हो गई है।

लड़कियों का कर्ण छेदन जतरा या मेला में ही कराया जाता है, जहाँ कान छेद कर उसमें पीतल की बाली पहना देते हैं। कान पके नहीं, इसके लिए कान के छेदे हुए भाग पर हल्दी लगा देते हैं। बड़ी होने पर लड़कियाँ कर्णफूल आदि पहनती हैं।

(ज) वयः सन्धि एवं युवावस्था :-

युवावस्था में पहुँचने पर खरवार जन-जाति के युवक-युवतियों के लिए कोई ''युवा गृह'' (गीती ओड़ा या धुमकुड़िया) का प्रचलन नहीं है। अतः युवावस्था को भी घर के बड़े-बूढ़ों के साथ ही बिताते हैं। खरवार जन-जाति में लड़कियाँ 13 से 15 वर्ष की आयु में ऋतुमति होती हैं। ऋतुवास के प्रबन्धन की जानकारी उन्हें अपनी माँ से मिलती है। सामान्यतः ऋतुमति होने के तीन-चार साल के भीतर उनका विवाह हो जाता है। पूर्व में कैमूर, रोहतास आदि जगहों में ऋतुमति होने से पूर्व ही लड़कियों की शादी कर दी जाती थी। परन्तु अब यह परम्परा समाप्तप्राय है। इनके समाज में विवाह-पूर्व यौन-संबंध वर्जित है। अतः लड़कों की भी शादी 20 वर्ष के भीतर कर देते हैं। वे विवाह को "तील-चावल का मेल'' मानते हैं जो भाग्यवादिता पर आधारित है। उनके वैवाहिक पद्धति एवं परम्परा पर पूर्व अध्याय में ही विस्तृत विचार किया गया है।

(झ) वृद्धावस्था एवं मृत्यु :-

खरवार जन-जाति में वृद्धावस्था को सम्मानजनक अवस्था माना जाता है। जिस परिवार में दादा और दादी जीवित रहते हैं, उन्हें वे हनुमान जी या काली माई की विशेष कृपा मानते हैं। घर के सभी महत्त्वपूर्ण कार्य-कलाप, शादी-विवाह आदि अवसरों पर वृद्धों की राय ली जाती है। इस जन-जाति में लोग दीर्घायु होते हैं और जीवन के अन्तिम चरण तक सक्रिय रहते हैं। सर्वेक्षण के 10 परिवार में से 6 परिवार में 70 वर्ष से अधिक आयु के वृद्ध पाये गये। वे भी मानते हैं कि ईश्वर ने मानव जीवन को चार चरणों में बांट दिया है - शैशव अवस्था, किशोर अवस्था, युवावस्था और वृद्धावस्था। इन चार चरणों से सबको गुजरना पड़ता है। जिनका पूर्व जन्म का कर्म ठीक नहीं होता, वे ही बीच में ही दुनिया से चले जाते हैं।

मृत्यु :- मृत्यु या मौत को वे भगवान की व्यवस्था मानते हैं। वृद्धावस्था में

होने वाली सामान्य मृत्यु के अलावा जो अकाल मृत्यु होती है, उसके संबंध में उनमें कई लोक-विश्वास प्रचलित हैं :-

1. गर्भस्थ शिशु की मुत्यु - डायन या चुड़ैल के कुप्रभाव से।
2. नवजात शिशु की मृत्यु - डायन या जमुआं (टिटनेस) नामक प्रेत से।
3. गर्भवती की मृत्यु - डायन या चुडैल के कारण।
4. नहाते समय डूब कर मृत्यु (नदी आदि में) - पनडूबा भूत के कारण।
5. जंगल में बाघ आदि द्वारा मारे जाने पर - बघुट या जंगली भूत के कारण।
6. महामारी (हैजा आदि) से मरने पर - भगवान के आक्रोश के कारण।

साधारण रोग होने पर वे उसे स्वाभाविक रोग मानते हैं। परन्तु असाध्य रोग होने पर या संक्रामक अथवा महामारी रोग को वे ईश्वरीय, प्रेत-जनित या डायन-ओझा द्वारा लगाया गया रोग मानते हैं। इस कारण रोग हो जाने पर वे जड़ी-बूटी से चिकित्सा कराने के साथ-साथ झाड़-फूंक भी करवाते हैं। अब उनमें भी जागरूकता आ रही है और रोग होने पर वे डॉक्टर को दिखला कर दवा भी लेते हैं। परन्तु जनजातीय एवं सुदूरवर्ती क्षेत्र में जहाँ डाक्टर की सुविधा उपलब्ध नहीं है. वहाँ गाँव के लोग वैद्य या क्वैक से चिकित्सा करवाने को बाध्य होते हैं। इस प्रकार कई मौतें चिकित्सा के अभाव में भी हो जाती हैं।

मृत्यु के समय वे मृतक के इच्छानुसार अपने सगे-संबंधियों को बुलाकर मिला देते हैं। कहीं मृत्यु होते समय तुलसी पत्ता और गंगाजल भी मुंह में डाला जाता है। मृत्यु के समय उसे खाट या चौकी से उतार कर जमीन पर सुला दिया जाता है और उसका सिर दक्षिण दिशा की ओर कर दिया जाता है। मृत्यु हो जाने पर घर की महिलाएं मृतक का नाम लेकर विलाप करती हैं और कोई-कोई अपना सिर या छाती पिटती हैं।

मृतक का अंतिम-संस्कार :- मृत्यु होते ही मृतक का पूरा शरीर चादर से ढंक दिया जाता है और अन्तिम-संस्कार की तैयारी शुरू कर दी जाती है। सर्वप्रथम मृतक के लिए बाजार से कफन का कपड़ा आदि लाते हैं। कच्चे बाँस से ''रन्थी'' बना कर उस पर पुआल रखकर मृतक को उस पर सुला देते हैं। मृतक की पत्नी यदि जीवित रहती है, तो वह अपने हाथ की चूड़ी तोड़ देती है और मांग का सिन्दूर

धो देती है। उसका सिन्दूर रखने का सिन्दोरा मृतक के साथ चला जाता है। मृतक के साथ उसका बिस्तर, वस्त्र आदि भी उसके साथ श्मशान जाता है। खरवार का श्मशान किसी नदी के किनारे अवस्थित रहता है। पुरुष मृतक को सफेद कपड़ा एवं महिला को लाल रंग के कफन में श्मशान घाट ले जाया जाता है। खरवार में अधिकांश मृतक को जलाया जाता है। केवल पाँच वर्ष तक के शिशु को गाड़ दिया जाता है। मृतक को श्मशान ले जाते समय सभी लोग ''श्री राम नाम सत है'' - बोलते जाते हैं।

श्मशान घाट पर लकड़ी की चिता पर मृतक को रखा जाता है और तब अग्नि-संस्कार प्रारम्भ होता है। मृतक का बड़ा लड़का अग्नि-संस्कार करता है। इस अवसर पर उसके सिर के बाल का नाई द्वारा मुंडन किया जाता है और स्नान कर वह कफन के टुकड़े को पहनता है। कहीं-कहीं महापात्र ब्राह्मण मंत्र पढ़कर अग्नि-संस्कार करवाता है और कहीं-कहीं लोग स्वयं यह कार्य सम्पन्न करते हैं। जो पिता को मुखाग्नि देता है। उसे 'अगदेउआ' कहते हैं। मृतक के जलने तक लोग श्मशान घाट पर ही रहते हैं। मृतक के पूरी तरह जल जाने के बाद कहीं-कहीं उसके अस्थि-अवशेष को लोग किसी नदी में भी प्रवाहित कर देते हैं।

शमशान घाट से नहा-धोकर लौटने के बाद सभी शव-यात्री को घर के दरवाजे पर रखा लोहा और पानी को छूकर पवित्र होना पड़ता है। मृतक के नाम पर दूसरे दिन उसकी प्रेतात्मा की शान्ति के लिए पीपल के पेड़ पर छेद किया हुआ मिट्टी का एक कलसा लटका दिया जाता है, जिसमें ''अगदेउआ'' रोज जाकर पानी डालता है जो 10 दिनों तक चलता रहता है। उस बीच अगदेउआ बिना नमक, हल्दी, तेल, मसाला रहित भोजन करता है और अपने भोजन का एक अंश पत्ते पर रखकर मृतक के नाम पर पक्षी को खाने के लिए रख देता है। मृतक का पूरा परिवार 10 दिनों तक छूत मानते हैं तथा मूंछ, दाढ़ी और केश नहीं कटवाते हैं।

दसवें दिन महापात्र ब्राह्मण आकर पितर, प्रेतों और मृतक के नाम पर चावल और काले तिल से बना पिंड दान करवाते हैं। उसी दिन परिवार के पुरुष सदस्य मुंडन कराकर स्नान कर पवित्र होते हैं। बारहवें दिन उस परिवार का ब्राह्मण पुरोहित आकर श्राद्ध-कर्म सम्पन्न करवाता है और श्राद्ध के बाद जनेउ उतार देते हैं। दशकर्म महापात्रा को और श्राद्ध के दिन ब्राह्मण को वे यथाशक्ति कुछ सामग्री - खाट, दरी, चादर, धोती आदि दान स्वरूप देते हैं। उनकी यह अवधारणा है कि वे जो कुछ दान में देंगे, मृतक को वे सामग्रियाँ मिल जायेंगी। ब्राह्मण पुरोहित हिन्दु-रीति से ''गरुड़ पुराण'' के आधार पर श्राद्धकर्म सम्पन्न करवाते हैं। बारहवें दिन सम्पन्न होने वाले श्राद्ध के दिन ही वार्षिक श्राद्ध भी सम्पन्न हो जाता है।

छोटे बच्चा के मरने पर ''तिरात'' मनाया जाता है, जिसमें छूत की अवधि तीन दिनों की होती है। जनजातीय क्षेत्र में यह परम्परा अधिक प्रचलित है। गर्भवती के मरने पर उसे भी जलाते हैं। इस तरह की मौत को वे ''दोपच'' कहते हैं और इसमें श्राद्ध नहीं करते हैं।

खरवार जन-जाति में मृतक के दाह-संस्कार से लेकर श्राद्ध सम्पन्न होने तक की परम्परा एवं रीति-रिवाज हिन्दु-परम्परा से पूरी तरह साम्यता रखती है। पितरों को ''गयावास'' कराने की परम्परा उन्होंने हिन्दुओं से ली है। अधिकांश जनजातियों में मृतक को गाड़ा जाता है और कब्र पर पत्थर (शशन दिरि) रखने की परम्परा है। परन्तु खरवार इस परम्परा से अलग हो चुके हैं।

—— ** ——

अध्याय - 6

आर्थिक एवं पारिस्थितिकी

(क) प्राकृतिक संसाधन :

खरवार बिहार के जिन क्षेत्रों में निवास करते हैं, उनमें काफी विविधता है। उनके क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति, जलवायु, आर्थिक संसाधन आदि अलग-अलग हैं। फलस्वरूप उनके जीवन-यापन के आर्थिक संसाधन उनके क्षेत्र में उपलब्ध प्रकृति सम्पदा की सम्पन्नता और विपन्नता पर निर्भर करता है। खरवार मूलतः कृषि-जीवन से जुड़े हुए हैं। वे पशुपालन में भी रुचि रखते हैं। पूर्व काल में जब वे कैमूर की पहाड़ी पर रह रहे थे तो ''भूमचास'' (सिफ्टिंग कल्टिवेशन) किया करते थे। उस समय वहाँ जंगल काफी बड़े क्षेत्र में फैला हुआ था। कैमूर की पहाड़ियों का विस्तार सासाराम से लेकर मिर्जापुर तक है, जहाँ वे आदिकाल से रहते आ रहे हैं। कर्नल डाल्टन ने जे. पी. ब्लन्ट का प्रसंग देते हुए लिखा है - ''1794 ई. में कैप्टेन ब्लन्ट जब उस क्षेत्र में जा रहे थे तो उनको देखकर खरवार जन-जाति के पुरुष एवं महिलाएँ भागने और छिपने लगे थे। वे देखने में बिल्कुल आदिम जन-जाति की तरह थे और लगभग नंगे थे। उनकी झोपड़ियों में मिट्टी के पानी के बर्तन, खाने के कुछ अनाज, मुर्गा-मुर्गी, तीर-धनुष आदि थे। बाद में वे लोग कोल लोगों के द्वारा बुलाये जाने पर आये।[1]*

इस प्रतिवेदन से ऐसा प्रतीत होता है कि 1794 में उस क्षेत्र के खरवार काफी पिछड़े और विपन्न थे। उस समय उनके कुछ लोग मिर्जापुर के आस-पास खैर की लकड़ी से कत्था बनाने का काम भी करते थे। श्री रसेल ने लिखा है कि कैमूर (दमोह) के खरवार गोन्ड और सबर जन-जाति से बनी एक शाखा के रूप में माने जाते थे, जो छोटानागपुर के खरवार से थोड़े भिन्न थे। सोन की घाटी में बसे खरवार भी कत्था बनाने का काम करते थे। इसलिए अन्य खरवार उन्हें नीची नजर से देखते थे। गोंड और सवर से उनकी केवल पेशागत साम्यता थी। इससे स्पष्ट होता है कि खरवार का एक वर्ग खेती के साथ-साथ कत्था बनाने का भी काम करता रहा है। अब रोहतास और कैमूर में जंगल बहुत कम क्षेत्र में है। इस क्षेत्र में खरवार का मुख्य कार्य आर्थिक संसाधन - कृषि, पशुपालन, जंगल से लकड़ी, जड़ी-बूटी, आंवला, हरें बहेरा आदि लाकर बेचना, खरगोश आदि पकड़ना तथा

1 इथनालॉजी ऑफ बंगाल, कर्नल डाल्टन, पृ. - 128/129

मजदूरी करना है। जो कैमूर या रोहतास की तराई में सोन की घाटी में बस गए हैं, वे खेती या मजदूरी कर अपना भरण-पोषण करते हैं। अब पढ़-लिख कर कुछ लोग नौकरी भी करने लगे हैं। परन्तु लगभग 80 प्रतिशत खरवार पहाड़ी पर ही बसे हुए हैं, जो अपने को सूर्यवंशी कहते हैं और मजदूरी करना अपनी प्रतिष्ठा के विरुद्ध समझते हैं। रोहतास जिले के अधौरा प्रखंड में न्यूनतम वर्षा होती है, इस कारण वहाँ कृषि-कार्य प्रभावित होता है।

कैमूर में कहीं-कहीं खरीफ (धान आदि) और रब्बी (गेहूं, चना आदि) दोनों होते हैं। परन्तु अधिकांश क्षेत्र सिंचाई के अभाव में एक फसली ही है। पहाड़ पर और तराई में जहाँ मिट्टी अच्छी है, वहाँ खरीफ में धान, तिलहन, आदि लगाते हैं। टांड़ जमीन पर मकई, अरहर, ज्वार, बाजरा आदि लगाते हैं। वे रब्बी की फसल में चना, मटर, राई, सरसों, तीसी आदि लगाते हैं।

छोटानागपुर के पलामू, गुमला, लोहरदगा आदि जनजातीय बहुल पहाड़ी क्षेत्रों में कुल खरवार जनसंख्या के 60 प्रतिशत लोग बसते हैं। यह क्षेत्र पश्चिम में मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश की सीमा से सटा हुआ है। इस क्षेत्र में तुलानात्मक दृष्टि से वन अधिक हैं। अतः इन क्षेत्रों में इमारती लकड़ी में साल, सलई, आसन, बीजा, सागवान, महुआ, जामुन आदि के पेड़ काफी हैं। फिर भी इन क्षेत्रों में भी वनों का विनाश काफी हुआ है। वन से भी खरवार अपना आर्थिक स्रोत प्राप्त करते हैं। साल बीज, केन्दू पत्ता, आंवला, हर्रे, बहेरा, केन्दु, पियार, महुआ, जामुन, आम, कटहल आदि बहुतायत में इन जंगलों में मिलते हैं, जिन्हें ऋतु के अनुसार वे जंगल से लाकर बेचते हैं और अपने उपयोग में लाते हैं। इसके अलावा सतावर, चिरायता, सनई पत्ती, ज्येष्ठ मधु, चितावर, घोरबांछ, परही, तिरियों आदि औषधि-गुण वाली जड़ी-बूटी लाकर भी बेचते हैं। इस क्षेत्र में अनेकों प्रकार के खाने वाले कन्दा और गेठी मिलते हैं, जिन्हें वे जंगल से लाकर खाते हैं।

इन वनों में कहीं-कहीं मोर, तीतर, हारियल, बनमुर्गी आदि पक्षी तथा बनैला सूअर, साहिल, कोटरा, हिरण, खरगोश आदि भी मिलते हैं, जिनका शिकार वे कभी-कभी कर लेते हैं। वे जंगल में बहने वाली नदी या नाले में मछली भी मारने जाते हैं, जिसके लिए छोटे जाल या बांस की कुमनी का प्रयोग करते हैं।

जंगल से अनेक प्रकार के खाने वाले साग और फल भी प्राप्त करते हैं, जिनमें कचनार, जिरहूल, कैमा, मौना, चकवड़, कोयनार, फुटकल, गुंजा, टुरचा, सरवत, आदि मुख्य हैं। इस क्षेत्र में खरवार अब केला, अमरूद, पपीता आदि की बागवानी भी करने लगे हैं। इन पहाड़ी क्षेत्रों में जहाँ अच्छी मिट्टी है, धान की खेती होती

है। टांड़ जमीन में गोड़ा धान, गोंदली, मडुआ, कुरथी, सरसों, सुरगुजा, रहर आदि लगाते हैं। गेहूँ की खेती बहुत कम होती है। वे आलू, पियाज, कोबी, बैगन, सेम आदि सब्जी की भी खेती करते हैं, जिनसे उनकी आय में वृद्धि होती है। वे पलास वृक्षों पर लाह की भी खेती करते हैं।

खरवार की लगभग 10 प्रतिशत आबादी भागलपुर, साहेबगंज, मुंगेर, कटिहार, पूर्णियाँ आदि जिलों में गंगा के दियारा क्षेत्र में फैली हुई है। भागलपुर के पीरपैंती, कहलगाँव, सोनहुला, गोपालपुर, बीहपुर प्रखंडों में साहेबगंज, कटिहार के मनिहारी और प्राणपुर प्रखंड तथा पूर्णियाँ के बनमंखी आदि प्रखंडों में खरवार जन-जाति के लोग लगभग 400 वर्षों से आकर बस गए हैं। यह दियारा क्षेत्र गंगा या उसकी अन्य सहायक नदियों की लाई हुई मिट्टी से बना है। इस क्षेत्र की मिट्टी बलुआही और रेह वाली है, इस कारण इसमें गेहूँ, मकई, चीना, अरहर, मसूरी, खेसारी, मटर, आदि है। इस क्षेत्र की खेती बाढ़ से प्रभावित होती है।

इस क्षेत्र में जंगल नाम मात्र का है और केवल झाड़ीदार जंगल मिलते हैं। इस क्षेत्र में मुख्यत: बबूल, आक, धतूरा, बनबैर, रेंड बघरेंडा आदि के वृक्ष जहाँ-तहाँ पाये जाते हैं। मुंज की घनी झाड़ियाँ दियारा क्षेत्र में काफी मिलती हैं, जिससे छप्पर छाने का काम लिया जाता है। जड़ी-बूटी या वनौषधि के रूप में इस क्षेत्र में चिरायता, सनई, अमलतास, चिरचिरी, भेंगइया, आक आदि मिलते हैं। कटिहार में सन या पटुआ की भी खेती होती है। वन्य पशुओं में खाने योग्य कोई खास पशु-पक्षी नहीं मिलते हैं। नदी में जाल लगाकर मछली मारने का भी काम वे करते हैं।

इस क्षेत्र में भी आम, कटहल, केला आदि के पौधे लगाते हैं, जिनसे उन्हें मौसमी फल मिल जाते हैं। वे साग-सब्जी में आलू, बैंगन, पियाज, कोबी, सेम, उपजाते हैं। खरवार जन-जाति के जिलों में कृषि कार्य का चक्र प्राय: समान रूप से चलता है। स्थानीय भौगोलिक कारणों एवं वर्षापात में भिन्नता आदि कारणों से कालावधि में थोड़ा-बहुत परिवर्तन होता है। फसल-चक्र को निम्नांकित टेबल के माध्यम से प्रस्तुत किया जा रहा है।

टेबुल - 18

(क) खरीफ :-

क्र.सं.	बुनने की अवधि	फसल/अनाज का नाम	काटने की अवधि
1.	2.	3.	4.
1.	जून-जुलाई	धान (गोड़ा) धान (छोटा / रोपा)	सितम्बर-अक्टूबर नवम्बर-दिसम्बर
2.	तदैव	गोंदली, मडुआ, जिनोरी, मकई, खेंडी, कौनी, चीना (भदई और अगहनी)	सितम्बर-दिसम्बर नवम्बर-दिसम्बर
3.	मई-जून	मकई, ज्वार, बाजरा	सितम्बर
4.	जून	घंघरा, मूंग, उड़द, कुरथी	अक्टूबर-दिसम्बर
(ख) रब्बी :-			
1.	जून	रहर	फरवरी-मार्च
2.	सितम्बर	रेंड़ी	मार्च-अप्रैल
3.	तदैव	सुरगुजा	दिसम्बर
4.	नवम्बर	जौ, जई, खेसारी, गेहूँ मटर, चना	फरवरी-मार्च
5.	तदैव	तीसी	अप्रैल

यह फसल-चक्र गंगा-कोसी दियारा में बाढ़ से और कैमूर, पलामू आदि जनजातीय एवं पहाड़ी क्षेत्रों में अनावृष्टि या सुखाड़ से प्रभावित होता है।

(ख) भूमि एवं भूमि वितरण :-

पूर्व में यह कहा गया है कि खरवार जिन क्षेत्रों में रहते हैं, उनमें हर दृष्टि से विविधता और भिन्नता है। उनके क्षेत्र की कृषि भूमि की बनावट एवं स्थिति भी भिन्न-भिन्न है। पूर्व के अध्याय में उनके क्षेत्र में मिलने वाली मिट्टी के प्रकार आदि का विवरण दिया जा चुका है। कैमूर और रोहतास का वह क्षेत्र जहाँ खरवार बसते हैं, वहाँ की जमीन अधिकांशतः पथरीली है। कहीं-कहीं केवाल मिट्टी वाले खेत मिलते हैं, जो अपेक्षाकृत अधिक उपजाऊ होते हैं। इन क्षेत्रों में सर्वेक्षण से यह

पता चला है कि 5 प्रतिशत परिवार ऐसे हैं, जिनके पास 5 एकड़ से अधिक जमीन है। 40 से 45 प्रतिशत के पास एकड़ से 4 एकड़ तक जमीन है। 50 प्रतिशत ऐसे परिवार हैं, जिनके पास एक एकड़ से कम जमीन है अथवा भूमिहीन हैं। कम भूमि होने या भूमिहीन होने के दो कारण हैं :-

1. कुछ लोग अपनी अधिकांश जमीन बेच दिये।

2. जो लोग बाहर से और बाद में बसे, वे कृषि-भूमि नहीं प्राप्त कर सके।

जनजातीय क्षेत्र - पलामू, गुमला, लोहरदगा आदि जगहों में जो खरवार बाद में आकर बसे हैं, उनके पास बहुत कम जमीन है अथवा भूमिहीन हैं। पलामू के खरवार काफी पहले से आकर बसे हैं और चेरो राजाओं के समय उन्हें उनकी बहादुरी और वफादारी के लिए जागीर में काफी जमीन मिली थी। परन्तु वे अपनी शाह-खर्ची और विभिन्न आन्दोलनों से जुड़ने के कारण अपनी अधिकांश कृषि-भूमि से वंचित हो गए। वर्तमान में सर्वेक्षण के अनुसार 10 प्रतिशत खरवार के पास ही 5 एकड़ या उससे अधिक जमीन है। एक एकड़ से 4 एकड़ भूमिधारियों की संख्या लगभग 50 प्रतिशत है। 40 प्रतिशत ऐसे हैं, जिनके पास एकड़ से कम जमीन है अथवा भूमिहीन हैं। यहाँ की जमीन पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण उबड़-खाबड़ और अपेक्षाकृत कम उपजाऊ है।

गंगा एवं सहायक नदियों के दियारा क्षेत्रों में अवस्थित भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार आदि क्षेत्रों की स्थिति अन्य क्षेत्रों से भिन्न है और इस क्षेत्र की कृषि-भूमि एवं उनका वितरण भी अलग प्रकार का है। यह क्षेत्र दक्षिणी गंगा के मैदान में पड़ता है, जो गंगा के दक्षिणी तट से प्रारम्भ होकर छोटानागपुर के पठार तक 33670 वर्ग कि.मी. में फैला हुआ है। यह मैदान सपाट है, परन्तु कहीं-कहीं अवस्थित पहाड़ियों की ऊँचाई 200 से 530 मीटर तक है। पूर्व में स्थित राजमहल पहाड़ी का सर्वोच्च शिखर त्रिकूट है, जो 753 मीटर ऊँचा है।

दक्षिणी गंगा के मैदान की ढाल दक्षिण से उत्तर की ओर है। गंगा के किनारे की जमीन ''टाल'' कहलाती है, जो वर्षा के दिनों में जलमग्न हो जाती है। भागलपुर का पीरपैंती, कहलगांव आदि, साहेबगंज का क्षेत्र, कटिहार के क्षेत्र आदि इसी टाल या दियारा क्षेत्र में आते हैं। इस क्षेत्र की प्रमुख विशेषताएँ हैं :-

1. यह मैदान एक रूप न होकर ऊँचा-नीचा है।

2. इस क्षेत्र में गंगा की सभी सहायक नदियाँ बरसाती हैं और बाढ़ लाने में सहायक होती हैं।

3. टीला या दियारा का पूरा क्षेत्र लगभग हर वर्ष बाढ़ग्रस्त हो जाता है।

4. यह मैदान पश्चिम और मध्य में चौड़ा और पूरब में संकीर्ण है।

5. इस क्षेत्र की समतल भूमि में जगह-जगह पहाड़ियाँ द्वीप की तरह लगती हैं।

6. इस क्षेत्र की उर्वरता बाढ़ की लाई मिट्टी पर निर्भर करती है।

इस क्षेत्र में खरवारों के बीच भूमि का वितरण काफी असमान है। लगभग 2 प्रतिशत ऐसे जोतदार हैं, जो 25 से 50 एकड़ भूमि के मालिक हैं। लगभग 15 प्रतिशत के पास 5 एकड़ या उससे अधिक (दस एकड़) तक जमीन है। 30 प्रतिशत लोगों के पास 5 एकड़ से कम जमीन है। शेष 47 प्रतिशत के पास एक एकड़ या उससे कम तथा भूमिहीन खरवार परिवारों की संख्या है। इस क्षेत्र में बाढ़ के कारण भदई फसल का होना अनिश्चित बना रहता है।

(ग) वर्षा एवं वर्षापात :

बिहार में अधिकांश भागों में कृषि वर्षा पर निर्भर है। यहाँ वर्षा पात की स्थिति विभिन्न स्थानों में भिन्न-भिन्न है। नेतरहाट के पठार पर सर्वाधिक वर्षा होती है तो कैमूर के अधौरा क्षेत्र में सबसे कम। पलामू, गुमला, लोहरदगा के पठारी क्षेत्रों में अच्छी वर्षा होती है। परन्तु पलामू के कुछ भाग ''रेनशैडो'' में पड़ते हैं, जहाँ वर्षा बहुत कम होती है। बिहार में वर्षा की तुलनात्मक स्थिति मौसम के अनुसार निम्न प्रकार है :-[1]*

टेबुल - 19

वर्षा की अवधि	1984-85 में वर्षापात	1989-90 में वर्षापात
1.	2.	3.
जून से सितम्बर	1262.01	1042.03
अक्टूबर से दिसम्बर	27.01	52.05
जनवरी से फरवरी	11.08	30.58
मार्च से मई	67.08	108.06
कुल वर्षा	1366.08	1233.01
सामान्य वर्षा	1211.07	1211.07

1 बिहार दिग्दर्शन, स्टार पब्लिकेशन, पटना, प्रो. एस. एस. सिंह (पृ. 155)

उपर्युक्त आंकड़ों के अनुसार वर्षापात की मात्रा में मौसम के अनुसार काफी अन्तर आया है। (पाँच वर्षों में)। 1997-98 के अन्तिम भाग एवं 1998-99 के प्रारंभ में लगभग इस पूरी अवधि में वर्षा होती रही है, जिससे खरीफ और रब्बी दोनों फसलों को नुकसान हुआ है। आलू और प्याज की खेती पर इसका सबसे खराब असर पड़ा है।

(घ) पशुधनः-

खरवार कृषि कार्य से जुड़े रहे हैं। अतः वे गाय और भैंस पालते हैं। इन पशुओं से उन्हें दूध प्राप्त होता है। बैलगाड़ी खींचने का काम बैल या भैंसा करते हैं। सर्वेक्षित 50 परिवारों में 20 परिवारों के पास गाय, 30 परिवारों के पास बैल (दो या एक) 25 परिवारों के पास बकरी तथा 20 परिवारों के पास मुर्गियाँ पाई गई। 20 परिवारों के घर में बत्तक और कबूतर को पालने के भी उदाहरण मिले। पहाड़ी क्षेत्रों में प्रायः कम दूध देनी वाली छोटी गायें लोग पालते हैं, जिसके रख-रखाव पर बहुत कम खर्च आता है। गायों को जंगल क्षेत्र में चरने के लिए छोड़ देते हैं। ऐसी गायें औसतन आधा लीटर से डेढ़ लीटर तक दूध देती हैं। पहाड़ी क्षेत्र में भैंस पालन कम होता है। रोहतास और कैमूर में कुछ उन्नत नस्ल की गायें और भैंसें पालते हैं उस क्षेत्र में बैल से ही खेती का काम लेते हैं। भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार आदि क्षेत्रों में भी लोग उन्नत नस्ल के मवेशी (गाय एवं भैंस पालते हैं। उन्नत नस्ल की गायें औसतन 5 लीटर से 10 लीटर तक दूध देती हैं। उन्नत नस्ल की भैंसें भी इसी प्रकार से अधिक दूध देती हैं। इन क्षेत्रों में भी बकरी और मुर्गीपालन होता है। जो भूमिहीन परिवार है, उनके पास पशुधन की कमी पाई गई।

(ङ) पेशा :

पूर्व में यह उल्लेख किया जा चुका है कि खरवार का मुख्य पेशा कृषि या कृषि कार्य से संबंधित मजदूरी है। कभी उनके पर्वज खैर वृक्ष से कत्था बनाने में काफी दक्ष थे। परन्तु अब वे उस पेशा को भूल चुके हैं। 1981 की जनगणना के आंकड़ों से भी इस कथन की पुष्टि होती है :-

टेबुल - 20
(कार्यशील जनसंख्या - 1981 जनगणना)

क्र. सं.	कर्मियों का वर्गीकरण	जिला का नाम एवं कार्यशील जनसंख्या					
		1. रोहतास		2. कटिहार		3. भागलपुर	
		पुरुष	महिला	पुरुष	महिला	पुरुष	महिला
1.	2.	3.	4.	5.	6.	7.	8.
1.	कुल योग	9543	9051	6045	5736	11500	10756
2.	कुल मुख्य कर्मी	5305	814	3056	898	5408	868
3.	कृषक	3742	383	1634	77	3198	131
4.	कृषि मजदूर	1259	386	1271	812	1853	711
5.	पशुपालन/मुर्गीपालन बागवानी वनकर्मी आदि	37	4	7	-	96	10
6.	खान कर्मी	13	6	-	-	3	-
7.	गृह उद्योग	19	3	3	4	6	2
8.	अन्य उद्योग (गृह उद्योग के अलावे)	36	10	7	-	10	-
9.	निर्माण कार्य	15	3	2	-	3	-
10.	व्यापार एवं वाणिज्य	79	5	12	1	22	1
11.	परिवहन/भंडारण/संचार	25	-	29	-	64	2
12.	अन्य सेवाएँ	82	12	91	3	153	11
13.	सीमान्त कर्मी	151	571	23	124	171	366
14.	गैर कर्मी	4087	7667	2966	4664	5920	9522
15.	काम की तलाश में उपलब्ध कर्मी	124	75	71	55	197	53

		4. संथाल परगना		5. हजारीबाग		6. पलामू	
		पुरुष	महिला	पुरुष	महिला	पुरुष	महिला
1.	2.	3.	4.	5.	6.	7.	8.
1.	कुल योग	24066	22676	1047	1018	51755	50668
2.	कुल मुख्य कर्मी	12078	1835	510	120	29658	7881
3.	कृषक	8163	775	258	33	22044	3421
4.	कृषि मजदूरी	1799	693	33	17	6421	4278
5.	पशुपालन/मुर्गीपालन बागवानी/वन आदि	10	13	31	21	357	75
6.	खान कर्मी	60	16	103	9	96	3
7.	गृह उद्योग	232	172	20	8	32	5
8.	अन्य उद्योग (गृह उद्योग के अतिरिक्त)	347	90	6	–	117	14
9.	निर्माण कार्य	28	–	3	1	83	18
10.	व्यापार एवं वाणिज्य	522	35	20	30	66	12
11.	परिवहन/भंडारन/संचार	253	1	11	1	202	15
12.	अन्य सेवाएँ	570	40	26	–	239	40
13.	सीमान्त कर्मी	600	2594	18	44	511	5094
14.	गैर कर्मी	11361	18248	519	855	23585	37693
15.	काम की खोज में उपलब्ध कर्मी	739	410	29	9	388	577

		7. राँची (गुमला, लोहरदगा)		8. गिरिडीह		9. मुंगेर	
		पुरुष	महिला	पुरुष	महिला	पुरुष	महिला
1.	2.	3.	4.	5.	6.	7.	8.
1.	कुल योग	5420	5379	534	548	767	775
2.	कुल मुख्य कर्मी	3226	878	296	42	436	200
3.	कृषक	2519	484	150	3	94	22
4.	कृषि मजदूरी	409	320	94	82	313	168
5.	पशुपालन/मुर्गीपालन/ बागवानी/वनकर्मी आदि	74	23	3	–	3	–
6.	खान कर्मी	71	1	40	7	–	–
7.	गृह उद्योग	28	34	–	–	11	8
8.	अन्य उद्योग/गृह उद्योग के अलावे)	26	1	–	–	7	–
9.	निर्माण कार्य	8	–	–	–	–	–
10.	व्यापार एवं वाणिज्य	16	–	–	–	3	–
11.	परिवहन/भंडार/संचार	14	–	–	–	2	–
12.	अन्य सेवाएँ	51	9	8	–	3	2
13.	सीमान्त कर्मी	68	1132	15	34	16	81
14.	गैर कर्मी	2126	3368	223	472	314	493
15.	काम की तलाश में उपलब्ध कर्मी	53	52	14	12	17	16

भारत सरकार द्वारा कराई गई जनगणना की जिलावर कार्यशील जनसंख्या (खरवार) से भी यह स्पष्ट होता है कि अधिकांश लोग कृषि-कार्य एवं मजदूरी में ही कार्यरत हैं। जिन क्षेत्रों में कोयला, बाक्साइड आदि की खानें हैं, वहाँ कुछ लोग उन खानों में कार्यरत हैं और जिनकी संख्या काफी कम है। अब कुछ पढ़े-लिखे

खरवार विभिन्न प्रकार के सरकारी एवं गैर-सरकारी सेवाओं में कार्यरत हैं। कुछ लोग लघु उद्योग, व्यापार आदि में भी कार्यरत हैं। पेशा संबंधी सर्वेक्षण के क्रम में यह ज्ञात हुआ कि भागलपुर और साहिबगंज आदि क्षेत्रों के कई लोग उच्च पदों में कार्यरत हैं। उनमें से कतिपय खरवार जनजाति के पदाधिकारियों की सूची उदाहरण स्वरूप अवलोकनीय है :-

1.	श्री कृष्ण प्रसाद मंडल	- मौल टोला, वर्तमान आपूर्व आ.को., भागलपुर	- (भा.प्र.से.) पीरपैंती
2.	श्री कमलेश्वरी मंडल	- पीरपैंती, भागलपुर	- भारतीय राजस्व सेवा
3.	श्री मनोहर सिंह	- पीरपैंती, भागलपुर	- भारतीय आरक्षी सेवा
4.	श्री वासुदेव सिंह	- पटना टोला, साहेबगंज	- बिहार प्रशासनिक सेवा
5.	श्री दीनानाथ मंडल	- खवासपुर भागलपुर	- तदैव
6.	श्री अम्बिका प्र. सिंह	- भागलपुर	- पूर्व विधायक, महाप्रबन्धक, उद्योग विभाग
7.	डा. ए. पी. सिंह	- भागलपुर	- अधीक्षक, आर.एम.सी. एच. राँची।
8.	श्री अरविन्द कु. सिंह	- बड़ा कोदरजना, साहेबगंज	- कार्यपालक अभियन्ता, (लोक निर्माण विभाग)

इसके अतिरिक्त 10 अभियन्ता, 10 चिकित्सक और उच्च विद्यालयों में 10 व्यक्ति शिक्षक के रूप में कार्यरत हैं। कई चिकित्सक एवं अभियन्ता बेरोजगार भी हैं, जिनका नियोजन अभी तक नहीं हो सका है।

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि खरवार जन-जाति के पेशा में भी विविधता आ रही है।

(च) पारिश्रमिक की दरें :

सर्वेक्षण के क्रम में यह ज्ञात हुआ कि अलग-अलग क्षेत्रों में कुशल एवं अकुशल मजदूर के लिए अलग-अलग मजदूरी की दरें प्रचलित हैं। दरों में एकरूपता नहीं है। पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं को कम मजदूरी दी जाती है। विभिन्न क्षेत्रों में निम्नांकित मजदूरी की दरें प्रचलित हैं :-

टेबुल - 21

क्र. स.	क्षेत्र	प्रतिदिन मजदूरी (ग्रामीण क्षेत्र)		प्रति दिन मजदूरी (शहरी क्षेत्र)	
		पुरुष	महिला	पुरुष	महिला
1.	2.	3.	4.	5.	6.
अकुशल मजदूर					
1.	पलामू, गुमला आदि	30/- से 40/- रु.	20/- से 25/- रु.	50/-	40/-
2.	कैमूर, रोहतास	40/- से 45/- रु.	25/-से 30/- रु.	50/-	35- से 40/-
3.	भागलपुर, साहेबगंज आदि	30/- से 35/- रु.	15/- से 20/- रु.	45/- से 50/-	35/-से 40/-
कुशल श्रमिक (राज मिस्त्री)					
4.	सभी स्थानों में -	60/- से	70/- -	80/- से	90/- रु. -

देहाती क्षेत्रों में और कहीं-कहीं शहरी क्षेत्रों में भी न्यूनतम मजदूरी (सरकार द्वारा निर्धारित) से भी कम मजदूरी का भुगतान किया जाता है। सूचनानुसार अभी तक न्यूनतम मजदूरी की दर (अकुशल श्रमिक के लिए) 39.70 पै. देने का प्रावधान है। परन्तु इसका अनुपालन सभी जगहों पर नहीं हो पाता।

भागलपुर, साहेबगंज आदि क्षेत्रों में धान या गेहूँ की कटनी के समय श्रमिकों को फसल के अनाज के रूप में मजदूरी दी जाती है। इसके लिए भी अलग-अलग दरें प्रचलित हैं :-

1. फसल के 16 बोझों में एक बोझा पारिश्रमिक।
2. फसल के 12 बोझा में एक बोझा पारिश्रमिक।
3. 8 मन अनाज में एक मन मजदूरी - फसल को काट, पीट और घर तक पहुँचा देने पर।

कुछ श्रमिक खेती का काम ''बटाई'' या ''अधबटाई'' पर करते हैं। बटाईदार श्रमिक जमीन मालिक से बीज, आदि लेकर अपने परिश्रम से खेती करता है। इसके एवज में उसे फसल का या उपज का आधा भाग मिलता है।

जो मजदूर राज्य से बाहर उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, आसाम आदि राज्यों में जाकर चाय बागान, ईंट भट्टा, खेती आदि में काम करते हैं, उनको कुछ अधिक मजदूरी मिलती है। परन्तु उन्हें अपेक्षाकृत काम अधिक करना पड़ता है। सर्वेक्षण के क्रम में यह ज्ञात हुआ कि 90 प्रतिशत मजदूर असंगठित हैं, जिनमें अधिकांशतः कृषि श्रमिक हैं। केवल 10 प्रतिशत ही ऐसे हैं, जो अपने कार्य के विशेषज्ञ हैं और उचित मजदूरी पाते हैं। असंगठित होने के कारण उनका शोषण निम्न प्रकार होता है :-

1. बिचौलिया द्वारा जो उन्हें मजदूरी के लिए ले जाते हैं।
2. ठीकेदार द्वारा उनसे अधिक से अधिक काम लेकर मजदूरी कम दी जाती है।
3. ठीकेदार के मुंशी द्वारा, जो उनसे काम करवाता है और कम भुगतान देता है।
4. महिला मजदूरों का यौन-शोषण ठीकेदारों द्वारा किया जाता है।
5. महिला मजदूरों का शोषण उनके पतियों द्वारा भी किया जाता है जो उनकी आय का बड़ा भाग शराब आदि पीने में उड़ा देते हैं।

उनके शोषण के मुख्य कारण हैं :-

1. उनका अशिक्षित होना।
2. उनमें संगठन की कमी।
3. काम के अवसर की कमी
4. निम्नतम मजदूरी लागू करने वाली एजेन्सियों में इच्छा-शक्ति की कमी और नियोजक के साथ मिली-भगत।
5. ऐसे स्वयंसेवी संगठनों की कमी, जो मजदूरों को जागरूक कर उनको उचित मजदूरी दिलवायें।
6. सामाजिक सुरक्षा एवं कल्याण से संबंधित कल्याणकारी योजनाओं की कमी (पलना, घर, अल्प कालीन विश्राम गृह की व्यवस्था आदि)।
7. उनके कार्य स्थल एवं आवास का अस्वास्थ्यकर होना।

सर्वेक्षण से पता चला कि अब खरवार जन-जाति में कोई भी "बंधुआ मजदूर" के रूप में कार्यरत नहीं है। कुछ वर्षों पहले पलामू में बंधुआ मजदूर की प्रथा बहुत अधिक प्रचलित थी। परन्तु बंधुआ मजदूर उन्मूलन से संबंधित अधिनियम के लागू होने और लोगों में आई जागरूकता के कारण यह कुप्रथा अब समाप्त हो चुकी है।

(छ) ऋणग्रस्तता :

ऋणग्रस्तता खरवार जन-जाति में कम पाई जाती है। ऋण लेना वे अपनी बेइज्जती समझते हैं। पूर्व में पलामू तथा अन्य कई पिछड़े इलाकों में बनिया या महाजन बहुत अधिक दर पर सूद लेकर कर्ज देते थे। उस सूद की दर को वे लोग ''डेढ़ी-बाढ़ी'' कहते थे। अर्थात् 100/- का सूद एक वर्ष में 50/- रु. होता था। अगर कर्ज लेने वाला उस 150/- रुपये को एक वर्ष पूरा होने पर नहीं वापस करता तो दूसरे वर्ष उसे 150/- पर सूद देना पड़ता था। परन्तु अब यह परम्परा समाप्त हो चुकी है। खरवार कर्ज लेने की अपेक्षा मेहनत-मजदूरी कर के ही अपना काम चला लेते हैं। 50 परिवारों के सर्वेक्षण में केवल 8 परिवार ही कर्जदार मिले। कुछ लोगों ने बताया कि उनके पुरखा पहले जागीरदार और बड़े-बड़े जोतदार थे। उस समय वे दूसरे को कर्ज दिया करते थे। परन्तु बाद में विभिन्न कारणों से जगह-जमीन के घट जाने से उनकी आर्थिक हालत खराब हो गई। फिर भी वे शादी या श्राद्ध के लिए किसी से कर्ज लेना उचित नहीं समझते। बिना तिलक-दहेज की शादी के प्रचलन के कारण भी उन्हें कर्ज लेना नहीं पड़ता। खेती आदि के समय या अन्य अवसरों पर वे अपने से या पड़ोसियों से कुछ बीज या नगद राशि बिना सूद के ले लेते हैं, जिसे वे ''हंथपइंच'' कहते हैं। बाद में वे उसे यथासमय लौटा देते हैं।

ऋण मिलने में ही होने वाली कठिनाइयों के संबंध में पता चला कि कई बार कुछ लोगों को कर्ज लेने की आवश्यकता पड़ी। परन्तु ''लालफीताशाही'' और ''बिचौलिया'' (दलाल) के कारण वे कर्ज नहीं ले सके। इधर सहकारी एवं भूमि विकास बैंक से ऋण देने का कार्य प्रायः उन लोगों के क्षेत्र में नही हुआ है और यह कई कारणों से लोकप्रिय भी नहीं है। भागलपुर आदि क्षेत्रों में कई शिक्षित बेरोजगार युवक अपना व्यवसाय करने के इच्छुक मिले। परन्त प्रधान मंत्री रोजगार योजना के अन्तर्गत मिलने वाले कर्ज की जटिल प्रक्रिया के कारण वे इस योजना का लाभ नहीं ले सके।

यह भी पता चला कि कुछ साहूकार सोने या चांदी के गहना बंधक रखकर अधिक ब्याज पर रुपया देते हैं। समय-सीमा के भीतर ब्याज सहित रुपया नहीं लौटाने पर गहना अपने पास रख लेते हैं। यह कार्य काफी गोपनीय ढंग से किया जाता है, क्योंकि खरवार इस ''बंधक'' को अपनी प्रतिष्ठा की बात समझते हैं और किसी को बताते नहीं हैं। उनका यह भी लोक-विश्वास है कि कर्ज लेकर यदि कोई वापस नहीं करता तो अगले जन्म में वह "बेंग'' (मेंढक) के रूप में जन्म लेता है और कर्ज देने वाला सर्प में। उस जन्म में वह सांप अपने पूर्व जन्म के कर्ज को उस बेंग को खाकर वसूल लेता है।

(ज) हाट-बाजार :

अन्य जनजातियों की तरह खरवार भी अपनी जरूरत की चीजों को खरीदने और अपने कृषि या अन्य उत्पादों को बेचने के लिए निकटवर्ती साप्ताहिक हाटों में जाते हैं। पहाड़ों और जनजातीय क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को साप्ताहिक हाट के लिए 5 से 10 कि.मी. तक पैदल जाना पड़ता है। ग्रामीण या जनजातीय हाट उत्सव जैसा माहौल पैदा करता है। आर्थिक कार्यों के अलावा सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से भी इन हाटों का अपना विशिष्ट स्थान है। अगर किसी को एक रुपये का नमक या दो रुपये का किरासन तेल भी खरीदना होगा तो हाट अवश्य जायेगा। हाट में पुरुषों से अधिक महिलाएँ जनजातीय क्षेत्र में नजर आती हैं। युवा-वर्ग एवं बच्चों के लिए यह ''मेरी मेकिंग'' का माध्यम बनता है। ऐसे हाटों के मुख्य कार्यों को निम्न प्रकार समझा जा सकता है:-

(क) आर्थिक कार्य :

1. कृषि या वनोत्पादित वस्तुओं/फलों आदि की खरीद-बिक्री।
2. हाट से सप्ताह भर के लिए आवश्यक वस्तुएँ - किरासन तेल, नमक, साबुन आदि को खरीद कर लाना।
3. कृषि कार्य हेतु पशुओं (बैल आदि) की खरीद-बिक्री।
4. पालतु पशु-पक्षी - भेड़, बकरी, मुर्गा, बत्तख, कबूतर आदि की खरीद-बिक्री।
5. जंगल में फंसाये गए मोर, तीतर, बन्दर, खरगोश आदि का व्यापार।
6. घर के लिए बर्तन, कपड़ा, तेल, मसाला आदि का क्रय।
7. स्थानीय कारीगरों द्वारा बनाया गया खाट, मचिया, ओखल-मूसल, सील लोढ़ा, रस्सी, सींका आदि का क्रय-विक्रय।
8. विभिन्न उत्पादों - गोंदली, महुआ, सुरगुजिया, पियार आदि की अदला-बदली(बार्टर)।
9. अन्य प्रकार के व्यापारिक कार्य तथा लेन-देन।।

इन हाटों में माप-तौल के कई तरीके प्रचलित हैं। अनाज - दलहन, तेलहन आदि के लिए पीतल, कांसा, अल्मुनियम या लकड़ी का बना ''पैला'' व्यवहार में लाते हैं। पैला का माप एक सेर, आधा सेर और एक पाव का होता है, जिसे ''कच्चा माप'' कहते हैं। इस पैला का निर्माण मलार जाति के लोग करते हैं। इसके अलावा किलोग्राम के बाट भी प्रयोग में लाये जाते हैं। कहीं-कहीं पत्थर का बटखरा भी

काम में लाते हैं। बाट में मौसमी फल - आम, पपीता, कटहल आदि की बिक्री लोग थोक के भाव में टोकरी के हिसाब से करते हैं, जिसमें उन्हें मुनाफा बहुत मिलता है। अभी भी सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों को, विशेषकर महिलाओं को किलोग्राम बटखरा की पूरी जानकारी नहीं हो सकी है और इस कारण व्यापारी उनकी अज्ञानता का नाजायज फायदा उठाते हैं। अदला-बदली में ग्रामीण अधिकांशत: नमक लेते हैं। देहाती हाटों में सबसे महंगा किरासन तेल बिकता है।

जनजातीय समुदाय द्वारा कृषि-उत्पाद (दलहन, तेलहन आदि) तथा लघु वन-उत्पादों (महुआ, इमली, डोरी, कुसुम, करंज आदि) को उचित मूल्य पर खरीदने और उन्हें बिचौलियों के शोषण से बचाने के लिए सरकार द्वारा आदिवासी सहकारिता विकास निगम लि. की स्थापना की गई है, जिसका मुख्यालय राँची है। परन्तु यह निगम अपने इस उद्देश्य को साकार करने में कई कारणों से असफल रहा है, जैसा कि इसके अनुश्रवण और मूल्यांकन से पता चला है।

(ख) सामाजिक कार्य :- ग्रामीण क्षेत्रों या निकटवर्ती कस्बाई शहरों में लगने वाले साप्ताहिक हाटों का अपना सामाजिक महत्त्व कम नहीं है। इन हाटों में विभिन्न गाँवों से लोग आकर संबंधियों से मिलते हैं और उनका कुशल-मंगल जान पाते हैं। नव विवाहिता लड़कियाँ अपने माता-पिता, भाई-बहन, सखी-सहेली आदि से इन्हीं हाटों में मिल लेती हैं और प्रथम मुलाकात में कभी-कभी हाट में माँ-बेटी का गले मिलकर रोने का करुण दृश्य भी उपस्थित हो जाता है।

हाटों में युवा लड़के-लड़कियों का प्रेम-प्रसंग भी परवान चढ़ता है। लड़कियाँ सज-सँवरकर हाट में अपने प्रेमी से मिलने आती हैं। खरवार जनजाति में विवाह पूर्व प्रेम-प्रसंग उतना अधिक प्रचलित नहीं है। विवाह योग्य लड़के-लड़कियों के सम्बन्ध में सूचनाओं का आदान-प्रदान एवं देखा-देखी का कार्य भी इन हाटों में सम्पन्न हो जाता है।

ये हाट जनजातीय समुदाय के साथ-साथ अन्य समुदाय के लिए भी सामाजिक मंच का काम करते हैं। कभी-कभी हाट के दिन उसके निकट में किसी समुदाय या जाति की पंचायत का आयोजन किया जाता है।

इन हाटों के माध्यम से कुछ सामाजिक बुराइयाँ भी फैलती हैं। किसी-किसी हाट में ''मुर्गा लड़ाई'' के माध्यम से जुआ खेला जाता है, जिसके कारण कुछ लोग अपनी गाढ़ी कमाई का पैसा हार जाते हैं। किसी-किसी हाट में अवैध शराब की बिक्री धड़ल्ले से होती है। ''हंड़िया'' या चावल की शराब की बिक्री इन हाटों की आम बात है। नशे की हालत में कभी-कभी लोग गम्भीर अपराध कर बैठते हैं।

(ग) सांस्कृतिक कार्य :- हाट ग्रामीण जीवन का विशेषकर जनजातीय जीवन की सांस्कृतिक चेतना का प्रतीक है और उनके सांस्कृतिक जीवन की निरन्तरता को बनाये रखने में सहायक होता है। जनजातीय परम्परा के वेष-भूषा, केश विन्यास, आभूषण, विभिन्न प्रकार की जनजातीय बोलियों आदि की विविधता इन हाटों में देखने को मिलती है। मान्दर और नगाड़े के ताल पर कहीं-कहीं लोग नाचते-गाते नजर आते हैं। विशेषकर पर्व या जतरा मेला के समय लगने वाले हाटों में इस तरह सांस्कृतिक कार्यक्रम स्वतः आयोजित हो जाते हैं।

जनजातीय संगीत या लोग संगीत के विभिन्न प्रकार के वाद्य यंत्र - ढोल, मान्दर, नगाड़ा, खंजड़ी, करताल, झांझ आदि इन हाटों में ही बिकते हैं। खरवार तथा अन्य जन-जाति की लड़कियाँ इन्हीं हाटों में जाकर गोदना (टैटू मार्क) गोदवाती हैं और नाक-कान भी छिदवाती हैं। लोग किसी सघन वृक्ष के नीचे हंड़िया पीकर सुस्ताते हैं और अपना सुख-दुख बाँटते नजर आते हैं। लोक संस्कृति का विराट और विविध रूप इन हाटों में अनायास ही देखने को मिल जाता है। ''खाआ-पीओ और आज में जीओ'' का जनजातीय जीवन-दर्शन का मूर्त रूप इन हाटों मे साकार हो जाता है।

पर्व-त्योहार के दिनों का निर्धारण और निमंत्रण का आदान-प्रदान भी इन हाटों के माध्यम से हो जाता है। अब इन हाटों में आधुनिक संस्कृति के भी दर्शन हो जाते हैं। बहुत से युवक एवं युवतियां. आधुनिक वेष-भूषा में भी नजर आती हैं।

(झ) पारिस्थितिकी एवं खरवार :

पारिस्थितिकी का निर्माण पर्यावरण और प्रकृति के विभिन्न भौतिक और अभौतिक तत्वों से होता है। पारिस्थितिकी के संतुलन पर ही सृष्टि के समस्त जीवधारी, वनस्पति आदि का विकास एवं संरक्षण निर्भर करता है। यह न केवल मानव के भौतिक विकास में सहायक होती है, वरन उसके आन्तरिक जीवन और संस्कृति को भी प्रभावित करती है।

पारिस्थितिकी के संबंध में एल्मर एस. मिल्लर और चार्ल्स ए, विग ने कहा है ''पारिस्थितिकी का अध्ययन सभी प्रकार के सजीव एवं निर्जीव, दृश्यमान एवं अदृश्य तत्वों के पारस्परिक संबंधों का अध्ययन है। इस विज्ञान की छत्रछाया में पर्यावरण-विज्ञान, जीव-विज्ञान, समाज-विज्ञान एवं विकास के सिद्धान्तों का सम्मिलित अध्ययन संभव हो सका है। ''

पर्यावरण में व्याप्त एवं फैले पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, जीव-जन्तु के साथ-साथ ताप, सूर्य किरण, हवा, वर्षा आदि का भी पारिस्थितिकी के निर्माण में महत्त्वपूर्ण

योगदान रहता है। पारिस्थितिकी के अनुरूप ही मनुष्य अपने जीवन को ढाल लेता है। उसी के अनुरूप वह अपना रहन-सहन, गृह-निर्माण, कृषि-कार्य, सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन सुनिश्चित करता है। वह अपने रहन-सहन के माध्यम से अपनी पारिस्थितिकी को भी अपने अनुकूल बनाने का प्रयास करता है।

पारिस्थितिकी की स्थिति भी स्थिर नहीं रहती है और पर्यावरण के प्रतिकूल या अनुकूल होने पर उसमें यथेष्ट परिवर्तन होता रहता है। खरवार जन-जाति के लोग पहले कैमूर पहाड़ी पर ही आये थे और बाद में छोटानागपुर के पठारी और सघन वनाच्छादित क्षेत्र में आकर बस गये। उस समय कैमूर पहाड और छोटानागपुर का वह क्षेत्र घने जंगलों, अनेक प्रकार के वृक्षों और वन्य पशुओं से भरा हुआ था। उस समय वे कृषि के साथ-साथ शिकारी जीवन से भी जुड़े हुए थे। उनका आवास क्षेत्र दुरूह होते हुए भी सुरक्षित था। वहाँ के जंगल और जमीन पर उनका एक छत्र राज्य था। वे कृषि-कार्य के साथ-साथ पलामू में चेरो राजाओं के आगमन के बाद दुर्धर्ष सैनिक के रूप में भी अपनी पहचान बना लिए। उन्हें काफी जमीन जागीर में भी मिली। काल-क्रमानुसार जंगल कटते गए और वन से प्राप्त होने वाला संसाधनों का अभाव होता गया। वनों के कटने से पर्यावरण में भी आमूल-चूल परिवर्तन हुआ और उनकी पारिस्थितिकी पर इसका बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ा। वनों के कटने से रोहतास (कैमूर) और पलामू का अधिकांश भाग सूखे के चपेट में आता गया और खरवारों की आर्थिक स्थिति सूखे और अकाल के कारण खराब होती गई। उनके क्षेत्रों में खदानों के उत्खनन से भी उनका पर्यावरण खराब हुआ है। वर्तमान में उनके क्षेत्र में वनों का प्रतिशत काफी कम हो गया है।

पारिस्थितिकी को संतुलित रखने के लिए कुल क्षेत्रफल के 33 प्रतिशत भूमि में वनों का होना आवश्यक है। परन्तु पलामू (गढ़वा सहित) को छोड़कर अन्य किसी भी जिला में 33 प्रतिशत जमीन पर वन नहीं रह गए हैं। पर्यावरण और पारिस्थितिकी के असंतुलित होने का यह मुख्य कारण है। वनों के कटने से वर्षापात में आनुपातिक रूप से कमी आई है और मिट्टी का क्षरण (कटाव) बढ़ा है। इससे कृषि उत्पादन में कमी आई है। वनों से मिलने वाले फल-फूल, कन्द-मूल, पशु-पक्षी आदि की उपलब्धता में भी काफी कमी आई है, जिसके कारण खरवारों की आर्थिक स्थिति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। भागलपुर आदि क्षेत्रों के सर्वेक्षण के क्रम में यह ज्ञात हुआ कि गंगा पर फरक्का बराज के बन जाने से उस क्षेत्र का लगभग 400 वर्ग कि. मी. क्षेत्र बाढ़ से प्रभावित होने लगा है। इस कारण उस क्षेत्र की पारिस्थितिकी बिल्कुल बदल गई है अथवा बिगड़ गई है।

अतः पारिस्थितिकी में सुधार के लिए वनों का संरक्षण और वनरोपण के माध्यम से उनका विस्तार आवश्यक है। साथ ही खदानों में होने वाले पर्यावरण प्रदूषण को रोकना भी आवश्यक है। पर्यावरण और पारिस्थितिकी के संरक्षण एवं विकास से खरवार जन-जाति के क्षेत्र को बाढ़ और सुखाड़ से बचाया जा सकता है और उनका आर्थिक विकास सुनिश्चित किया जा सकता है।

(ट) भौतिक संस्कृति :

खरवार जन-जाति की अपनी पुरानी या आदिम संस्कृति अक्षुण्ण नहीं रही है। इस कारण उनकी भौतिक संस्कृति भी प्रभावित हुई है। उनका वर्तमान आवास-क्षेत्र बहुजनजातीय या बहुजातीय क्षेत्र बन गया है, जहाँ विभिन्न संस्कृतियों का संगम बन गया है। अब उनकी अपनी कोई मौलिक संस्कृति शेष नहीं बची है और इस प्रकार वे जिन लोगों के बीच बस गए हैं, उनकी संस्कृति और कला को अपना लिए हैं।

ग्राम्य सर्वेक्षण के क्रम में पाया गया कि उनके आस-पास उच्च जाति के ब्राह्मण, भूमिहार, राजपूत आदि काफी संख्या मी बस गए हैं। उसी प्रकार जन-जाति समुदाय के मुंडा, उराँव, बिरजिया, संथाल, बिरहोर आदि की जनसंख्या उनके क्षेत्र में काफी है। उन लोगों की पारम्परिक कला और संस्कृति को खरवार भी अपना चुके हैं, जिसके उदाहरण उनके पर्व-त्योहार, शादी-विवाह, श्राद्ध आदि के अवसरों पर देखने को मिलते हैं।

संस्कृति के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने मत व्यक्त किये हैं। पिडिंग्टन के अनुसार - ''संस्कृति उन भौतिकी तथा बौद्धिक साधनों या उपकरणों का सम्पूर्ण योग है, जिनके द्वारा मानव अपनी प्राणिशास्त्रीय तथा सामाजिक आवश्यकताओं की संतुष्टि तथा अपने पर्यावरण से अनुकूलन करता है।'' [1]*

श्री विडने के अनुसार - ''संस्कृति कृषि-संबंधी तथ्यों, प्राविधिक तथ्यों, सामाजिक तथ्यों तथा मानसिक तथ्यों की उपज है। दूसरे शब्दों में संस्कृति में कृषि कला, प्रौद्योगिकी, सामाजिक संगठन, भाषा, धर्म, कला आदि का समावेश रहता है।[2]

उपर्युक्त विद्वानों के विचारों के आधार पर संस्कृति के दो भाग या रूप हो जाते हैं - भौतिक और अभौतिक। भौतिक संस्कृति के अन्तर्गत आवास गृह, कृषि

---

1 ऐन इन्ट्रोडक्शन टू सोशल एन्थ्रोपोलॉजी, राल्फ पिडिंग्टन, ओलिवर एन्ड ब्याड, लन्दन, 1952 (पृ.-3 एवं 4)

2 सामाजिक मानव शास्त्र की रूप रेखा, डा. आर. एन. मुखर्जी, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली, 1995 (पृ. 96/117)

उपकरण, अन्य औजार तथा उपकरण, बर्तन, आभूषण, वस्त्र आदि आ जाते हैं। अभौतिक संस्कृति के अन्तर्गत विभिन्न प्रथाएँ एवं परम्पराएँ, कला, धर्म, भाषा आदि आ जाते हैं।

प्रत्येक संस्कृति में संतुलन एवं संगठन होता है, जो कई तत्वों से मिलकर बनता है। उनमें प्रमुख तत्व है - 1. सांस्कृतिक तत्व 2. संस्कृति संकुल 3. संस्कृति प्रतिमान 4. सांस्कृतिक क्षेत्र। इन सभी को मिलाकर किसी जन-जाति की संस्कृति अपनी विशिष्ट पहचान बनाती है। परन्तु इन सभी तत्वों पर स्थान, परिस्थिति, वातावरण, या पर्यावरण और मानव-समूह का प्रभाव पड़ता है, जिसके फलस्वरूप उसके मूल स्वरूप में परिवर्तन और परिवर्द्धन होता रहता है।

इस दृष्टि से खरवार जन-जाति की भौतिक और अभौतिक संस्कृति दोनों प्रभावित हुई है। वे जब आदिम अवस्था में कैमूर की पहाड़ियों में रह रहे थे तो झोपड़ियाँ उनके घर थीं, अधोवस्त्र ही उनके मुख्य वस्त्र थे, तीर-धनुष उनके मुख्य अस्त्र-शस्त्र थे और पशु-पक्षी, कन्द-मूल, फल-फूल आदि उनके मुख्य भोजन थे। बाद में जब खरवार चेरो राजाओं के सम्पर्क में आये (पलामू में), तो छोट-छोटे जागीर के मालिक बन गए और सम्पन्नता का जीवन जीने लगे। उस समय उनकी आर्थिक-स्थिति काफी सुदृढ़ थी। परन्तु कालक्रमानुसार वे अपनी शाहखर्ची, विद्रोह और आव्रजन या विस्थापन के कारण अपनी जमीन और सम्पत्ति से वंचित होते गए। वर्तमान समय में उनकी आर्थिक-स्थिति भौतिक-संस्कृति के दृष्टिकोण से अलग-अलग क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न है। कैमूर और रोहतास में अधिकांश लोग भूमिहीन हो गए और उनकी आर्थिक-स्थिति खराब है। उनकी जमीन खरीद कर दूसरी जाति के लोग सम्पन्न हो गए। पलामू, गुमला, लोहरदगा आदि क्षेत्रों में भी लोगों की आर्थिक-स्थिति काफी खराब है। कुछ ही लोग हैं, जिनके पास अपने भरण-पोषण के लिए पर्याप्त जमीन है। शेष लोग कृषि के साथ-साथ मजदूरी कर अपना भरण-पोषण करते हैं। जो लोग भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार आदि स्थानों में गंगा की घाटी या दियारा क्षेत्र में बस गए, उनमें से कुछ लोगों के पास काफी जमीन है। परन्तु अधिकांश लोग सीमान्त कृषक एवं भूमिहीन हैं। बाढ़ के कारण भी उनकी भौतिक-संस्कृति एवं आर्थिक-स्थिति प्रभावित हुई है।

(ठ) कला एवं शिल्प :

कला एवं शिल्प की दृष्टि से खरवार जन-जाति की अपनी कोई जनजातीय विशिष्टता नजर नहीं आती है। खरवार को विद्वानों ने संथाल जन-जाति की मूल प्रजाति माना है। परन्तु संथालों में जो चित्रकला, भवन-निर्माण की वास्तु-कला आदि

देखने को मिलती है, उसका खरवारों में नितान्त अभाव है। संथाल में अभी भी उनकी चित्र कला, भाषा, धार्मिक विनती आदि में सिन्धु घाटी सम्यता एवं संस्कृति के अवशेष मिलते हैं। परन्तु खरवार अपनी पुरानी विरासत को प्रायः भूल चुके हैं। वे अपने को ''सूर्यवंशी राजपूत'' मानकर अपनी जनजातीय पहचान खो चुके हैं। कहीं-कहीं शादी-विवाह के अवसर पर उनके घर के बाहर दीवाल पर कुछ भीत्ति-चित्र देखने को मिलते हैं, जिनमें घोड़ा, पक्षी, फूल आदि के चित्र विभिन्न रंगों से बने रहते हैं। अब वे स्थानीय कला-शिल्प से ही अधिक प्रभावित लगते हैं। रोहतास आदि में सिरकी को रंग कर उनकी स्त्रियाँ सुपली, मौनी, डाली आदि बनाती हैं। पलामू आदि में उनकी स्त्रियाँ खजूर के पत्ते से चटाई बनाती हैं, कुछ लोग लकड़ी के उपस्कर - मचिया, पीढ़ा चौकी, खाट, कृषि-कार्य के लिए हल, जुआठ आदि बनाते हैं। वे मुंज की रस्सी बनाकर खाट भी बीन लेते हैं। उनकी स्त्रियाँ पुराने कपड़े से रंगीन धागों द्वारा फूल आदि बनाकर बिछाने के लिए लेदरा या खेंदरा बनाती हैं।

(ङ) वस्त्र :

खरवार पुरुष सामान्यतः धोती, गंजी, कुरता या कमीज और पगड़ी या चादर वस्त्र के रूप में धारण करते हैं। वे सादे चादर की पगड़ी बांधते हैं। अपने कंधे पर एक गमछा या तौलिया अवश्य रखते हैं। अब पढ़े-लिखे और आधुनिक युवक फुलपैंट, कमीज, बुशर्ट, टी शर्ट, सफारी आदि भी पहनते हैं। छोटे लड़के हाफ पैंट, जंघिया, कच्छा, भगई आदि पहनते हैं। वे भी कमीज या गंजी पहनते हैं। जनजातीय एवं अन्य पिछड़े और गरीब क्षेत्रों में अधिकांश छोटे लड़के-लड़कियाँ नग्न या अर्द्ध-नग्न देखे जाते हैं। कुछ लोग, जो राजनीति से जुड़े हुए हैं, धोती और कुर्ता या कमीज के साथ जवाहर बंडी भी पहनते हैं।

महिलाएँ अधिकतर साड़ी, झूला या ब्लाउज, कंचुकी या चोली, साया या तहबन पहनती हैं। अब वे सूती और सिंथेटिक दोनों तरह के कपड़े पहनती हैं। विधवा होने पर खरवार महिलाएँ रंगीन वस्त्र न पहन कर सफेद वस्त्र ही पहनती हैं। कम आयु की लड़कियाँ पैंट, फ्राक, सलवार, समीज, ओढ़नी आदि पहनती हैं। जो लड़कियाँ विद्यालय में पढ़ती हैं, वे उस विद्यालय द्वारा प्रस्वीकृत गणवेश भी पहनती हैं। इनमें अभी पुरानी परम्परा के अनुसार महिलाएँ साड़ी का आंचल अपने सिर पर रखती हैं और बड़े-बूढ़ों के सामने घूंघट काढ़ती हैं। जो परिवार गरीब और विपन्न हैं, वहाँ लोग कम कपड़े फटे-पुराने कपड़ा पहन कर ही काम चलाते हैं। वैसे लोग घर पर बहुत कम कपड़ा पहन कर रहते हैं। जनजातीय और ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकांश लोग हाटों से कपड़े खरीदते हैं।

(ढ) आभूषण :

खरवार में आभूषण का प्रचलन काफी पहले से है। आभूषण केवल महिलाएं ही नहीं, खरवार पुरुष भी धारण करते थे, जैसा कि सर्वेक्षण में पता चला। कई पुरुषों के कान छिदे मिले, जिसमें वे पहले चांदी या सोने के कुंडल पहनते थे। लडकों के हाथ में चांदी का बाला पहनाया जाता था, जिसे रोहतास क्षेत्र में ''बेरा'' कहा जाता था। भागलपुर क्षेत्र में पुरुष गले में सोना या चांदी का लॉकेट पहनते थे, जिसे ''धुकधुकी'' कहा जाता था। परन्तु पुरुषों द्वारा अब किसी प्रकार के आभूषण पहनने का कोई उदाहरण नहीं मिला।

जब खरवार सम्पन्न थे, तब उनकी स्त्रियाँ अधिकांशत: सोना अथवा चांदी का आभूषण पहनती थीं। अभी भी जो लोग सम्पन्न हैं, उनकी स्त्रियाँ कम या अधिक सोना या चाँदी का गहना पहनती हैं। परन्तु मुंडा, हो, संथाल आदि की तरह खरवार महिलाएं गहने का उतना अधिक शौक नहीं रखतीं। इसका एक प्रमुख कारण आर्थिक विपन्नता है। साथ ही खरवार जनजाति में लड़कियों के लिए ''गोनोङ'' या वधु-मूल्य लेने की परम्परा नहीं हैं। अत: वर-पक्ष या कन्या के माता-पिता ही अपनी क्षमता के अनुसार कुछ गहने शादी में देते हैं। वह भी कोई बाध्यता नहीं हैं। गरीब लोग तो गिलट के गहने से ही संतोष कर लेते हैं।

सर्वेक्षण में विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न अंगों में धारण करने वाले गहनों के नाम आदि निम्न प्रकार पाये गए :

टेबुल - 22

क्र.सं.	गहना का नाम	किस धातु का	कहाँ धारण किया	किस क्षेत्र का
1.	2.	3.	4.	5.
1.	जूड़ा पीन	लोहा, चांदी	केश में	सभी क्षेत्रों में
2.	बाल किलिप	तदैव	तदैव	तदैव
3.	कुंडल	सोना, चांदी	कान में	सभी क्षेत्रों में इसे पहले मर्द भी पहनते थे
4.	कर्णफूल	सोना, चांदी	तदैव	रोहतास, कैमूर पलामू आदि
5.	कनढप्पा	सोना, चांदी	तदैव	भागलपुर आदि
6.	छूंछी या कील	तदैव	नाम में	सभी क्षेत्रों में

क्र.सं.	गहना का नाम	किस धातु का	कहाँ धारण किया	किस क्षेत्र का
1.	2.	3.	4.	5.
7.	नकबेसर	सोना, चांदी	नाक में	रोहतास, कैमूर
8.	सिकड़ी	तदैव	गला का	सभी क्षेत्रों में
9.	हंसुली	सोना, चांदी	तदैव	रोहतास, कैमूर
10.	बाजू बन्द	तदैव	बांह में	सभी क्षेत्रों में
11.	पहूंची	चांदी	कलाई का	तदैव
12.	पछुआ	तदैव	तदैव	तदैव
13.	ककना	चांदी या गिलट	तदैव	तदैव
14.	धुकधुकी	सोना, चांदी	गले का	भागलपुर
15.	मठिया, लादी	चांदी का	कलाई का	तदैव
16.	चूड़ी	सोना, चांदी, लोहा	तदैव	सभी क्षेत्रों का
17.	अंगूठी	सोना, चांदी	हाथ की उंगली	तदैव
18.	कड़ा	चांदी, गिलट	पैर का	तदैव
19.	पितर हड़िया	पीतल, चांदी, गिलट	पैर का	तदैव
20.	बिछुआ	चांदी का	पैर की उंगली का	सभी क्षेत्रों में
21.	सीथ	चांदी का	ललाट एवं सिर	भागलपुर

इनमें अब अधिकांश गहने खरवार महिलाएँ नहीं पहनती हैं, क्योंकि अधिकांश की आर्थिक-स्थिति खराब है। अधिकांश चांदी या गिलट के गहने कान, गला, कलाई और पैरों में पहनती हैं। जो लोग बड़े किसान या उच्च पदों पर पदस्थापित हैं, केवल उनकी महिलाएं ही सोने के आभूषण पहनती हैं। यह भी ज्ञात हुआ कि विवाह में वधु को दो या तीन थान गहने चांदी के दिये जाते हैं।

विधवा महिलाएँ आभूषण नहीं पहनती हैं। कोई-कोई चांदी या गिलट अथवा लाह की चूड़ी पहनती हैं। सर्वेक्षण के समय 5 प्रतिशत महिलाओं के शरीर पर ही इक्के-दुक्के चांदी के गहना देखने को मिले। 2 प्रतिशत के कान में सोने की बाली या अन्य गहना देखने को मिले।

(ज) आवास-गृह :

खरवार के अधिकांश घर मिट्टी की दीवार और खपरैल छप्पर के बने होते हैं। उनके घरों मे आंगन और बाहर में बरामदा बनाने की परम्परा है। आंगन में कहीं-कहीं तुलसी का वृक्ष भी लगाते हैं। जो कोई मिलने आता है, उसे बाहर के बरामदे में बैठाते हैं। कहीं-कहीं बाहर के बरामदे में घेर कर एक कमरा भी बना देते हैं, जहाँ अतिथि को ठहराते हैं। वे अपनी आवश्यकता एवं क्षमतानुसार तीन, चार या उससे अधिक कमरे का घर बनाते हैं। खरवार का परिवार संयुक्त परिवार होता है। अत: कमरों की संख्या तदनुसार होती है, ताकि परिवार के सभी सदस्य उसमें रह सकें। उनके घरों में सामान्यत: रसोई और भंडार घर (स्टोर) अलग बना रहता है। कहीं-कहीं एक कमरे या भीतर के बरामदे में ढेकी और जाता या चक्की रहता है, जहाँ घर की महिलाएँ धान या चावल कूटने और आटा पीसने का काम करती हैं। कहीं-कहीं मिट्टी की दीवार पर फूस से छाये घर भी मिले, जो तुलनात्मक दृष्टि से छोटे थे। जनजातीय क्षेत्रों या रोहतास क्षेत्र में, जहाँ भूमिहीन खरवार हैं, वहाँ फूस या पुआल के छप्पर वाले घरों की संख्या अधिक है।

कहीं-कहीं छप्पर के नीचे एक और छत बना कर खाद्यान्न आदि रखने के लिए ''दुछत्ती'' बनाते हैं। उनके कमरों की लम्बाई-चौड़ाई सामान्यत: 10 से 12 फीट लम्बी और 6 से 8 फीट चौड़ी होती है। रसोईघर काफी छोटा होता है। घरों में खिड़की या झरोखा वे नहीं बनाते हैं। उनका मवेशी घर मुख्य आवास-गृह से बाहर होता है। कहीं-कहीं लोग सुरक्षा की दृष्टि से मवेशियों को घर के भीतर रखते हैं।

गंगा के दियारा क्षेत्र में, जहाँ बाढ़ का खतरा बना रहता है, वहाँ फूस या पुआल के छप्पर वाले घर बनाये जाते हैं। बाढ़ के खतरे से दूर क्षेत्र वाले स्थानों पर कच्चे-पक्के खपरैल और पक्का छत वाले मकान बनाये गए हैं। कहीं-कहीं बड़े किसान सभी सुविधाओं से सम्पन्न पक्के ईंट के मकान बनवाते हैं, पर ऐसे मकानों की संख्या कम है। जो नौकरी में उच्च पदों पर हैं, उनके मकान भी पक्के ईंट तथा ढलाई वाली छत के हैं। देहाती क्षेत्र में घरों के भीतर शौचालय की व्यवस्था नहीं रहती है। अब कहीं-कहीं लोग सुलभ शौचालय (संडास) या सैनिटरी शौचालय बनवाने लगे हैं, जो पढ़े-लिखे नौकरी पेशा में लोग हैं।

खरवार अपने घरों की लिपाई-पुताई दीपावली और रामनवमी के अवसर पर करते हैं। जनजातीय क्षेत्रों में घर की पुताई उनकी स्त्रियाँ वहाँ मिलने वाले सफेद या रंगीन (काला या लाल) मिट्टी से करती हैं। जिन लोगों का पक्का मकान है, वे

चूना आदि से पोचाड़ा करवाते हैं। खरवार कच्चे घर की जमीन को गोबर से लीपते हैं। इनका घर साफ-सुथरा रहता है।

(त) अस्त्र-शस्त्र :

खरवार जन-जाति के लोग शुरू से बहादुर सैनिक और युद्ध के प्रेमी रहे हैं। वे पहले अच्छे तीरन्दाज भी थे। परन्तु कालक्रमानुसार वे तीर-धनुष का प्रयोग करना भूल गये। अब कहीं-कहीं जनजातीय क्षेत्र में इक्के-दुक्के खरवार तीर चलाना जानते हैं। वे रस्सी से बना ''ढेलवांस'' का प्रयोग दूर तक ढेला या पत्थर फेंक कर मारने के लिए करते हैं। इसका प्रचलन पलामू में सबसे अधिक है। खेत में फसल लग जाने पर पशु-पक्षी को भगाने के लिए भी इसका प्रयोग करते हैं। इसके अलावे परम्परागत हथियारों में वे भाला, बरछी, तलवार, बलुआ, गंडासा आदि रखते हैं। अनेक लोगों के पास पुराना टाइप का ''बारूद भरका चलाने वाला बन्दूक'' भी है। कुछ लोग आधुनिक बन्दूक, राइफल आदि भी रखते हैं। उनके घरों में दो-तीन तरह के हथियार अवश्य रखे जाते हैं।

(थ) घर की अन्य सामग्रियाँ एवं उपकरण :-

किसी व्यक्ति की सम्पन्नता या विपन्नता का सूचक घर में उपलब्ध, उपस्कर, बर्तन आदि मुख्य होते हैं। लगभग 40 प्रतिशत से अधिक खरवार गरीबी रेखा के नीचे जीवन बिता रहे हैं। अत: उनके अधिकांश घरों में खाट एवं चौकी तक सोने के लिए नहीं मिलती। जनजातीय क्षेत्र में अधिकांश लोग खजूर की चटाई पर सोते हैं। बहुत से लोग जाड़े के दिनों में ठंढक से बचने के लिए चटाई को औढ़ने के काम में भी लाते हैं। उनके घरों के बर्तन अधिकांशत: मिट्टी या अल्मुनियम के देखे गए।

—— ❋❋ ——

अध्याय -7

खान पान

(क) पोषण की स्थिति :

पोषण की आदर्श स्थिति उन खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता और मात्रा पर निर्भर करती है, जिसे हम प्रतिदिन लेते हैं। जीवन की हर उम्र और अवस्थाओं में स्वस्थ रहने के लिए ऐसा भोजन ग्रहण करना महत्त्वपूर्ण होता है, जो मात्रा और गुणवत्ता की दृष्टि से पोषण की सभी जरुरतों को पूरा कर सके। कुपोषण का कारण सिर्फ पर्याप्त मात्रा में भोजन न मिलना ही नहीं है, बल्कि भोजन में पौष्टिक तत्वों एवं उसकी जानकारी का नहीं होना है।

खरवार जनजाति का पोषक तत्व उनके खान-पान में व्यवहृत अनाजों, फलों, दूध एवं दूध से बने पदार्थ (घी, दही, छेना, मट्ठा) सब्जी आदि पर निर्भर करता हैं खान-पान की आदत, तैयार किये गए व्यंजन, मात्रा आदि स्थान विशेष के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है। रोहतास और कैमूर क्षेत्र के लोग अधिकांशतः मुख्य भोजन के रूप में चावल और मकई द्वारा तैयार दर्रा (दलिया) का व्यवहार करते हैं। रहर, खेसारी, मसूरी आदि दलहन को दाल के रूप में व्यवहार में लाते हैं। रहर, खेसारी, वे मांसाहारी भी हैं, इस कारण बकरे और कोई-कोई मुर्गे का मांस भी खाते हैं। वे मछली खाना पसन्द करते हैं। उनमें- जो गाय या भैंस पालते हैं, वे दूध और दूध से बने पदार्थ खाते हैं। उनका ठोस आहार औसतन एक बार में 500 ग्राम के आसपास होता है। परिश्रमी होने के कारण वे सामान्य आदमी से कुछ अधिक मात्रा में खाते हैं। पर्व-त्योहार के अवसर पर वे पकवान में - पूआ, खीर, पूड़ी, गुलगुला आदि बनाते हैं। बच्चों के खाने-पीने पर भी पूरा ध्यान देते हैं। उस क्षेत्र के खरवार लोगों की पोषक-स्थिति बहुत कम होती है। चावल, चना, मकई, मसूरिया आदि का भुंजा और दूसरे व्यंजन वे बड़े चाव से खाते हैं। उस क्षेत्र में साग-सब्जी में मुख्यतः आलू, बैंगन, सेम, कद्द, चौलाई, पालक, गंधारी साग आदि अधिक मिलता है, जो वे खाने में प्रयोग करते हैं।

नशीली पदार्थ में वे महुआ की शराब, ताड़ी, गांजा, भांग आदि का सेवन करते हैं, उस क्षेत्र में चावल से बनी शराब (हंड़िया) वे नहीं पीते हैं। खैनी प्रायः सभी खाते हैं। बीड़ी और सिगरेट पीने का भी प्रचलन है। स्त्रियाँ बहुत कम ही नशीले पदार्थों का सेवन करती हैं। शराब के अतिशय सेवन का बुरा प्रभाव उनके स्वास्थ्य

पर पड़ता है और कभी-कभी वे टी. बी. जैसे घातक रोगों के शिकार हो जाते हैं।

जनजातीय बहुल क्षेत्र (पलामू, गुमला, लोहरदगा आदि) में रहने वाले खरवारों का भोजन वहाँ पैदा होने वाले अनाजों और वनों में मिलने वाले फल-फूल, कन्द-मूल आदि पर निर्भर करता है और उसका पूरा प्रभाव उनकी पोषण-स्थिति पर पड़ता है। इस क्षेत्र में दिन-रात के खाने को वे तीन भागों में बांटते हैं :

1. **लुक्मा :-** सुबह का नास्ता, जिसमें वे बासी भात, रोटी या अन्य कोई चीज अल्पाहार के रूप में लेते हैं। कहीं-कहीं लुक्मा के साथ चाय या हँड़िया भी लेते हैं।

2. **कलवा या कलेवा :-** दिन के भोजन को वे "कलवा'' कहते हैं। दिन में वे चावल या मकई का भात या घट्ठा, कुरथी, रहर या अन्य कोई दाल और मौसमी साग या सब्जी खाते हैं।

3. **बियारी :-** रात के भोजन को वे ''बियारी'' कहते हैं। रात में अधिकांश लोग भात या घट्ठा और कई साग या सब्जी खाते हैं। अब लोग गेहूँ या मकई के आटे की रोटी भी खाते हैं।

इस क्षेत्र के खरवार आर्थिक रूप से कुछ अधिक विपन्न हैं। अतः खाने में अधिक पौष्टिक भोजन - दूध, घी, दही, अंडा, मांस आदि का उपयोग कम ही कर पाते हैं। फिर भी वहाँ के वनों में उपलब्ध पोषक तत्वों से युक्त साग-सब्जी, फल-फूल, कन्द-मूल आदि का सेवन कर अपनी पोषण की स्थिति को बनाये रखते हैं। इन क्षेत्रों में वर्षा तथा शरद ऋतुओं में अनेक प्रकार के पौष्टिक साग मिलते हैं, जिनमें सरवत, कटैल, लउअत, गंजा, टुरचा, चकवड़, चना, मटर, गंधारी, फुटकल आदि प्रमुख हैं। उसी प्रकार जंगल में मिलने वाले गेठी-कन्दा में सारू, पिठारू, डुरू, खनिया, डुरकी आदि प्रमुख हैं, जिन्हें उबाल कर वे खाते हैं। इनमें भी विभिन्न पौष्टिक तत्व मौजूद रहते हैं। इनमें गेठी काफी तीखा (तीता) होता है, जिसे वे छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर रातभर पानी में रखते हैं, ताकि उसका तीखापन खत्म हो जाय। दूसरे दिन उसे उबाल कर या भून कर खाते हैं। वे कन्दा और गेठी को बरसात और गर्मी के लिए बचाकर रखते हैं। यह काफी पौष्टिक होता है। इसके अलावा वहाँ पैदा होने वाले अनाज - महुआ, जिन्होंरी, सांवां, टांगुन, बाजरा, मकई आदि से भी रोटी आदि बनाकर खाते हैं। खरवार भी मांसाहारी होते हैं। उनमें से कुछ सूअर का मांस भी खाते हैं। सर्वेक्षण में यह ज्ञात हुआ है कि "बड़ा खरवार' (सूर्यवंशी) सूअर का मांस नहीं खाते हैं। वे केवल बकरा, मुर्गा, जंगली कोटरा, हिरण, खरगोश, तीतर, कबूतर आदि ही खाते हैं। परंतु "छोटका खरवार'

इन पशु-पक्षियों के अलावा सूअर का मांस खाते हैं। वे कुमनी या जाल से मछली मार कर भी खाते हैं। कुछ खरवार, जो ''साफा होड़'' या ''टाना भगत'' आन्दोलन (धार्मिक) से जुड़ गए हैं, पूरी तरह शाकाहारी हो गए हैं। वे किसी तरह के नशीले पदार्थ का भी सेवन नहीं करते हैं।

जंगल में मिलने वाले मौसमी फल - केन्द, पियार, आम, जामुन, कटहल, बड़हल आदि भी लाकर कच्चा और पक्का दोनों रूप में खाते हैं। सब्जी में वे आलू, बैंगन, सेम, कद्दू, भिंडी, करेला, कोबी आदि उपजाते हैं और बेचने के साथ-साथ वे उन्हें खाते भी हैं। उनमें 80 प्रतिशत को किसी न किसी स्रोत से पोषक तत्व मिल जाते हैं। परन्तु 20 प्रतिशत, जो अत्यन्त गरीब हैं, उनके परिवार की पोषण की स्थिति खराब रहती है। ऐसे लोग अधिकांशतः भूमिहीन हैं और मजदूरी करके अपना भरण-पोषण करते हैं।

नशीले पदार्थों में वे महुआ की शराब, चावल का हंड़िया एवं ताड़ या खजूर की ताड़ी पीते हैं। उनमें से कुछ गांजा, बीड़ी और तम्बाकू भी पीते हैं। अधिकांश लोग खैनी खाते हैं।

भागलपुर, मुंगेर, साहेबगंज, कटिहार आदि गंगा या अन्य नदियों के दियारा क्षेत्र में जो खरवार बस गए हैं, उनकी आर्थिक-स्थिति तुलनात्मक दृष्टि से कुछ अच्छी है। इस कारण उनको खाने-पीने का उतना अभाव नहीं झेलना पड़ता है। उन्हें अधिक नुकसान (खाद्य पदार्थों का) बाढ़ के कारण कभी-कभी उठाना पड़ता है। दियारा क्षेत्र की मिट्टी अपेक्षाकृत अधिक उपजाऊ होती है। इस क्षेत्र में अधिकांशतः मकई, चना, रहर, खेसारी, मसूरी, चीना जिनोरी आदि पैदा होते हैं। कहीं-कहीं थोड़ा-बहुत धान होता है। वे गेहूँ भी पैदा कर लेते हैं। इस क्षेत्र में गाय-भैंस भी पालते हैं, जिससे दूध, दही आदि भी वे अपने खाने में प्रयोग करते हैं। इस क्षेत्र के लोग भी मांसाहारी हैं और बकरा, मुर्गा, कबूतर, बत्तख, चाहा, बगेरी आदि का मांस खाते हैं। नदी किनारे रहने के कारण उन्हें मछली भी काफी मिलती है। वे मकई से घट्ठा (भात), रोटी गेहूँ, मडुआ आदि के आंटे से रोटी, पीठा, छिलका आदि बनाकर खाते हैं। एक शाम (दिन में) लोग व्यंजन बनाते हैं, जिसकी जानकारी सर्वेक्षण के दौरान मिली। विवरण निम्न प्रकार है :

1. बगिया - गेहूँ और चावल के आट्ट से बनता है। यह सादा और नमकीन होता है।

2. दलपिठिया - आटा और दाल से बनाते है। यह नमकीन होता है।

3. रसिया – ईख के रस में चावल डाल कर बनाते हैं। यह मीठा होता है।

4. घाटा – मकई को दल कर नमक डाल कर भात की तरह बनाते हैं।

5. चिकनपूड़ी – आटे में तीसी की बुकनी और गुड़ भर कर पूड़ी की तरह बनता है।

6. चितवा या पोंछा पूड़ी – गेहूँ और चावल के आटे में नमक या गुड़ मिलाकर काफी पतला बनाया जाता है। यह अन्य क्षेत्रों में छाछ या छिलका कहलाता है।

7. बिरनी खोता – यह चावल का आटा, दूध और गुड़ मिलाकर मिट्टी के बर्तन में बनता है। इसे रोहतास आदि में ढकनेसर कहा जाता है।

8. माढ़ा – यह चीना नामक अनाज को भून कर बनाया जाता है। इसे लोग दूध या दही के साथ भी खाते हैं।

उस क्षेत्र में लोग शकरकंद भी बड़े चाव से खाते हैं। उस क्षेत्र में केवल साहेबगंज के कुछ पहाड़ी भागों में ही जंगली गेंठी और कन्दा मिलता है। उस क्षेत्र में साग-सब्जी में लोग आलू, बैगन, सेम, कद्दू, कोबी, मूली आदि सब्जी तथा पालक, चौलाई, गंधारी आदि साग लगाते हैं। जाड़े के दिनों में वे चना, मटर और खेसारी का साग काफी चाव से खाते हैं। इस क्षेत्र के लोगों के पोषण की स्थिति अच्छी होने के फलस्वरूप लोगों का स्वास्थ्य अच्छा है।

इस क्षेत्र में भी लोग महुआ की शराब का सेवन अधिक करते है। इस कारण कुछ लोगों को अपना स्वास्थ्य गंवाना पड़ता है। कुछ लोग पान में जर्दा आदि अधिक खाते हैं। खैनी खाने और सिगरेट तथा बीड़ी पीने वाले लोगों की संख्या भी काफी है। इस क्षेत्र में खरवार स्वयं चावल की शराब नहीं बनाते हैं और वे उसे पीते भी नहीं हैं। कुछ लोग ताड़ी अवश्य पीते हैं।

जो नौकरी पेशा में हैं और बाहर रहते हैं, उनके खान-पान का स्तर कुछ अधिक ऊँचा है।

(ख) खाना पकाने का माध्यम :

खाना पकाने का माध्यम अलग-अलग क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न प्रकार है, जो स्थानीय परिस्थिति के अनुरूप है। कैमूर और रोहतास क्षेत्र में लोग अधिकतर गोइठा (गोबर का बना) और लकड़ी से खाना बनाते हैं। पहले उस क्षेत्र में जंगल काफी था और जलावन की लकड़ी उन्हें जंगल से मिल जाती थी। परन्तु अब जंगल की

कमी के कारण जलावन लकड़ी मिलने में काफी कठिनाई होती है। कुछ लोग मकई और रहर के डंठल से भी खाना बनाने का काम लेते हैं।

जनजातीय क्षेत्र - पलामू, गुमला, लोहरदगा, राँची, हजारीबाग आदि क्षेत्रों में अधिकांश लोग लकड़ी से ही खाना बनाते हैं। लोग मुख्यतः जंगल से जलावन की लकड़ी लाते हैं। कुछ महिलाएँ आम, महुआ आदि पेड़ों के सूखे पत्ते लाकर भी खाना बनाती हैं। जिनके पास मवेशी है, वे कुछ गोइठा का भी उपयोग खाना बनाने में करते हैं। जहाँ कोयले के खदान हैं - पलामू एवं हजारीबाग - वहाँ आस-पास रहने वाले लोग कोयला जलाकर भी खाना बनाते हैं।

दियारा क्षेत्र - भागलपुर, मुंगेर, साहेबगंज, कटिहार आदि में जलावन की काफी कमी रहती है। उस क्षेत्र में मकई, रहर, मसूरिया आदि की डंठल सुखाकर और गोइठा से खाना पकाते हैं। कुछ लोगों के पास अपने आम, जामुन आदि के पेड़ हैं, जिसकी सूखी डाल या पत्तों से भी खाना पकाने का काम लिया जाता है। कुछ सम्पन्न लोग गैस के चूल्हा का भी प्रयोग करने लगे हैं, पर ऐसे लोग अपवाद स्वरूप हैं और शहरी क्षेत्र में ही इसका अधिक उपयोग करते हैं। सर्वेक्षण में कहीं भी किसी क्षेत्र में भी ''गोबर गैस'' या ''बायो गैस'' प्लांट देखने को नहीं मिला।

(ग) कन्दमूल एवं फूल फल :

पलामू, गुमला, लोहरदगा आदि पहाड़ी एवं वन-क्षेत्र में अनेकों प्रकार के कन्दा और फल आदि पाये जाते हैं, जिन्हें अन्य जनजातियों के साथ-साथ खरवार भी वनों से लाकर खाने के लिए व्यवहार करते हैं। इनमें पौष्टिक तत्व भी प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। जब अन्न की कमी होती है, तो ये कन्दमूल और फलादि उनकी क्षुधा को शान्त करने में सहायक होते हैं। विभिन्न प्रकार के कन्दमूल की विवरणी निम्न प्रकार है :

टेबुल - 23

क्र. सं.	कन्दा का नाम	बनावट एवं अन्य विवरण	किस समय मिलता है
1.	2.	3.	4.
1.	गेंठी	यह एक प्रकार का कन्दा है, जो गोल आकार का होता है। यह 100 ग्राम से 250 ग्राम तक का होता है। यह काफी तीखा स्वाद का होता है और इसके छोटे-छोटे टुकड़े कर रात भर पानी में रखकर दूसरे दिन उबाल कर खाते हैं।	जुलाई से अगस्त

1.	2.	3.	4.
2.	बड़ा कन्दा	यह जमीन से लगभग 1 फीट नीचे रहता है। यह तीन से चार किलो तक वजन में होता है। यह हल्का मीठा होता है और उबाल कर खाते हैं।	जुलाई से अक्टूबर
3.	बेरनई कन्दा	इसकी लता पेड़ पर फैल जाती है और तीन से चार फीट नीचे जमीन में रहता है। तीन से चार किलो तक होता है।	तदैव
4.	डुरा	इसकी लताएँ काफी लम्बी होती है। इसका कन्द 15 कि. से 20 कि. का होता है। यह कम संख्या में मिलता है। इसे भी उबाल कर नमक के साथ खाते हैं।	अगस्त से दिसंबर
5.	लकमा	यह जमीन में ज्यादा नीचे नहीं होता है। इसके खाने से मुंह में खुजली होती है। इसे भी उबाल कर खट्टा डाल कर खाते हैं।	तदैव
6.	डुरूपिठारू	यह जमीन में 3 फीट नीचे मिलता है। यह स्वाद में काफी मीठा होता है और लोग इसे कच्चा भी खाते हैं।	तदैव
7.	बेरन्डी	इसकी लताएँ जमीन पर फैलती हैं और यह जमीन में बहुत नीचे रहता है। इसे उबाल कर या आग में पका कर खाते हैं।	तदैव
8.	बयन्ग	यह भी खुजली पैदा करता है। इसे भी खटाई देकर पकाते हैं।	तदैव
9.	कुकुच सांगा	इसके लत्तर की पत्तियाँ लगभग 10 इंच चौड़ी होती हैं। यह अधिक नमी वाले जंगलों में मिलता है। इसे भी पका कर या उबाल कर खाते हैं।	जुलाई से सितंम्बर
10.	कुलु सांगा	इसकी लताएँ भी बड़ी पत्तियों वाली होती हैं। यह पेड़ पर दूर तक चढ़ जाता है।	जुलाई से सितंम्बर
11.	खनियां	इसे भी उबाल कर खाते हैं।	तदैव
12.	टुंगम कन्दा	इसके लत्तर में कुछ काँटे भी रहते हैं। यह कुछ बड़ा और कड़ा होता है। इसे उबाल कर और भून कर खाते हैं।	अगस्त से दिसंबर

1.	2.	3.	4.
13.	भेंड़वा कन्दा	इसे पका कर खाते हैं। यह पेट को ठीक रखता है और इस पौधे का रस पीने से पेटझरी ठीक होता है।	तदैव
14.	बनकुन्दरी	यह लता वाला कन्दा पहाड़ी घाटी में अधिक मिलता है। इसका फल, पत्ता और कन्दा - तीनों को पका कर खाते हैं।	मई से जून
15.	पत्थर कोहड़ा	इसकी लताएँ काफी मोटी और कड़ी होती हैं। इसे उबाल कर खाते हैं और इसके पत्ता को बुखार और गठिया वात होने पर पीस कर लगाते हैं।	दिसंबर से फरवरी

इन कन्दों में प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, कैल्सियम, आयरन, विटामिन-सी आदि पोषक तत्व पाये जाते हैं। इनमें यथेष्ठ मात्रा में कैलोरी (158-170 ग्राम) भी मिलती है, जैसा कि पूर्व मे किये गए अनुसंधानो से पता चला है।

वनों में पाये जाने वाले अन्य फल-फूल, साग आदि तथा खेतों में उपजने वाली साग सब्जी आदि भी खरवार के भोजन और पोषण के साधन हैं। विभिन्न महीनों में मिलने वाले फल, साग, सब्जी आदि की विवरणी निम्न प्रकार है :

टेबुल - 24

क्र.सं.	महीना/अवधि	प्राप्त होने वाला फल, फूल आदि
1.	2.	3.
1.	चैत (मार्च, अप्रैल)	फूल - गलगल। फल - पियार, केन्द, कैंता, बेल, आम आदि। गंगा के दियारा क्षेत्र में ककड़ी खरबुजा, तरबुजा आदि। साग - गंधारी, कोइनार आदि। सब्जी - बैंगन, बोदी, कोबी, लौकी, सीम आदि।

1.	2.	3.
2.	बैसाख (अप्रैल, मई)	फूल – धनरास, कोरेया, कचनार, जिरहुल, मुहआ आदि। फल – जंगली बेल, बहेरा, पिथौर, पियार, केन्द, गुलर, सरई, जामुन, आम, कटहल। साग – चकवड़, कोइनार, गंधारी आदि। सब्जी – बैंगन, करैला, बोदी, लौकी, कोबी, फ्रैंच बीन आदि।
3.	जेठ (मई, जून)	फल – सरई, केन्द, पियार, बेल, आम, जामुन। साग – चक्कवड़, कोइनार, गन्धारी फुटकल आदि। सब्जी – लौकी, बैंगन, कोंहडा, कुन्दरी आदि।
4.	अषाढ़ (जून, जूलाई)	फल – कुसुम (तेल के लिए), डोरी (महुआ), बेल, खजूर, आम, पपीता, बेल, जामुन, कटहल आदि। साग – गन्धारी, केना, चकवड़, नोनी, चिड़चिड़ी, सरहच्ची, माठा आदि। सब्जी – खेक्सा, पेचकी, ओल, कुन्द्री, भिंडी, बेरनई, नेनुआ, झींगी, बोदी आदि।
5.	श्रावण (जुलाई, अगस्त)	फल – जामुन, पियार, सिकट, आम, कटहल, आदि साग – चकवड़ी, चिरचिरी, गंधारी, करम, गजपुरना, ढकनी, सरहचची, कुदरुम आदि। सब्जी – करैली, खेक्सा, पेचकी, ओल, बनखीरा, खुखड़ी, नैनुआं, झींगी, भिंडी, बोदी आदि।
6.	भादो (अगस्त, सितम्बर)	साग – धानी, केना, पैला, अमटी, मुनगा आदि। सब्जी – करैला, नेनुआं, कोंहड़ा, लौकी, रामतरोई, बांस, खुखड़ी, पेचकी, ओल, रूगड़ा आदि।
7.	आश्विन (सितंबर, अक्टूबर)	साग – पालक, बथुआ, चौलाई, लहसुन आदि। सब्जी – बैंगन, टमाटर, अरू, झींगी, बरसाती आलू (प, क्षेत्र में), कोबी, नेनुआ, मूली, खीरा आदि।

1.	2.	3.
8.	कार्तिक (अक्टूबर, नवम्बर)	फल – बहेरा, बनबैर, शरीफा, अमरुद, पपीता आदि। साग – पालक, सोआ, धनियाँ, मेथी, साखीन, हेस्सा। सब्जी – बैंगन, टमाटर, सेम, कोबी, आलू आदि।
9.	अगहन (नवम्बर, दिसम्बर)	फल – बहेरा, हर्रे, आंवला, फुंटखीरा, गुरसिकरी, टमरस, अमरुद, पपीता, केला आदि। साग – चौलाई, पालक, सोया, धनिया, चना आदि। फूल – अगस्त, कोंहड़ा, मुर्गा आदि। सब्जी – आलू, बैंगन, टमाटर, कोबी, मूली आदि।
10.	पौष (दिसम्बर, जनवरी)	फल – आंवला, अमरुद, पपीता, चिहोर, (महुलान पेड़ का फल), गाजर आदि। साग – चना, मटर, खेसारी, बथुआ, सोआ, सरसों पालक आदि। सब्जी – सेम, लौकी, टमाटर, बैंगन, आलू, कोबी, सेम, मटर छीमी, ओल आदि।
11.	माघ (जनवरी, फरवरी)	फूल – गलगल, जिरहुल, कचनार, मुनगा आदि। सब्जी – कैंता, गुरसिकरी, पपीता, गाजर, अमरुद, केला, इमली आदि।
12.	फाल्गुन (फरवरी, मार्च)	फूल – जिरहुल, कचनार, महुआ आदि फल – हुमर, पियार, केला, बैर, पपीता, अमरुद आदि। साग – पालक, बथुआ, मेथी, गंधारी आदि। सब्जी – बैंगन, सेम, टमाटर, कोबी, नेनुआं (गोंगरा), कुन्द्रू, ओल, पेचकी आदि।

जनजातीय क्षेत्र एवं अन्य क्षेत्रों में जहाँ सरसों और सुरगुजिया पैदा करते हैं, वहाँ इन्हीं के तेल का उपयोग वे खाने में करते हैं। डोरी और कुसुम का तेल वे दीप मे जलाते हैं। कहीं-कहीं नीम और करंज के तेल का प्रयोग भी वे दीप के लिए तथा दवा के रूप में करते हैं।

खरवार खाने के शौकीन होते हैं और जो चीजें वे पैदा नहीं करते, उन्हें बाजार से खरीद कर खाते हैं। जो अन्न वे उपजाते हैं, उसका विभिन्न प्रकार का व्यंजन

बनाकर उसके स्वाद एवं पौष्टिकता में वृद्धि करने का प्रयास करते हैं। भागलपुर आदि क्षेत्रों की तरह अन्य क्षेत्रों में जहाँ खरवार बसते हैं, वे अपने अनाजों से विभिन्न प्रकार के व्यंजन बनाते हैं, जिनको निम्न प्रकार प्रस्तुत किया गया है।

1. चावल – भात के अलावा पीठा, छिलका/छांछ, दुस्का, पुआ, आदि के साथ-साथ धान से चूड़ा और भूंजा बनाते हैं। जनजातीय क्षेत्र में चावल से 'हंड़िया' (शराब) भी बनाकर पीते हैं। चूड़ा को भूंजकर और मूढ़ी से वे गुड़ डालकर लाई भी बनाते हैं। तिल संक्रांति में वे चूड़ा अवश्य खाते हैं।

2. गेहूँ – गेहूँ के आटे की रोटी वे लगभग प्रतिदिन खाते हैं, जो उपलब्धता पर निर्भर करता है। वे आटा से पूड़ी, पुआ, ठेकुआ, खजूर, हलुआ, छांछ या छिलका, दलिया आदि बनाकर खाते हैं।

3. चना – चना से बेसन, सत्तू, भूंजा, दाल आदि बनाते हैं और सत्तू विशेष चाव से खाते हैं। सतुआन में वे सत्तू अवश्य खाते हैं (विशेषकर कैमूर, रोहतास और पलामू में)

4. जिनोरी या मसूरिया – इसके आंटा की रोटी, छिलका आदि बनाकर खाते हैं। इसे भूंज कर इसका लावा खाते हैं और गुड़ मिलाकर लाई बनाकर खाते हैं।

5. बाजरा – इसके आंटा से रोटी बनाते हैं और भूंज कर गुड़ मिलाकर लाई बनाकर खाते हैं।

6. कोदो, सांवां टांगुन – इसके आटे से रोटी और उससे भात भी बनाते हैं।

7. दलहन – रहर, मसूर, मुंग, चना, कुरथी आदि का दाल वे घर में भी उन अनाजों को दल कर बनाते हैं। सभी खरवार दाल नहीं खा पाते, क्योंकि सभी दलहन पैदा नहीं करते। अधिकांश गरीब हैं, इस कारण वे 26/- और 28/- रु. प्रति किलो दाल खरीद कर नहीं खा सकते।

उपर्युक्त तथ्यों के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि खरवार जो भोजन करते हैं, उनमें ऊपर वर्णित सभी पोषक तत्व उन्हें मिल जाते हैं और इस कारण उनका स्वास्थ्य ठीक रहता है। देहाती एवं जनजातीय क्षेत्रों में पुरुषों को खिलाकर ही महिलाएँ खाती हैं। प्रायः उन्हें बचा-खुचा भोजन ही खाना पड़ता है। अतः तुलनात्मक दृष्टि से उनकी पोषण की स्थिति कहीं-कहीं संतोषजनक नहीं पाई जाती है।

(घ) नशाखोरी एवं नशीले पदार्थ :

सर्वेक्षण में यह ज्ञात हुआ है कि अधिकांश खरवार किसी न किसी प्रकार के नशीले पदार्थों का सेवन करते हैं। उनमें अधिकांश शराब पीते हैं, जिसका प्रतिकूल प्रभाव उनके स्वास्थ्य के साथ-साथ उनके आर्थिक जीवन पर भी पड़ता है। उनकी विपन्नता का यह भी एक प्रमुख कारण है। लगभग 95 प्रतिशत खरवार (पुरुष) शराब पीते हैं। कुछ लोग अपने घरों में महुआ से शराब बनाते हैं। अधिकांश बाजार से ही शराब खरीद कर पीते हैं। शराब के नशे में वे कई तरह के अपराध भी कर बैठते हैं। जो खरवार धार्मिक सुधार आन्दोलनों - साफा होड़, टाना भगत आदि - से जुड़े रहे हैं, वे शराब या किसी प्रकार के नशीले पदार्थों का सेवन नहीं करते हैं। जनजातीय क्षेत्र में, जहाँ महुआ अधिक मिलता है, वहाँ शराब का प्रचलन अधिक है। यह ज्ञात हुआ कि शराब की भट्ठी में दो तरह की शराब बिकती है - 50 नं. और 72 नं. की। 50 नं. की शराब अधिक महंगी होती है और उसमें 72 नं. की अपेक्षा अल्कोहल की मात्रा अधिक होती है। कोई-कोई व्यक्ति दो से तीन बोतल शराब पी जाता है।

जनजातीय क्षेत्र में शराब (महुआ) के साथ-साथ लोग चावल से बनी शराब ''हंड़िया'' या ''डियंग'' भी पीते हैं। चावल का भात बनाकर उसमें वे रानू नामक जड़ी डालकर उसे सड़ाते हैं और दो-तीन दिनों में हँड़िया तैयार हो जाती है। उसको छान कर जो पहला रस निकलता है, उसे अरकी या रस्सी कहते हैं, जो अधिक नशीला होता है। हंड़िया में शराब से कम नशा होती है और वह कम नुकसानदेह होता है। पर्व-त्योहार के अवसर पर इसे पवित्रता से बनाकर अपने देवता एवं पितरों को भी कभी-कभी अर्पित करते हैं।

रोहतास, कैमूर, (भभुआ), पलामू, भागलपुर आदि जगहों में जहाँ ताड़ के वृक्ष हैं, लोग गर्मी के दिनों में उससे निकलने वाले रस - 'ताड़ी' को भी पीते हैं। इसे लोग खूब सवेरे स्वास्थ्य (पेट) ठीक रखने के लिए भी पीते हैं। इन क्षेत्रों में गांजा पीने का भी प्रचलन है। होली में इन क्षेत्रों में भांग का शरबत बनाकर भी लोग पीते हैं।

बीड़ी-सिगरेट पीने का प्रचलन प्रायः सभी क्षेत्रों में है। जो गरीब हैं, वे बीड़ी पीते हैं और जो धनी हैं, वे सिगरेट पीते हैं। खैनी खाने का प्रचलन भी प्रायः सभी क्षेत्रों में है और लगभग 90 प्रतिशत खरवार खैनी का सेवन करते हैं। अब कुछ लोग पान के साथ विभिन्न प्रकार के नशीले जर्दा और खैनी युक्त पान-पराग का सेवन करते हैं। भागलपुर, कटिहार आदि क्षेत्रों में पान का प्रचलन अधिक है। उस

क्षेत्र में सभी अवसरों पर लोग स्वयं पान खाते हैं और अतिथियों को भी पान देकर स्वागत करते हैं। खरवार में गर्भवती महिलाओं के खान-पान पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इस कारण गर्भवती की पोषण स्थिति सामान्यत: अच्छी रहती है। महिलाएँ सामान्यत: नशीले पदार्थों का सेवन नहीं करतीं। कहीं-कहीं महिलाएं भी शराब या हंड़िया पीती हैं। अन्य नशीले पदार्थों का सेवन नहीं करती हैं। बच्चों के पोषण पर भी विशेष ध्यान देते हैं और उन्हें किसी प्रकार का नशीला पदार्थ सेवन नहीं करने देते। मुंडा, संथाल, उरांव, हो आदि में बचपन से ही लोग हँड़िया के सेवन के आदी हो जाते हैं। परन्तु खरवार में ऐसा नहीं होता है।

—— ** ——

अध्याय - 8

राजनैतिक संगठन

(क) पृष्ठभूमि :

खरवार जन-जाति आरंम्भिक काल से ही काफी जागरूक जन-जाति रही है और शारीरिक एवं राजनैतिक बल और कौशल से अपनी जाति का नेतृत्व किया है। रोहतासगढ़ (कैमूर पर्वत) से सोन नदी की घाटी होकर पलामू तक की उनकी यात्रा कथा चेरो राजाओं या सरदारों से भी जुड़ गयी है। पलामू में चेरो सरदारों के आने के पहले से ही खरवार उस क्षेत्र में काफी संगठित और युद्ध-कला में काफी प्रवीण थे। उनका अपना सामाजिक संगठन पंचायत (जातीय) के माध्यम से काफी सुदृढ़ था और उसी का फायदा उठाकर उनके सैनिक एवं राजनैतिक सहयोग से वे (चेरो) पलामू के शासक बन गए।

खरवार अपनी सामाजिक एवं राजनैतिक संगठन के आधार पर ही अपने को हमेशा 'अठारह हजारी' कहते रहे और आज भी यह सम्बोधन उनके बीच प्रचलित है। वे अपनी जाति या समाज के लिए अपनाये गए हर फैसने को 'अठारह हजारी' का फैसला मानते हैं। इस प्रकार आज भी खरवार समुदाय अपनी जातीय पंचायत के निर्णय से नियंत्रित होता है। पंचायत न केवल उनके सामाजिक जीवन को नियंत्रित करता है, वरन् उनकी राजनैतिक सोच को भी प्रभावित करता है।

(ख) जातीय पंचायत की रूप-रेखा एवं कार्य :

अन्य जनजातियों की तरह खरवार की भी अपनी जातीय पंचायत है, जो अनादि काल से चली आ रही है। प्रत्येक खरवार एवं उसका परिवार जातीय पंचायत के नियंत्रण में रहता है। उनकी पारम्परिक जातीय पंचायत - 'चटाई', 'चट्टी' या 'चट्टा' कहलाती है। तीन से पाँच गाँव को मिलाकर एक 'चट्टा' का गठन किया जाता है। कई चट्टा को मिलाकर एक बड़ी पंचायत बनती है, जिसे 'बड़ा चट्टा' या 'परगना' कहते हैं। गुमला जिला में पाँच पंचायतों को मिलाकर जो बड़ी पंचायत बनती है, उसे "पचौरा" और सात पंचायतों को मिलाकर जो बड़ी पंचायत बनती है, उसे 'सतौरा' कहते हैं। एक चट्टा के नियंत्रण में वे सभी गाँव या टोले आते हैं, जो उसके क्षेत्र में पड़ते हैं। उसी प्रकार परगना/सतौरा/पचौरा के नियंत्रण में वे सभी पंचायतें आती हैं, जो उसके क्षेत्राधीन होती हैं।

2. चुनाव की प्रक्रिया एवं पदाधिकारी :

प्रत्येक चट्टा या चटाई का मुखिया उन ग्रामवासियों (खरवार) द्वारा चुना जाता है, जो उस पंचायत क्षेत्र के वयस्क सदस्य होते हैं। मुखिया का चुनाव सर्वसम्मति से होता है। कहीं-कहीं मुखिया वंश परम्परा से भी होते हैं। चुनाव का स्थान, दिन एवं समय पूर्व मुखिया द्वारा पंचों की राय से तय किया जाता है। पंच में पंचायत के प्रत्येक गाँव के प्रतिनिधि रहते हैं।

चट्टा या चटाई का प्रधान - मुखिया, मधस, मडर आदि पदनामों से जाना जाता है। पलामू में उसे गंउआं, जेठरइया तथा प्रधान भी कहते हैं। गाँव के सभी वयस्क खरवार चट्टा के सदस्य होते हैं। चट्टा में मुखिया की सहायता के लिए कटिहा, कोटवार, दिगवार आदि पदधारी होते हैं, जो मुखिया की सहमति से चुने जाते हैं। कोटवार या दिगवार पंचायत के आयोजन की सूचना लोगों तक पहुँचाते हैं और पंचायत के अन्य कार्यों में मदद करते हैं। कटिहा पंचायत की कार्यवाही को लिखने या नोट करने का काम करता है। सामान्यत: मुखिया या मधस खरवार समाज का कोई प्रतिष्ठित और अनुभवी आदमी ही बनाया जाता है।

परगना, पचौरा और सतौरा का प्रधान "परगनैत' कहलाता है। उसका चुनाव उसके अधिकार क्षेत्र में आने वाली पंचायतों के द्वारा किया जाता है। यह चुनाव भी सर्वसम्मति से किया जाता है। जब कोई अन्तपंचायत विवाद होता है, तो वह परगनैत के पास फैसला के लिए आता है। परगनैत संबंधित पंचायतों के मुखिया के साथ मिल-बैठकर उसे सुलझा लिया जाता है। जातीय पंचायत से जनजातीय क्षेत्र में 'बैगा' (पुजारी) भी जुड़ा रहता है, जो धार्मिक अनुष्ठान, पूजा-पाठ आदि से संबंधित मामलों का प्रधान माना जाता है।

3. चट्टा या चटाई के मुख्य कार्य एवं कृत्य :

पूर्व काल मे खरवार जन-जाति की जातीय पंचायत काफी सुदृढ़ और प्रभावशाली थी। उस समय पंचायत राज अधिनियम के आधार पर ग्राम पंचायतों का अस्तित्व नहीं था और यदि बाद में हुआ भी तो उसका प्रभाव खरवार के सामाजिक जीवन पर बहुत कम था। उनकी हर समस्या का समाधान उनकी जातीय पंचायतों में ही होता था। अभी भी किसी-किसी क्षेत्र में उनकी पंचायत प्रणाली काफी सक्रिय है। उनकी पारंपरिक पंचायत के प्रमुख कार्य एवं कृत्य निम्न प्रकार हैं, जिसकी जानकारी उनके क्षेत्र के सर्वेक्षण के क्रम में मिली :-

1. खरवार जनजातीय समाज को संगठित एवं नियंत्रित रखना।
2. सामाजिक बुराइयों - दहेज, मैन या वधु-मूल्य पर पूरी तरह रोक लगाना।
3. विवाह में गोत्र का विचार करना और यथा सम्भव सगोत्री विवाह रोकना।
4. अन्तर्जातीय या विजातीय विवाह पर पूरी तरह रोक लगाना।
5. विवाह-पूर्व यौन संबंधों पर पूरी तरह रोक लगाना।
6. समाज में होने वाले अत्याचार एवं भ्रष्टाचार पर रोक लगाना।
7. सामाजिक नियमों और परम्परा को नहीं मानने वालों पर अर्थ-दंड लागाना और उनका जातीय बहिष्कार करना।
8. दंड-विधान के तहत जुर्माना देकर क्षमा याचना करने वाले को पुनः जाति में वापस ले लेना।

4. दंड विधान एवं जुर्माना :-

सामाजिक नियमों को तोड़ने वाले को तीन तरह से पंचायत द्वारा दंडित किया जाता है :

1. **आर्थिक दंड लगाकर** :- आर्थिक दंड की राशि अपराध के प्रकार पर निर्भर करती है। यह दंड 50/- रु. से लेकर 5000/- रु. तक भी हो सकता है। जनजातीय क्षेत्र में सर्वेक्षण के समय यह जानकारी मिली कि विजातीय या खरवार के अलावा अन्य किसी जाति की लड़की से शादी करने पर 5000/- रु. तक का जुर्माना लगाया जाता है। विवाह पूर्व किसी लड़का-लड़की का अवैध संबंध पाये जाने पर 2500/- रु. तक जुर्माना किया जाता है। शादी-शुदा में भी यही दंड दिया जाता है।
2. **जातीय भोज लेकर** :- कहीं-कहीं किसी सामाजिक अपराध से मुक्ति पाने के लिए दोषी व्यक्ति को पूरे गाँव, या पूरी चट्टा या चटाई के लोगों का भोज देना पड़ता है, जिसमें दाल, भात, खस्सी का मांस आदि लगता है। यह भी काफी खर्चीला दंड विधान है।
3. **जाति से निष्कासन** :- जो व्यक्ति अपने अपराध को नहीं मानता है और पंचायत के निर्णय को अमान्य करता है. उसे जाति से निकाल दिया जाता है। इस तरह जाति से निकाला गया व्यक्ति खरवार समाज से बिल्कुल अलग-थलग पड़ जाता है। यह दंड विधान सबसे अधिक कठिन है और लोग इससे बचने का भरसक प्रयास करते हैं।

(ग) सामाजिक एवं राजनैतिक आन्दोलन :

खरवार जन-जाति हमेशा स्वतंत्र रहना पसंद करती है। रोहतासगढ़ पर अधिकार होने के पूर्व में भी वे उत्तर प्रदेश एवं मध्य प्रदेश के वन्य प्रदेशों में स्वच्छन्द एवं स्वतंत्र रूप से रहते थे। वे अपने क्षेत्र के जंगल और जमीन के मालिक थे। अपने शारीरिक बल एवं कौशल से जंगलों को साफ कर एवं खूंखार वन्य पशुओं से उस क्षेत्र को मुक्त करा कर सम्पन्न कृषक बन गए थे। उस समय उनको अपनी जमीन के लिए कोई राज्यकर नहीं देना पड़ता था और न ही जंगलों में जाने और वन्य पदार्थों के उपभोग पर कोई पाबन्दी थी। परन्तु मुगल शासन-काल से ही उन्हें अपनी स्वतंत्रता खतरे में नजर आने लगी। शेरशाह (अफगान सरदार) द्वारा धोखे से उनसे रोहतासगढ़ ले लिया गया और वे काफी संख्या में वहाँ से पलायन कर सोन घाटी में तथा पलामू के घने जंगलों में बसने को विवश हुए। पलामू में भी चेरो सरदारों के साथ वे मुगल बादशाहों से अपनी आजादी के लिए लड़ते रहे। परन्तु अंग्रेजों के शासन काल में वे अपनी आजादी के लिए खुलकर विद्रोह करने पर विवश हुए। 1771 ई. से 1817 ई. के बीच वे चेरो के साथ कन्धा से कन्धा मिलाकर अंगेजी हुकूमत के खिलाफ लड़ते रहे। 1793 के स्थायी बन्दोबस्ती कानून तथा 1859 के विक्रय तथा कर संबंधी नियमों के अनुसार आदिवासियों की बहुत-सी जमीनें बड़े पैमाने पर बाहरी व्यक्तियों (गैर जनजातियों) एवं जमीन्दारों को हस्तान्तरित हो गयीं। जिस जमीन को उन्होंने खून-पसीना बहाकर कृषि-योग्य बनाया था और जो उन्हें जागीर में मिली थी, उसे नये कानून के तहत उनसे छीना जाने लगा। काफी जमीनें देखते-देखते उनके हाथ से निकल गई। जिन जमीन्दारों और ठीकेदारों के हाथों उनकी जमीने बन्दोबस्ती की गई। उन्हें अंग्रेज शासकों का संरक्षण प्राप्त था। अत: वे खरवार पर किसी भी तरह का अत्याचार करने में हिचकते नहीं थे।

चेरो के अंतिम राजा चुरामन राय की अक्षमता और अंग्रेजों के अत्याचार के कारण 1800 ई. में चेरो विद्रोह हुआ, जिसमें कुछ खरवार भी शामिल थे। 1817 में पुन: चेरो और खरवार विद्रोह किये गये और 1818 में ब्रिटिश सरकार द्वारा पलामू का शासन अपने हाथ में ले लिया गया। पलामू में कुछ दिनों तक शान्ति रही, परन्तु 1832 में 'कोल विद्रोह' हुआ, जिसमें खरवारों ने काफी बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। उसी प्रकार 1881 में हुआ "सरदार आन्दोलन' भी खरवारों से जुड़ा हुआ आन्दोलन था। यह जमीन से संबंधित मुल्क की लड़ाई थी, जो 40 वर्षों तक चली।[1] *

---

1 एलगुलान, डा. कुमार सेरेश सिंह, पृ. 18 से 21, एकता प्रकाशन, गंटुसाई, चाईबासा (सिंहभूम), 1991

1857 में सिपाही विद्रोह के समय जनजातीय क्षेत्र में भी अंग्रेजों के विरुद्ध काफी जोरदार आन्दोलन चला था। इस आन्दोलन का नेतृत्व पलामू में भोगता खरवार कर रहे थे। उस समय पलामू में भोगताओं के सरदार थे- नीलाम्बर और पीताम्बर, जो सहोदर भाई थे। दोनों भाई गुरिल्ला युद्ध में बड़े निपुण थे। उस समय सर्व प्रथम रामगढ़ छावनी के देशी पलटन के दो सिपाहियों ने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह किया था। वे अपने अफसरों को मारकर और बैरकों को जलाकर भोजपुर के विद्रोही बाबू कुंअर सिंह के साथ मिलने चल पड़े थे। इधर नीलाम्बर-पीताम्बर भी भोगता खरवार की एक टुकड़ी के साथ राँची-पलामू सीमा पर उनकी राह देख रहे थे। इन दोनों दलों के संयुक्त अभियान एवं हमले से एवं ललकार से पलामू की अन्य जनजातियों में भी विद्रोह की आग भड़क उठी। इनके जबर्दस्त दल ने अक्टूबर महीने में ठकुराइयों (अंग्रेजों के पीठू जमीन्दार) के रंका और चैनपुर के गढ़ों को घेर लिया। वहाँ वे उतने सफल नहीं हुए। वहाँ से वे चेरो जागीरदार देवी बक्स राय के 500 सैनिकों के साथ मिलकर लेसलीगंज की फौजी छावनी पर हमला कर थाना और तहसील कचहरी को लूट लिया और उनके भवनों में आग लगा दी। वहाँ के अफसर और कर्मचारी भागकर नवागढ़ राजा के यहाँ जा कर छिप गए। 7 नवम्बर, 1857 को ले. ग्राह्य 60 सिपाहियों की एक टुकड़ी लेकर लेसलीगंज पहुँचा और कुछ समय तक लड़ने के बाद विद्रोहियों का दल सुरगुजा की पहाड़ियों की ओर चला गया। ले. ग्राह्य के पास भी अपर्याप्त सेना थी। इसलिए वह चैनपुर राजा के यहाँ ठहर कर सासाराम से सेना की एक टुकड़ी आने तक वहीं प्रतीक्षा करता रहा।

सासाराम के कलक्टर और ले. कोटर अपने साथ के सैनिकों और देव राजा के सैनिकों को साथ लेकर अकबरपुर के पास सोन नदी को पार कर साहपुर पहुंचे। देवी बक्स राय के सैनिकों के साथ नीलाम्बर-पीताम्बर ने अंग्रेज सैनिकों पर अचानक हमला कर दिया, परन्तु अंग्रेजी सेना के सामने वे टिक नहीं सके और उन्हें पीछे हटना पड़ा। देवी बक्स राय गिरफ्तार हो गया। इस सेना ने ग्राह्य को चैनपुर जाकर उसका उद्धार किया और विद्रोहियों का दमन करते हुए सेना की एक टुकड़ी सासाराम चली गयी। नीलाम्बर-पीताम्बर अपने साथियों के साथ भागकर मनिका के जंगल में जा छिपे।

जनवरी, 1958 में विद्रोहियों का एक दल के मिर्जापुर से आकर पलामू के विद्रोही ने खरवारों को उत्साहित किया। विद्रोहियों द्वारा मनिका आदि कई थाने लूटे और जलाये गए। विद्रोहियों का एक दल लूट के माल और हथियारों के साथ पलामू किले में छिपा था। 21 जनवरी को कर्नल डालटन, मेजर मैकडोनल और परगणैत जगतपाल सिंह एक सम्मिलित सेना लेकर मनिका से विद्रोहियों को खदेड़ते हुए

पलामू किला पहुँचे। भोगता और चेरो विद्रोहियों से एक बार फिर घमसान लड़ाई हुई। विद्रोहियों के पाँव फिर उखड़ गए। वे भाग कर पुनः जंगल में छिप गए। परन्तु मनिका के टिकैत और ठकुराई भिखारी सिंह खरवार पकड़ लिए गए और उन्हें फाँसी दे दी गई। इसके बाद डालटन ने ठकुराई किशुन दयाल को सेना की एक टुकड़ी देकर विद्रोहियों को पकड़ने के लिए भेजा। परन्तु नीलाम्बर-पीताम्बर उसके हाथ नहीं लगे और वे जंगल में चले गए। इससे डालटन बहुत क्षुब्ध हुआ और उन दोनों को पकड़ने के लिए अपने गुप्तचरों का जाल बिछा दिया और अपने सैनिकों को खुलेआम मार-काट और लूट-पाट करने की छूट दे दी। भोगता खरवार बड़ी बेरहमी से दमन के शिकार होने लगे। नीलाम्बर-पीताम्बर को पकड़ने वाले को जागीर देने की घोषणा की गई।

कहा जाता है कि अपने निरपराध भाई-बहनों का सर्वनाश होते देख दोनों भाइयों (नीलाम्बर और पीताम्बर) को बड़ा खेद हुआ। एक रात दोनों अपने एक गुप्त ठिकाने पर अपने सभी सगे-संबधियों को बुलाया और अपने परिवार के बाल-बच्चों से अन्तिम भेंट की योजना बनाई। परन्तु यह भेद किसी तरह अंग्रेजों तक पहुँच गया। अंग्रेजी सेना की एक टुकड़ी वहाँ आकर उस पूरे क्षेत्र को घेर लिया। नीलाम्बर-पीताम्बर नंगी तलवार भांजते बाहर आये और सैनिकों से भिड़ गए। परन्तु शीघ्र ही पकड़ लिए गए। डालटन ने उन्हें अपनी अधीनता स्वीकार करने और शान्तिपूर्वक रहने का शपथ लेने पर मुक्त कर देने का प्रस्ताव रखा। परन्तु वे दोनों पराधीनता स्वीकार कर अपनी स्वतंत्रता और जाति का गौरव नष्ट नहीं करना चाहते थे। अतः दोनों शूर-वीर भाइयों को बड़ी निर्दयता-पूर्वक एक पेड़ के नीचे फाँसी पर लटका दिया गया। इस तरह खरवार और देश के दो सपूत मातृभूमि की बलिवेदी पर कुर्बान हो गए। उस फँसियारे वृक्ष और उनके छिपने वाली गुफा की लोग आज भी पूजा करते हैं, जहाँ दोनों भाइयों को फाँसी दी गई थी।[1]

1930 के आस-पास कांग्रेस द्वारा जनजातियों को जंगल पर उनके अधिकार को वापस दिलाने और जंगलों से लकड़ी प्राप्त करने की छूट के लिए 'वन सत्याग्रह' का कई जगहों पर आयोजन किया गया। कोयल नदी के दक्षिण जंगलों में बसने वाली बहुसंख्यक एवं कृषि से जुड़ी जन-जाति को कांग्रेस द्वारा इस आन्दोलन में शामिल किया गया। उनके बीच से कई स्वतंत्रता सेनानी उभर कर सामने आये। आदिवासी महासभा के आह्वान पर खरवारों द्वारा इस आन्दोलन में सम्मिलित होने

1 पलामू का ऐतिहासिक अध्ययन, हवलदारी राम गुप्त "हलधर", (खरवार जाति का इतिहास हलधर प्रेस, डालटेनगंज, 1972, पृ. 54 से 57

के फलस्वरूप चेरो तथा अन्य जन-जाति के लोग भी जंगल पर स्वायत्तता के लिए किए गए आन्दोलन में शामिल हो गए। इससे खरवारों के मन में यह विश्वास जगा कि जंगल और जमीन पर उनका अधिकार शीघ्र मिल जायेगा और वे 'स्वराज' के युग में आ जायेंगे। इस संदर्भ में 1930-40 के बीच कांग्रेस कार्यकर्ताओं ने उनके मन में काफी विश्वास जगाया था।

आजादी मिलने के बाद 1950 में जमींदारी प्रथा का अन्त हो गया, जो खरवारों पर होने वाले जुल्म का "ताबूत" सिद्ध हुआ। रंका राज का और उनके अत्याचारों का भी अन्त हो गया। जंगल भी जमीन्दारी के साथ सरकार के अधिकार में चला गया। इसके बाद वनों से घर के लिए एवं जलावन के लिए लकड़ी, फल-फूल आदि जंगल से बिना शुल्क के प्राप्त करने की छूट मिल गई, जिससे खरवार काफी खुश थे। परन्तु वन अधिनियम के लागू होते ही वे वन एवं वन्य भूमि के अधिकार से वंचित हो गए। इसके लिए उन्हें सरकार की स्वीकृति लेनी आवश्यक हो गई। अत: 1950 के मध्य में वे तीन मुद्दों के लेकर आन्दोलनरत हो गए, जिसका नेतृत्व फेटल सिंह खरवार द्वारा किया गया। उनके मुख्य मुद्दे थे :

1. जंगल की उपज को नि:शुल्क प्राप्त करने का अधिकार।
2. लकड़ी को नि:शुल्क प्राप्त करने का अधिकार।
3. जमीन के लगान की पूर्ण या आंशिक माफी।

फेटल सिंह खरवार का जन्म 'सूर्यवंशी' शाखा में हुआ था और वे एक छोटे किसान थे। खरवार आन्दोलन का नाम 'वन सत्याग्रह' किया गया। फेटल सिंह ने इस सत्याग्रह को 1957 में पूरी तरह संगठित किया और यह आन्दोलन मध्य प्रदेश के खरवारों में भी फैल गया। उन्होंने बलियागढ़ जंगल में जंगल काटने वाले ठीकेदारों को और मजदूरों को शीघ्र काम छोड़कर चले जाने की चेतावनी दी। उन्होंने 'ढेलवाँस' (ढेला या रोड़ा फेंकने वाला उपकरण) का प्रयोग कर उनको भगा दिया। खरवारों की एक "भगत पार्टी" बन गई, जिसने लोगों को जमीन का लगान देने की मनाही कर दी और जंगल से लकड़ी और वनोत्पादों को बिना शुल्क दिये लाने का ऐलान कर दिया। उन लोगों ने एक 'स्वतंत्र भारत सरकार' का निर्माण कर दिया और सरकारी अफसरों और कर्मचारियों के खिलाफ गिरफ्तारी का वारंट जारी कर दिया। फेटल सिंह के अनुयायियों ने जंगल का कारोबार ठप्प कर दिया। उन्होंने यह प्रचारित कर दिया कि - "पुलिस यदि गोली चलायेगी तो उसका बुलेट पानी बन जायेगा। अत: उन्हें किसी से डरने की जरूरत नहीं है।"

यह आन्दोलन जंगल की आग की तरह चारों तरफ फैल गया। वे गाँधी जी का उद्धरण देकर कहते – ''जोतने वाला ही जमीन का मालिक होगा। हमलोग मेहनत कर मर रहे हैं और दूसरा मौज-मस्ती कर रहा है। बड़े लोग हमारे अधिकारों को छिन लिए हैं। अब हम उन्हें जंगल में घुसने नहीं देंगे। न तो सरकार ने और न ही जमीन्दारों द्वारा जंगल लगाया गया है और न पटाया गया है। यह हम लोगों का है और हमलोग अपना 'भारत राज' स्थापित करेंगे।' उनके द्वारा सभाओं और गाँवों में गाये जाने वाले गीतों के भाव इस प्रकार के थे :

''जमीन्दारी-प्रथा टूट गई और उसके साथ ही किसानों की ''बेठबेगारी प्रथा' खत्म हो गई। बड़े बाबू लोग अब कुदाल चला रहे हैं। हम लोगों को पुलिस और चौकीदार नहीं चाहिए। हे किसान भाई, आपलोग सोना नहीं। एक बिहारी भेड़िया छोटानागपुर में आ गया है। उसे भगाने के लिए पत्थर इकट्ठा करो और उसे मार भगाओ।''

मध्य प्रदेश के सीमावर्ती गाँव खोबी में चुनी सिंह के नेतृत्व में आन्दोलन हुए। 16 दिसम्बर, 1957 से 12 जनवरी, 1958 के बीच उसके अनुयायियों ने सरकारी पुलिस स्टेशन एवं कार्यालयों पर कई हमले किए। पुलिस द्वारा गोली चलाये जाने से दो लोगों की मौत हो गई। उसके कई सप्ताह बाद फेटल सिंह ने भी उसी प्रकार के हमले की योजना बनाई। इसकी जानकारी होते ही प्रशासन द्वारा उसे गिरफ्तार करने की योजना बनाई गई। फेटल सिंह का घर पलामू के बहाहार गाँव में था। जब पुलिस और मजिस्ट्रेट उसके घर के पास पहुंचे तो वहाँ 200 लोगों को पारम्परिक हथियारों से लैस होकर खड़ा पाया। पुलिस के आते ही फेटल सिंह के घर की ओर बढ़ने वाले लोगों की संख्या में वृद्धि होने लगी। इस पर वहाँ तैनात दंडाधिकारी ने भीड़ को शीघ्र वहाँ से हट जाने का आदेश दिया अन्यथा बल प्रयोग द्वारा भीड़ को हटाने की चेतावनी दी। इसके बाद पुलिस अधीक्षक स्वयं आगे बढ़कर फेटल सिंह तथा अन्य चार लोगों का नाम पढ़कर उनके खिलाफ वारंट दिखाकर उन्हें आत्मसमर्पण करने का आदेश दिया। इस पर फेटल सिंह तथा उसके साथियों ने आत्मसमर्पण न करने की बात कह कर किसी भी स्थिति का सामना करने की घोषणा की।

इस पर अनुमंडलाधिकारी ने लाठी चार्ज करने का आदेश पुलिस को दिया। लाठी चार्ज होते ही उधर से खरवारों ने ढेलवाँस से रोड़े बरसाना शुरू कर दिया। इससे पुलिस इन्सपेक्टर घायल हो गया। तब पुलिस को गोली चलाने का आदेश अनुमंडलाधिकारी द्वारा दिया गया। इसी बीच एक आदमी तलवार भांजते हुए आगे बढ़ रहा था, जो गोली लगने से मारा गया। स्थिति की गम्भीरता को देख कर फेटल

– सिंह घर के भीतर जाकर छिप गया। गोली चलते ही सभी लोग भागने लगे।

पुलिस फेटल सिंह के घर में घुस गई और फेटल सिंह के साथ उसके सलाहकार सुरगुजा निवासी महादेव सिंह को भी गिरफ्तार कर लिया। उसके बाद अन्य चार वारंटी के साथ-साथ पुलिस पर हमला करने के जुर्म में ठाकुर प्रसाद सिंह नामक व्यक्ति भी गिरफ्तार कर लिया गया। सभी गिरफ्तार व्यक्ति जेल भेज दिए गए। परन्तु अपने अच्छे व्यवहार एवं आचरण के फलस्वरूप फेटल सिंह जल्द ही जेल से मुक्त कर दिया गया। इस प्रकार "वन या जंगल-सत्याग्रह' का समापन हुआ।'[1]

छोटानागपुर के पलामू, राँची (गुमला एवं लोहरदगा) आदि जिलों में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक सुधार के लिए 1917 ई. में 'टाना भगत' आन्दोलन प्रारम्भ हुआ था, जो अंग्रेजों, जमीन्दारों और ठीकेदारों के शोषण के खिलाफ अहिंसात्मक आन्दोलन था। इसकी शुरुआत गुमला जिला के बिशुनपुर प्रखंड के चिंगरी ग्रामवासी जतरा भगत (उराँव) द्वारा की गई थी। इस आन्दोलन में खरवार भी शामिल हुए थे। इस आन्दोलन के आर्थिक एवं राजनैतिक पक्ष थे। :

1. शोषण से मुक्ति 2. भूमि पर स्वामित्व 3. लगान नहीं देने का संकल्प 4. खट्टाखुडू (शासक) को मार भगाना।

इस आन्दोलन ने गाँधी जी के सम्पर्क से राष्ट्रीय आन्दोलन का रूप ले लिया। इसके चलते लगान न देने के कारण अनेकों जनजातियों की जमीनें नीलाम हो गईं। गुमला जिला के महेन्द्र सिंह, बहाल सिंह, साम शरण सिंह, नन्द किशोर सिंह, पिलई खरवार आदि खरवार जन-जाति के पूर्वजों की जमीनें नीलाम हो गई थीं, जैसा कि सर्वेक्षण के क्रम में पता चला। नीलाम हुई जमीनों की पुनः वापसी का प्रयास प्रशासन द्वारा किया जाता रहा है और कुछ जमीनें वापस भी हुई हैं। आजादी मिलने के पचास वर्षों बाद भी टाना भगत आन्दोलन थमा नहीं है और वह आज भी किसी न किसी रूप में चल रहा है।

खरवार जन-जाति के वर्तमान नेतृत्व को पुरानी पीढ़ी के साथ-साथ युवा पीढ़ी ने संभाला है। इन लोगों में निम्नांकित व्यक्तियों के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं:-

---

1 ट्राइबल मूवमेन्टस इन इन्डिया, खण्ड-2, डा. के. एस. सिंह, मनोहर पब्लोकेशन, नयी दिल्ली, पृ. 187 से 210

1.	स्व. छेद मंडल, बड़ी कोदरजना, साहेबगंज	कांग्रेस पार्टी के सक्रिय सदस्य के रूप में स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लिया और कई बार जेल गए। उनका एक स्मारक बनाया गया है। उन्होंने कुछ भविष्यवाणी की थी- 'बारह कोस में दीया जलेगा (तेल की कमी) बोतल में चावल मिलेगा (अभाव एवं महंगाई) सभी जाति एक साथ खायेंगी (छुआछूत मिटेगा)
2.	श्री अम्बिका प्र., बरोइया, पीरपैंती, भागलपुर (विधायक) (बी. ए. बी. एल.)	सी.पी.आई. के 1967 ई. से 6 बार वे विधान सभा के लिए चुने गए और वर्तमान में विधायक दल (सी.पी.आई) के नेता हैं। आप 1942 और 1947 के आन्दोलनों में भाग लिए। वे खरवार जन-जाति के कल्याण एवं विकास के लिए दृढ़-संकल्प हैं।
3.	श्री यमुना सिंह, (भू. पू. विधायक) बरवाडीह, पलामू।	भारतीय स्वतंत्रता-आन्दोलन से जुड़े रहे। कई बार विधान सभा के सदस्य रहे। वर्तमान में भारतीय जनता पार्टी के पलामू जिला के अध्यक्ष हैं। खरवार जन-जाति के विकास के लिए सदा सक्रिय रहे हैं।
4.	श्री धनिक लाल सिन्हा, ग्राम-बलिया, गोपालपुर प्रखंड, भागलपुर (से. नि. जिला कल्याण पदाधिकारी)	1992 ई. में संस्थापित 'अखिल भारतीय खरवार (अनु. जन-जाति) कन्याण समिति के अध्यक्ष के रूप में अपनी सेवा दे रहे हैं। उनके लिए विभिन्न प्रकार के कल्याणकारी कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं।
5.	श्री दयाली खरवार, पीरी, गारू, पलामू।	खरवार जन-जाति के सामाजिक एवं शैक्षिक विकास के लिए कार्यरत हैं एवं नशाबन्दी तथा पर्यावरण सुधार कार्यक्रम से भी जुड़े हुए हैं। आप विकास भारती, बिशुनपुर के भी सक्रिय कार्यकर्ता हैं।
6.	श्री देवतु खरवार, चिंगरी, बिशुनपुर, गुमला।	तदैव

7.	श्री रामानन्द खरवार, कोने, लातेहार, पलामू।	आप नीलाम्बर-पीताम्बर के वंशज हैं और उनके पदचिह्नों पर चलकर अपनी जाति के विकास एवं सुधार में कार्यरत हैं।
8.	श्री फुलदेव खरवार, जोरीघाघरा, बिशुनपुर, गुमला।	खरवार जन-जाति के सामाजिक एवं शिक्षा के विकास तथा नशाबन्दी के कार्य में लगे हुए हैं। आप विकास भारती, बिशुनपुर से भी जुड़े हुए हैं।
9.	श्री तुलसी सिंह खरवार, ओरमांझी, राँची।	आप 'देशवारी खरवार उत्थान समिति' के अध्यक्ष हैं और इस संस्था के माध्यम से खरवार के सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक आदि विकास के कार्य में लगे हुए हैं।
10.	श्री शंकर सिंह खरवार, अधौरा, भभुआ (कैमूर)	आप 'सूर्यवंशी खरवार' के विकास एवं कल्याण के लिए कार्यरत हैं।

इसके अलावा भी अनेक खरवार युवक अपने समाज के विकास के लिए चिन्तनशील हैं। सही नेतृत्व मिलने पर यह प्रबुद्ध जन-जाति विकास के नये प्रतिमान स्थापित कर सकती है।

—— ** ——

अध्याय - 9

धार्मिक व्यवस्था

(क) संगठन

खरवार जन-जाति के धर्म एवं धार्मिक व्यवस्था के संबंध में रस्सेल, डालटन, संडर्स, रिजले आदि ने उन्हें 'हिन्दु धर्मावलंबी' माना है। यह तथ्य 1981 की जनगणना के अवलोकन सें भी सिद्ध होता है कि लगभग 99 प्रतिशत खरवार 'हिन्दु धर्म' के मानने वाले हैं, जिसकी विवरणी परिशिष्ट (टेबुल-33) पर दी जा रही है।

खरवार जन-जाति के लोग, विशेषकर जो रोहतासगढ़ से संबंधित है, अपने को रोहिताश्व के वंशज 'सूर्यवंशी राजपूत' मानते हैं। साथ ही, उनके मानव-वैज्ञानिक और समाज-शास्त्रीय इतिहास और उससे संबंधित विभिन्न विद्वानों के विचारों और तथ्यों से स्पष्ट होता है कि 'खरवार' द्रविड़ मल की जन-जाति है। अतः जनजातीय धर्म एवं धार्मिक परम्पराओं का प्रमाण भी उनके धार्मिक अनुष्ठान में मिलता है। यह सत्य है कि खरवार जन-जाति के लोग काफी समय से विभिन्न जनजातियों और जातियों के बीच में रहते आये हैं और धार्मिक व्यवस्था तथा सोच पर भी उनका प्रभाव पड़ा है। जनजातीय क्षेत्र में बसने वाले खरवार समुदाय-धार्मिक अवधारणाओं और लोक-विश्वासों पर इस क्षेत्र की जनजातियों (उराँव, मंडा, बिरजिया, असर, बिरहोर आदि) के धर्म और जादू का विशेष प्रभाव पड़ा है। आदि काल से ही वे प्राकृतिक एवं अतिप्राकृतिक शक्तियों के पुजारी रहे हैं। उनके धर्म और धार्मिक व्यवस्था के आधार भी अलौकिक शक्ति से संबंधित लोक-विश्वास और धार्मिक तथा आनुष्ठानिक क्रियाएँ रही हैं।

अन्य जनजातियों की तरह खरवार भी "जीववादी धर्म' (एनिमिस्टिक) रेलिजियन) को मानते रहे हैं। एडवर्ड टायलर ने जीववाद या आत्मवाद को दो वृहत् विश्वासों में विभाजित किया है :[1]

1. मनुष्य की आत्मा या अस्तित्व मृत्यु या शरीर के नष्ट होने के पश्चात् भी बना रहता है।
2. मनुष्य की आत्माओं के अतिरिक्त शक्तिशाली देवताओं की अन्य आत्माएँ भी होती हैं।

---

1 प्रिमिटिव कल्चर, एडवर्ड बी. टेलर, जान मुरे, लन्दन, 1913, पृ. 426

जनजातीय अवधारणा के अनुसार शरीर में दो आत्माएँ होती हैं :

1. स्वतंत्र आत्मा - जो सो जाने पर शरीर से बाहर निकल घूम-फिर कर पुनः शरीर में वापस आ जाती है। उनके इस लोक-विश्वास का आधार "स्वप्न" या सपना है।

2. शरीरी आत्मा - जो एक बार शरीर को छोड़कर चली जाती है. वह पुनः उस शरीर में वापस नहीं आती। इसका प्रमाण मृत्यु मानते हैं। ये दोनों जातीय परम्परा के लोक-विश्वास खरवार में भी प्रचलित हैं।

टेबुल - 25

(धर्म-संबंधी जनगणना - 1981)[1]

बिहार :- (खरवार)

क्र.सं.	धर्म का नाम	मानने वालों की जनसंख्या			
		ग्रामीण		शहरी	
		पुरुष	महिला	पुरुष	महिला
1.	2.	3.	4.	5.	6.
1.	हिन्दु	1,11,181	1,07,593	1,665	1,146
2.	मुस्लिम	64	47	10	9
3.	क्रिश्चियन	108	72	54	39
4.	सिख	1	-	-	-
5.	बुद्धिस्ट	-	-	-	-
6.	जैन	39	35	-	-
7.	अन्य	342	330	10	7

(ख) देवी-देवता :

खरवार जन-जाति बिहार में कैमूर (दक्षिण-पश्चिम) से लेकर कटिहार-पूर्णियाँ) (पूरब-उत्तर) तक बसी हुई है। इस कारण उनके देवी-देवता भी कुछ तो पुरानी परम्परा से पूज्य हैं और कुछ स्थानीय रूप से ग्रहण किये गये हैं, जिनका वे पूजा-पाठ करते हैं। अतः आवासीय क्षेत्रानुसार उनका विश्लेषण अधिक उपयुक्त एवं समीचीन होगा।

1. कैमूर एवं रोहतास क्षेत्र :- इस क्षेत्र के खरवार अपने को 'सूर्यवंशी' कहते हैं और अधिकांशतः हिन्दु देवी-देवता की पूजा करते हैं। उनके मुख्य देवी-देवता हैं

1 जनगणना, 1981, भारत सरकार।

1. काली माई या देवी माई – इनकी पूजा वे चैत माह की रामनवमी तिथि को करते हैं। आश्विन में दुर्गापूजा के समय भी इनकी पूजा होती है। वे बकरे की बलि देकर उनकी पूजा करते हैं।

क्रुक्स ने पूर्व में उनके द्वारा काली के लिए दी जाने वाली नरबलि की भी चर्चा की है। उन्होंने लिखा है कि 1857 के सिपाही-विद्रोह के समय जो सिपाही उनके द्वारा पकड़े गए, उनकी उन्होंने दी बलि चढ़ा दिये।[2]

परन्तु अब नरबलि की परम्परा नहीं है। डालटन के अनुसार वे हर तीन वर्ष पर 'सरना' स्थल में देवी के लिए भैंसे की बलि देते थे।[3]

2. हनुमान जी या महाबीर जी – वे हनुमान जी की पूजा बराबर करते हैं। परन्तु विशेष रूप से रामनवमी के दिन वे नया महाबीरी झंडा लगाकर और आटे का मीठा पकवान (रोटी) या लड्डू चढ़ाकर उनकी पूजा-अर्चना करते हैं।

3. सूर्य – सूर्य को वे सर्वशक्तिमान मानते हैं और कार्तिक तथा चैत्र मास में 'छठ व्रत' करते हैं। यह व्रत काफी पवित्रता से करते हैं और फल तथा प्रसाद के साथ सूर्य को दूध का अर्घ्य चढ़ाते हैं। कुछ लोग विशेष रूप से मनौती मानकर भी इसे करते हैं। मुख्यत: यह व्रत स्त्रियाँ करती हैं। कहीं-कहीं इसे पुरुष भी करते हैं।

4. लक्ष्मी जी – दीपावली में वे लक्ष्मी जी की पूजा करते हैं और धन-सम्पन्नता की कामना कर प्रसाद चढ़ाते हैं।

5. परमेश्वरी – इस देवी की वे पूजा विभिन्न अवसरों पर करते हैं। खेती एवं परिवार की सम्पन्नता के लिए इनकी पूजा मुख्यत: स्त्रियाँ करती हैं।

6. धरती डिहवार – यह पूजा कृषि-कार्य शुरू करने के पूर्व की जाती है। इसमें कहीं-कहीं मुर्गे या बकरे की बलि दी जाती है।

7. दुर्गा – दुर्गापूजा के समय ही इनकी पूजा कोई-कोई बकरे की बलि देकर भी करते हैं।

अब बहुत से खरवार विष्णु, शिव, पार्वती, गणेश आदि की भी पूजा करते हैं। वे प्रेतों में ब्रह्म पिशाच, चुड़ैल, किच्चिन, दानव आदि की शान्ति के लिए ओझा की मदद लेते हैं।

---

2 रेलिजन एन्ड फाकलोर ऑफ नादर्न इन्डिया, खंड-2, श्री क्रुक, पृ. 170

3 डिस्क्रीप्टिव एथनोलॉजी ऑफ बंगाल, ई. टी. डालटन, 1960, पृ. 121/126

उनका पूजा-स्थल कोई मन्दिर, चबूतरा, पीपल का वृक्ष आदि होता है। उनका धार्मिक अनुष्ठान ब्राह्मण द्वारा सम्पन्न कराया जाता है। केवल बलि देने वाला अलग व्यक्ति होता है। भूत-प्रेत की शान्ति के लिए उनके गाँव में ओझा होता है। वे डायन से भी काफी डरते हैं और उससे दूर रहते हैं।

2. जनजातीय क्षेत्र पलामू आदि :- इस क्षेत्र के खरवार में भी कुछ अपने को सूर्यवंशी और कुछ देशवारी कहते हैं। इनकी धार्मिक अवधारणा कैमूर के खरवारों से थोड़ी भिन्न है। वे हिन्दु देवी-देवता के साथ-साथ जनजातीय देवी, देवता, और प्रेतों को मानते हैं और विभिन्न अवसरों पर उनकी पूजा करते हैं।

पलामू गजेटियर (1926) में खरवार के धार्मिक लोक-विश्वास और देवी-देवता के विषय में यह लिखा गया है कि - 'खरवार अब हिन्दु की तरह ब्राह्मण से पूजा-पाठ करवाते हैं। परन्तु काफी संख्या में जनजातीय धर्म और संस्कृति को भी मानते हैं। वे ओझा-डायन पर भी विश्वास करते हैं। गजेटियर में निम्नांकित देवी-देवताओं का उल्लेख है :-[1]*

1. परमेश्वर - सबसे बड़ा देवता। 2 चन्दर राय - कोरवा जनजाति का प्रेत।
3. छत्तर राय - मारा गया सैनिक का प्रेत। 4. गोरैया - खरवार प्रेत।
5. टंकार मल - राजपूत राजा का प्रेत। 6. मेहतर पलहट - भाट प्रेत।
7. पुरबिया - भूइयाँ का देवता। 8. चन्डी - देवी।

9. मुचुक रानी दुरजगिया देवता - यह खरवारों का एक विशिष्ठ प्रेत है जिसका वास स्थल अपने 'उप्पा' पर है। पहाड़ पर स्थित 'जुरुआहार' गाँव में उसका नैहर (मायका) है, जिसे 'बहुराज पहाड़' भी कहते हैं। खरवार उसे बहुत आदर और श्रद्धा से पूजते हैं। वर्ष में कई बार प्रसन्न करने के लिए बलि चढ़ाते हैं। प्रत्येक तीन वर्ष पर उसका विवाह सम्पन्न होता है। शादी के दिन जरुआहार और उक्कामांड गाँव के लोग पहाड़ से नीचे उतर कर उसके सम्मान में गीत गाते हैं। उनमें से एक दल पुजारी बन जाता है और नाचते-गाते आकर बारात में मिल जाता है। इसके बाद सभी पहाड़ की गुफा में जाते हैं और पुजारी बना व्यक्ति गुफा से 'रानी' के प्रतीक के रूप में एक गोल, चिकना और सिन्दूर लगा पत्थर बाहर लेकर आता है। उसके बाद रानी के ऊपर तसर सिल्क का कपड़ा रख दिया जाता है। वहाँ से वे रानी को लेकर वर के गाँव- उक्कामांड गाँव (कांडी पहाड़ी) के लिए चल देते हैं। वहाँ

---

1 बिहार एन्ड उड़िसा गजेटियर्स - पलामू, एल. एस. एस. ओ मल्ले एवं पी. सी. टेलेन्टस 1926, 4.-57-58

पहुँचने पर रानी के स्वागत में कई तरह के चढ़ावा चढ़ाये जाते हैं। रानी को वहाँ एक गुफा में रखा जाता है, जहाँ 'अगरिया' जाति का दुल्हा रहता है। वहाँ गुफा में रानी के प्रतीक पत्थर को लुढ़का देते हैं और जब वह काफी नीचे चला जाता है, तो हंसी-खुशी पहाड़ से नीचे आ जाते हैं और मुचुक रानी की शादी की खुशी में रात भर नाचते-गाते रहते हैं।

डॉ. सिंह ने भी 'दुल्हा देव' को खरवारों का बड़ा या मुख्य देवता माना है। वह भी "दुरजगिया देव' का ही एक प्रतिरूप है।[2]

डाल्टन ने भी उनके अनेक देवी-देवताओं का वर्णन प्रस्तुत किया है - [3]*.

1. दुआर पहाड़ - पहाड़ एवं ग्राम देवता। 2. धरती - धरती माता।

3. पुरगहैली - ग्राम देवता। 4. उकनाई - देवी 5. डूरा - डरहा प्रेत।

6. चिन्दोल - देवता। 7. चन्डा - देवी (चन्डी) 8. परवीन - देवी।।

श्री डाल्टन के अनुसार खरवार का पुजारी बैगा या पाहन होता है, जो कोल (उराँव), भूइयाँ या परहिया जाति का होता है। उनके अनुसार खरवार अपने देवी-देवता और प्रेत को संतुष्ट करने के लिए भैंसा, बकरा और भेंड़ा की बलि देते हैं।

श्री प्रसाद ने भी खरवार की धार्मिक अवधारणा के संबंध में प्रकाश डालते हुए उनके देवी-देवताओं, पुजारी एवं बलि आदि के संबंध में संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया है।[4]

उनके अनुसार खरवार बैगा और ब्राह्मण - दोनों से पूजा-पाठ करवाते हैं। वे हिन्दु देवी-देवता की पूजा के समय (दशहरा, दीपावली, छठ, महाबीरी झंडा आदि) ब्राह्मण से पूजा करवाते हैं और पूजन सामग्री में दूध, फल, फूल, मिठाई आदि चढ़ाते हैं। परन्तु सरहुल, करमा, नवाखानी आदि जनजातीय पर्व के अवसर पर पाहन या बैगा से पूजा करवाते हैं और बकरा, मुर्गा आदि की बलि देते हैं। ऐसे अवसर पर वे हंड़िया (चावल की शराब) भी देवताओं को अर्पित करते हैं। उनके मुख्य देवी-देवता हैं:-

---

2 द सिड्यूल्ड ट्राइब्स, पिपुल ऑफ इन्डिया, खंड-3, डा. के.एस. सिंह, पृ. 493

3 डिस्क्रीप्टिव एथनोलॉजी ऑफ बंगाल, ई. टी. डालटन, पृ. 121/126

4 लैंड एन्ड पिपुल ऑफ ट्राइब्स बिहार, नर्मदेश्वर प्रसाद, बिहार जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, राँची, 1961 पृ. 128/129

1. मुचुक रानी, दुरजगिया य पछियारी – इस देवी को वे 'रक्सेल राजा' की पत्नी मानते हैं। खरवारों के अनुसार पलामू में चेरो के पहले रक्सेल राजा राज करते थे। इस देवी को खुश करने के लिए पाठी की बलि दी जाती है।

2. दुआरपर – ग्राम देवता – इसके लिए सूअर की बलि दी जाती है।

3. धरती – भूमि की देवी – कृषि कार्य शुरू करने के पहले सूअर की बलि दी जाती है।

4. देवी –
5. चन्डी – } इन सभी देवियों को संतुष्ट करने के लिए बकरा, सूअर और मुर्गा की बलि दी जाती है।
6. डरहा –

7. डहकिन –

पलामू में सर्वेक्षण के क्रम में खरवार द्वारा पूजित निम्नांकित देवी, देवता एवं प्रेत के संबंध में सूचना मिली। उसी प्रकार राँची (गुमला आदि), भागलपुर आदि क्षेत्रों में पूजे जाने वाले देवी-देवता, पूजा-स्थल, पुजारी आदि के संबंध में प्राप्त सूचनाओं को निम्नांकित टेबुल द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है:-

टेबुल - 26

1. पलामू

क्र. सं.	देवी/देवता प्रेत का नाम	किस मूल का है	पूजा की समग्री	पूजा स्थल	पुजारी
1.	2.	3.	4.	5.	6.
1.	पछियारी भूत	जनजातीय	मुर्गा, बकरा सिन्दूर, अरवा चावल आदि।	घर पर	घर का मुखिया
2.	मुआ (प्रेत)	तदैव	मुर्गा आदि	घर पर	तदैव
3.	सरना देवी	तदैव	बकरा, मुर्गा आदि	सरना स्थल	पाहन
4.	दुल्हा देव	तदैव	पूर्व में वर्णित मुचुक रानी की पूजा है।		
5.	हनुमान जी	हिन्दु	लड्डू या मीठा रोटी	मंदिर या घर	ब्राह्मण
6.	लक्ष्मी जी	तदैव	तदैव	तदैव	तदैव
7.	गणेश जी	तदैव	तदैव	तदैव	तदैव
8.	गोहाल देवता	तदैव एवं जनजातीय	तदैव	गोशाला	घर का मुखिया

पलामू में गोहाल के समय पुजारी इस मंत्र का पाठ अवश्य करता है:

"पहिले धरती मुआ बांधी, आजाअरजे गाय-भइंसिया, आजी अरजे घी का दीया। डारू दुधा, डारू धुबिया, आकास उड़ि गेल।'

2. **राँची, गुमला आदि :-** इस क्षेत्र के खरवार 'सरना' और हिन्दु धर्म - दोनों मानते हैं।

1.	2.	3.	4.	5.	6.
1.	सरना देवी या बेसेना	जनजातीय	12 प्रकार का चेंगना	सरना स्थल	पाहन
2.	करम देवता	जनजातीय	फूल, अक्षत जई आदि।	आंगन में	पाहन
3.	खरवज	तदैव	मुर्गा, अक्षत आदि	सरना स्थल	तदैव
4.	मुआ (प्रेत)	तदैव	तदैव	घर में	घर का मुखिया
5.	डरहा (प्रेत)	तदैव	तदैव	तदैव	पाहन एवं घर का मुखिया,
6.	नगेसिया भूत	तदैव	तदैव	तदैव	तदैव
7.	देवाहर या देंवड़ा	तदैव	तदैव	तदैव	तदैव
8.	पाट देवता	तदैव	तदैव	निश्चित स्थान	पाहन
9.	देव भूत	तदैव	तदैव	जंगल में	तदैव
10.	बघुट	तदैव	तदैव	तदैव	तदैव
11.	गंवहेल	तदैव	तदैव	गाँव की सीमा पर	तदैव
12.	चंडी, काली	हिन्दु	बकरा, आदि	मंदिर या पूजा स्थल	पाहन
13.	हनुमान, महादेव गणेश आदि	हिन्दु	फल, मिठाई आदि	मन्दिर	ब्राह्मण
14.	कुल देवता	तदैव	तदैव	घर में	घर के मुखिया द्वारा
3. भागलपुर आदि :-					
1.	घर लक्ष्मी	तदैव	तदैव	घर में	ब्राह्मण
2.	महाबीर जी	तदैव	तदैव	घर में एवं मंदिर	ब्राह्मण

1.	2.	3.	4.	5.	6.
3.	सूर्य देवता (ठाढ़ी)	तदैव	तदैव	नदी किनारे या घर पर	स्वयं
4.	नाग पूजा	तदैव	नाग को दूध लावा से	घर पर	स्वयं
5.	करम देवी	जनजातीय	फूल, मिठाई, जई आदि।	घर पर	कुंआरी कन्यायें
6.	घाट घटेसरी (देवी)	जनजातीय	फल, मिठाई आदि।	नदी किनारे	ब्राह्मण एवं स्वयं
7.	गोसाई (प्रेत)	जनजातीय	धूप आदि।	यह किसी व्यक्ति पर होता है।	ओझा-गुनी

उपर्युक्त विवरणी में प्रस्तुत तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि खरवार जन-जाति में धार्मिक तत्वों के साथ-साथ हिन्दु धर्म के तत्व भी काल-क्रमानुसार सम्मिलित हो गए हैं। पूजा-स्थलों में सरना स्थल जनजातीय परम्परा का प्रतीक है तो महाबीर स्थान, चन्डी स्थान, ठाकुरबारी आदि हिन्दु धर्म से लिए गए हैं। पूजा-पाठ एवं अन्य धार्मिक अनुष्ठानों को पाहन या बैगा के साथ-साथ ब्राह्मण भी सम्पन्न कराते हैं। बहुत से खरवार सत्यनारायण व्रत की कथा भी सुनते हैं।

जैसा कि पूर्व में नर बलि और भैंसा बलि का भी प्रसंग आया है, यह काफी पहले प्रचलित था। परन्तु अब अधिकांश खरवार बकरे या मुर्गे की ही बलि चढ़ाते हैं। जो खरवार 'साफा होड़' या 'टाना भगत' आन्दोलन से जुड़ गए हैं, वे किसी प्रकार की बलि से परहेज करते हैं।

(ग) पर्व त्योहार :-

खरवार जनजातीय पर्वों के साथ-साथ अपने क्षेत्र में मनाये जाने वाले हिन्दु पर्वों को भी धूम-धाम से मनाते हैं। इस कारण उनके पर्व-त्योहार में विविधता पाई जाती है। उनके द्वारा मनाये जाने वाले पर्व निम्न प्रकार हैं :-

जनजातीय पर्व - ये पर्व सामान्यत: छोटानागपुर के जनजातीय क्षेत्र में मनाये जाते हैं। इनमें कुछ पर्व हैं, जो सभी क्षेत्रों में मनाये जाते हैं।

1. सरहुल - यह पर्व उराँव जनजाति का मुख्य पर्व है, जो फागुन से बैशाख के बीच अलग-अलग जगहों पर अलग-अलग समय में मनाया जाता है। यह पर्व धरती और सूर्य की शादी के अवसर पर मनाये जाने वाले आनन्दोत्सव का प्रतीक

है। इस अवसर पर धरती की पूजा-अर्चना निर्धारित स्थल पर वृक्षों के कुंज में पाहन द्वारा की जाती है। पाहन सूर्य और उसकी पत्नी धरती का प्रतीक बनकर इस पूजा में सम्मिलित होती है। इस अवसर पर साल वृक्ष का फूल लाकर सरना स्थल एवं आंगन में रखते हैं। महिलाएँ और पुरुष उस फूल को जूड़ा और कान पर खोंसते हैं। उराँव इस पर्व को "खद्दी' कहते हैं। यह पर्व नाच-गान और खान-पान के साथ सम्पन्न होता है। कहीं-कहीं सरहुल का जुलूस भी निकालते हैं। यह सूर्य और धरती की पूजा के साथ-साथ बसन्तोत्सव भी है। इस अवसर पर मुर्गे की बलि भी दी जाति है।

2. करम या करमा - करम या करमा शब्द की व्युत्पत्ति 'कर्म' शब्द से हुई है। इस पर्व का संबंध कर्म अथवा सत्कर्म से जोड़ा जाता है और युवक एवं युवतियाँ इस अवसर पर सत्कर्म पर आधारित 'करमा-धरमा' की लोक-कथा कहते-सुनते है। इस पर्व को भादो मास की एकादश तिथि को लोग मनाते हैं, इसकी तैयारी भादो के तीज-त्योहार के सिर्जन से ही शुरू हो जाती है, जब कुंआरी कन्याएं शुद्ध बालू रखकर उस पर चना, गेहूँ, जई, उड़द आदि का बीज गाड़ती हैं, जो करमा पर्व के दिन तक जम जाते हैं। यह पर्व सृजन का पर्व है और अंकुरित अनाज सृजन के प्रतीक के रूप में पूज्य होते हैं और प्रसाद रूप में चढ़ाये और ग्रहण किये जाते हैं। करम वास्तव में प्रकृति की उपासना का त्योहार है।

करम के दिन युवक नहाकर लड़कियों के साथ जंगल में जाकर करम वृक्ष की डाली काटकर समारोहपूर्वक लाते हैं और गाँव में किसी पवित्र एवं केन्द्र स्थान पर तथा अपने आंगन में गाड़ देते हैं। यह पूजा सामूहिक रूप से गाँव में तथा पारिवारिक रूप से हर घर में की जाती है। इस पूजा को पाहन सम्पन्न कराता है। लोग करमा के दूसरे दिन करम डाल को गाते-बजाते हुए गाँव के तालाब या नदी में विसर्जित कर देते हैं। यह पर्व ग्रामीण क्षेत्रों में अलग-अलग तिथियों को मनाया जाता है। इसका मूल उद्देश्य घर में सुख-शान्ति, धन-दौलत की वृद्धि, गाँव में अमन-चौन, रोग-दु:ख से निवृत्ति आदि प्रमुख है। इस अवसर पर भी सामूहिक नाच-गान का आयोजन होता है। जनजातीय क्षेत्र में युवक-युवतियाँ एक साथ मिल कर नाचते हैं। परन्तु खरवारों में अधिकांशत: केवल महिलाएँ ही नाचती हैं। इस पर्व का महत्त्व कुंआरी कन्याओं के लिए अधिक है। यह उनके लिए सुयोग्य वर (पति) और सुन्दर सन्तान की संभावनाओं पर आधारित है।

भागलपुर, साहेबगंज आदि गंगा के दियारा क्षेत्र में भी खरवार इस पर्व को धूम-धाम से मनाते हैं। परन्तु उस क्षेत्र में करम की डाल के स्थान पर वे मुंज या

कास के पौधों को जड़ से उखाड़ कर लाते हैं और आंगन में गाड़ कर करम पूजा कुंआरी कन्याएं सम्पन्न करती हैं।

3. नवाखानी – यह पर्व भादो या आश्विन में मनाया जाता है, जब गोड़ा धान कट जाता है। गोड़ा धान से हंड़िया बनाकर लोग धरती को चढ़ाते हैं और उसके बाद गोड़ा धान से चावल खाना शुरू करते हैं। यह पर्व मुंडा आदि में अधिक मनाया जाता है, जिसे 'जोमनामा' कहते हैं। वे नये अन्न को अपने पितरों को भी चढ़ाते है। उनमें यह लोक-विश्वास है कि ऐसा नहीं करने से उनके घर में अन्न का अभाव हो जायेगा।

4. सोहराई या गोहाल पूजा – यह पर्व कार्तिक के अमावस्या को मनाते हैं और गोरेया या गोहाल देवता की पूजा करते हैं। यह पर्व सभी जनजातियों द्वारा अलग-अलग विधि से मनाया जाता है। खरवार उस दिन अपने मवेशियों को नहला कर रंग आदि से सजा कर पूजा-पाठ सम्पन्न कर उन्हें कहीं मैदान में ले जाते हैं। इस अवसर पर कहीं-कहीं सूअर को मवेशियों द्वारा मरवाने की भी परम्परा है, जिसे 'गायडाढ़' कहते हैं। अहिर जाति में यह पूजा अधिक लोकप्रिय है।

5. अगहनी या खलिहानी पूजा (कोलोम पूजा)– यह पर्व धान कट जाने पर अगहन (नवम्बर-दिसम्बर) में मनाया जाता है। खलिहान की जमीन को गोबर आदि से लीप कर उसकी पूजा की जाती है। यह पूजा पाहन या बैगा करवाता है। इस अवसर पर कहीं-कहीं खरिहानी देवता (कोलोम बोंगा) और पितरों को संतुष्ट करने के लिए मुर्गे की बलि भी दी जाती है और हंड़िया चढ़ायी जाती है। भागलपुर आदि क्षेत्रों में वैष्णव पद्धति से खलिहान की पूजा पूरी पवित्रता के साथ की जाती है।

6. घाट-घाटेश्वरी पूजा – यह पर्व गंगा या अन्य नदियों के दियारा में बसे खरवार इस पर्व को बैसाख महीना में मनाते हैं। भागलपुर, साहेबगंज आदि क्षेत्रों में यह विशेष रूप से प्रचलित है। यह पूजा बाढ़ आदि की विभीषिका से बचने और नदी में डूबने से बचाव के लिए की जाती है। जनजातीय परम्परा में 'नगे एरा' या जल की देवी की तरह ही घाटेश्वरी देवी की यह पूजा है। नगे एरा की पूजा मुंडा, हो आदि में प्रचलित है।

हिन्दु पर्व

7. नाग पूजा या श्रावणी पूजा – श्रावण महीना के नाग पंचमी के दिन खरवार नाग देवता की पूजा करते हैं। इस पूजा में सर्प को दूध और धान का लावा

दिया जाता है। इसका महत्त्व जंगल आदि में सर्प दंश से सुरक्षा के लिए है। भागलपुर आदि क्षेत्रों में इसका विशेष प्रचलन है।

8. जीतिया - यह पर्व भादो में मनाया जाता है। हिन्दु समुदाय में इस व्रत का नाम 'जीवितपुत्रिका व्रत' है। सन्तान की रक्षा और उसके दीर्घायु होने की कामना से स्त्रियाँ इस व्रत को करती हैं। इस व्रत के अवसर पर 'चील और सियार' की कथा और इस व्रत को तोड़ने के फलाफल का रूपक ब्राह्मण पुरोहित द्वारा सुनाया जाता है। स्त्रियाँ इस व्रत में निर्जला उपवास रखती हैं और सूत या चांदी का बना 'जीतिया' अपने बांह में बांधती हैं।

9. अनन्त चतुर्दशी व्रत - यह पर्व कैमूर, रोहतास और भागलपुर आदि क्षेत्र के खरवार मनाते हैं। यह पर्व भाद्रपर (अगस्त-सितम्बर) के चतुर्दशी तिथि को मनाते हैं। इस अवसर पर ब्राह्मण पुरोहित अनन्त व्रत की कथा सुनाते हैं। लोग सूत से बना अनन्त व्रत प्रतीक अपने बांह में बांधते हैं। इस व्रत में फल, फूल, मिठाई आदि लोग अनन्त भगवान को चढ़ाते हैं।

10. दीपावली - यह पर्व मुख्यत: हिन्दु मनाते हैं। परन्तु खरवार जन-जाति में भी यह पर्व लोकप्रिय है। यह पर्व कार्तिक अमावस्या (अक्टूबर) में मनाया जाता है। इस पर्व के संबंध में राम द्वारा रावण पर विजय प्राप्त कर अयोध्या लौटकर विजय-पर्व के रूप में दीपोत्सव मनाने की पौराणिक कथा जुड़ी हुई है। खरवार इस अवसर पर अपने घरों में लिपाई-पोताई करते हैं और दीपावली के दिन दीप जला कर लक्ष्मी की पूजा करते हैं। इस अवसर पर कुंआरी लड़कियाँ धान और मकई का लावा और मिठाई से कुल्हिया-चुकिया (मिट्टी का खिलौना) भरती हैं और घरौंदा बना कर खेलती हैं। दीपावली इस समुदाय का प्रकाश पर्व है।

11. दशहरा या विजयादशमी - इस पर्व के अवसर पर दुर्गा (शक्ति) के नौ रूपों की अर्चना पूजा की जाती है। बहुत जगहों पर दुर्गा की मूर्ति स्थापित कर नौ दिनों तक पूजा-अर्चना का आयोजन किया जाता है। खरवार भी दुर्गा को शक्ति की देवी मान कर पूजा करते हैं। इस अवसर पर वे बकरा की बलि भी नवमी के दिन चढ़ाते हैं। पूर्व में कैमूर आदि क्षेत्रों में भैंसा की बलि दी जाती थी। परन्तु वह परम्परा अब प्राय: समाप्त हो चुकी है। दशमी के दिन कहीं-कहीं मेला भी लगता है। दशमी के दिन ही प्रतिमा का विसर्जन किया जाता है। यह पर्व आश्विन महीने में मनाया जाता है और पूजा-पाठ ब्राह्मण द्वारा सम्पन्न किया जाता है।

12. महाबीर की पूजा या चैत नवमी - चैत महीना के नवमी तिथि को हनुमान जी या महाबीर जी की पूजा-अर्चना खरवार "वीर पूजा" के रूप में सम्पन्न

करते हैं। युद्ध वीर और पराक्रमी होने के कारण वे हनुमान जी के भक्त होते हैं। इस अवसर पर अपने घर में या पूजा स्थल पर लाल कपड़े पर बना हनुमान जी के चित्र वाला झंडा गाड़ते हैं और हनुमान जी को लड्डू या आंटा-गुड़ से बना पकवान चढ़ाते हैं। कहीं-कहीं झंडा लेकर समारोहपूर्वक घूमने की भी परम्परा है।

13. होली - अन्तिम फाल्गुन और चैत महीना के प्रथम दिन मनाया जाने वाला यह पर्व भी पौराणिक कथा दैत्यवंशी राजा हिरण्यकश्यप और उसके विष्णु भक्त पुत्र प्रह्लाद से जुड़ा हुआ है। अग्नि में होलिका के जल जाने और प्रह्लाद के बच जाने की स्मृति में फाल्गुन की अन्तिम तिथि की रात्रि में लोग होलिका दहन मनाते हैं और दूसरे दिन रंग-अबीर से होली खेलते हैं। खरवार जन-जाति में भी इस त्योहार का काफी महत्त्व है। होलिकादहन के दूसरे दिन सुबह में 'धूरखेली' (कीचड़, होलिका की राख) की परम्परा है। दोपहर के बाद लोग एक-दूसरे को अबीर-गुलाल लगा कर गले मिलते हैं। इस पर्व में सभी लोग शामिल होते हैं। इस अवसर पर ढोल-मंजीरा बजा कर गीत गाने की भी परम्परा है। लोग होली का गीत झूम-झूम कर गाते हैं। इस अवसर पर "जोगीड़ा' (हास-परिहास करती नाच मंडली) भी निकालते हैं और खूब नाचते गाते हैं। इस अवसर पर अश्लील गीत गाने की भी छूट रहती है। इस दल के लोग व्यंग्य करते हुए कहते हैं- "भर फागुन बुढ़वा देवर लागे, भर फागुन। अर्थात् फागुन अथवा होली के महीने में बूढ़ा आदमी भी युवतियों का देवर बन जाता है अथवा उनसे हंसी-मजाक कर सकता है।

14. ठाढ़ी व्रत - यह पर्व भागलपुर, साहेबगंज आदि गांगेय क्षेत्र के खरवार मनाते हैं। यह पर्व माघ मास के प्रथम या द्वितीय रविवार को मनाया जाता है। व्रत करने वाले सुबह में स्नान कर गंगाजल लेकर दिन भर खड़ा रह कर नाच-गान करते हैं और सूर्य की पूजा करते हैं। यह व्रत मुख्यत: मनता या मनौती का व्रत है जिसमें लोग पुत्र प्राप्ति के लिए, रोग मुक्ति हेतु, मनोकामना पूर्ण होने आदि के लिए यह व्रत करते है। इसमें व्रत करने वाले को सिर मुंडवा कर सफेद वस्त्र पहनना पड़ता है। व्रत के दिन पूरा परिवार नमक नहीं खाता है। यह सूर्योपासना है और कठिन व्रत है। संध्या समय गंगाजल को नदी में विसर्जित कर घर आकर लोग भोजन करते हैं।

15. डोरा पर्व - भागलपुर क्षेत्र में लोग (खरवार) इस पर्व को होली के दिन से मनाना शुरू करते हैं और बैशाख में इसका समापन होता है। इस पर्व में लाल रंग से रूई और सूता को रंग कर होली के दिन बाँह में बाँध लेते हैं और बैशाख पूर्णिमा के पहले या दूसरे रविवार को खोल देते हैं। यह पर्व महिलाएँ किसी मनौती या मनता मानकर अपनी मनोकामना पूर्ण होने के लिए करती हैं।

16. झील व्रत - यह जनजातीय क्षेत्र में मनाया जाने वाला 'मंडा पूजा' की तरह है, जिसमें इस व्रत के करने वाले आग पर नंगे पांव चलते हैं। इस पर्व का आयोजन अप्रैल-मई में किया जाता है। जो व्यक्ति इस व्रत में भाग लेता है, उसे कई दिनों पूर्व से ही काफी संयम-नियम का पालन करना पड़ता है और पूरी तरह सात्विक भोजन करना पड़ता है। पर्व के दिन निर्धारित स्थान पर लकड़ी की आग जला दी जाती है और जब वह अंगारा बन जाता है तब उसे लम्बाई में फैला दिया जाता है। इसके बाद इस व्रत को करने वाले एक-एक करके उस पर एक छोर से दूसरे छोर तक नंगे पांव (अंगारे पर) चलते हैं। आग पर चलने पर भी उनका पांव जलता नहीं है। यह भी एक तरह का मनौती का या आनुष्ठानिक व्रत है।

श्री ए.के. सिंह ने खरवार के विभिन्न पर्वों पर प्रस्तुत किये जाने वाले अर्पण या बलि के दार्शनिक पक्ष को प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार अर्पण या बलि समानार्थक शब्द माने जाते हैं। परन्तु बलि का अर्थ है किसी जीव की हत्या कर किसी देवी या देवता को संतुष्ट करना, जब कि अर्पण या भेंट के रूप में अन्न, फल, फूल आदि अर्पित किये जाते हैं। धार्मिक अनुष्ठान में दोनों साथ-साथ सम्पन्न होते हैं। अनुष्ठान के रूप में बलि देना मनुष्य (दाता) और अति प्राकृतिक शक्ति के बीच मूक संवाद है। बलि देने के बाद जो सकारात्मक या नकारात्मक घटनाएँ घटती हैं, वह बलि का फल मानी जाती हैं।

उन्होंने टायलर का प्रसंग देते हुए बलि को तीन रूप में प्रस्तुत किया है : 1. दान या उपहार। 2. श्रद्धा प्रस्तुत करना। 3. त्याग।

खरवार तथा अन्य जनजातियों में उन्होंने (श्री सिंह) बलि और भेंट के कई अवसर बताये हैं :

1. कृषि कार्य के समय। 2. पर्व-त्योहार के समय। 3. शादी के समय। 4. नया जन्म के समय। 5. प्रेत या पितर पूजा के समय।[1]*

भागलपुर, साहेबगंज आदि क्षेत्र के खरवार में बलि देने की एक विचित्र प्रथा है। जब वे कोई मनौती मानते हैं तो माघ पूर्णिमा के दिन गंगा किनारे जाकर पाठा या पाठी को जीवित ही गंगा नदी की धार में फेंक कर बलि देते हैं या अर्पित करते हैं।

---

1 ट्राइबल फेस्टिवल ऑफ बिहार ए फन्कशनल अनालायसिस, अजीत कुमार सिंह, कन्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, पृ. 64/110

(घ) मेला एवं जतरा :-

जतरा एवं मेला जनजातीय जीवन एवं संस्कृति से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। जतरा जन-जाति परम्परा का मेला है, जिसमें उनकी संस्कृति का जीवन्त रूप देखने को मिलता है। छोटानागपुर में, जहाँ विभिन्न प्रकार की जनजातियाँ बसती हैं, जतरा और मेले के आयोजन के आधार एवं रूप-रेखा में भिन्नता पाई जाती हैं। उराँव जन-जाति द्वारा 'पड़हा पंचायत या राज' का जो मेला या जतरा आयोजित होता है, वह आम जतरा या मेला से भिन्न होता है। इसमें सभी पड़हा के राजा (मुखिया) अपनी सवारी पर अपने झंडे और अपनी प्रजा के साथ नगाड़ा-मांदर के ताल पर नाचते-गाते मेला स्थल पर आते हैं। वहाँ उनकी संस्कृति का जीवन्त प्रदर्शन उनके नृत्य और गीतों के माध्यम से होता है। इसके अलावे अन्य अवसरों पर जनजातीय क्षेत्र में 'जतरा' का आयोजन किया जाता है, जहाँ विभिन्न क्षेत्रों के जन-जाति समुदाय के लोग अपनी नृत्य मंडली के साथ आते हैं। वहाँ विभिन्न जनजातियों के गीत और नृत्य से वहाँ का माहौल संगीतमय हो उठता है। उस अवसर पर अनेक दुकानें बाहर से भी आती हैं और जो चीजें साप्ताहिक हाटों में नहीं मिलती है, वे इन मेलों में मिल जाती हैं।

जतरा का आयोजन माघ के नवमी तिथि या उसके आस-पास एक निर्धारित तिथि को किया जाता है। इस अवसर पर जतरा टांड़ में स्थापित ग्राम-देवता के प्रतीक के रूप में स्थापित ग्राम-देवता की पूजा पाहन द्वारा की जाती है और ग्राम वासियों द्वारा कई मूर्गों की बलि दी जाती है और उसके मांस को प्रसाद के रूप में बांटा जाता है। जतरा के दिन विभिन्न टोलों-गाँवों से लोग दोपहर के बाद अपना-अपना झंडा लेकर जुलूस के रूप में नाचते-गाते आते हैं और जतरा टांड़ में एकत्रित होते हैं। देर रात्रि तक जतरा का गीत-नाच आदि होता रहता है। इसके आयोजन का उद्देश्य गाँव में कल्याण के लिए ग्राम-देवता की पूजा तथा सरना धर्म और संस्कृति को अक्षुण्ण रखना है। इस समारोह में खरवार भी शामिल होते हैं।

मेला :

जनजातीय और गैर-जनजातीय क्षेत्रों में विभिन्न धार्मिक अवसरों पर मेले का आयोजन होता है। इन मेलों का धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक महत्त्व के साथ-साथ आर्थिक महत्त्व भी है। यह मेला खरवार के आवास-क्षेत्र - कैमूर से लेकर भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार आदि सभी स्थानों पर विभिन्न अवसरों पर लगता है। ये मेले मुख्यतः श्रावण, आश्विन, चैत और माघ महीनों में विभिन्न

त्योहार/ अवसर पर लगते हैं। उनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण मेलों एवं उनके आयोजन के स्थानों का विवरण निम्नलिखित है:

1. गुप्ताधाम – यह स्थान अधौरा प्रखंड में पहाड़ पर अवस्थित है। वहाँ एक गुफा में लगभग 300 मीटर भीतर में पत्थर का एक शिवलिंग है, जिसकी पूजा करने सभी जाते हैं। गुप्ताधाम के संबंध में यह किंवदन्ति है कि – 'जब भगवान शिव ने भस्मासूर से प्रसन्न होकर उसे यह वरदान दे दिया कि वह जिसके सिर पर अपना हाथ रख देगा, वह तत्काल भस्म हो जायेगा। यह वरदान पाकर भस्मासुर ने भगवान शिव पर ही इसे अजमाना चाहा और वह उनके माथे पर हाथ रखने के लिए उनका पीछा करने लगा। भगवान शिव उससे बचने के लिए भागते-भागते उसी गुफा में जा छिपे, जिसे अब गुप्ताधाम के रूप में जाना जाता है।'

गुप्ताधाम में श्रावण मास में विशेषकर सोमवार को मेला लगता है और काफी दूर-दूर से लोग भगवान शिव पर जल अर्पित करने आते हैं। यह स्थल खरवार लोगों के लिए विशेष महत्त्व रखता है।

2. बटेश्वर स्थान – यह स्थान कहलगाँव से लगभग 9 कि.मी. पर गंगा के किनारे पर अवस्थित है, जहाँ गंगा नदी उत्तरवाहिनी होकर बहती है। यहाँ कोई बटेश्वर मुनि रहते थे, जिन्होंने भगवान शिव का मन्दिर बनवा कर शिवलिंग की स्थापना की थी। यहाँ श्रावण और माघ पूर्णिमा के दिन मेला लगता है और दूर-दूर से खरवार भी इस अवसर पर आते हैं और शिव तथा गंगा की पूजा-अर्चना करते हैं। श्रावणी मेले का आयोजन पलामू के सभी शिव मन्दिरों में होता है।

3. दशहरा मेला – आश्विन महीने में दुर्गापूजा के अवसर पर विभिन्न स्थानों पर दुर्गा की मूर्ति रखी जाती है और वहाँ नौ दिनों तक मेले का दृश्य रहता है।

4. फाल्गुन शिवरात्रि मेला – यह मेला भी शिव मन्दिरों के पास लगता है। यह मेला कहीं-कहीं तीन से चार दिन तक रहता है।

5. दीपावली मेला – कहीं-कहीं दीपावली के अवसर पर भी मेला लगता है। पलामू आदि क्षेत्रों में यह मेला काफी लोकप्रिय है।

इन सभी मेलों में बाहर के व्यापारी और दुकानदार अनेक प्रकार के सामान लेकर आते हैं, जिन्हें मेले में आने वाले ग्रामीण खरीदते हैं। इन मेलों में मवेशियों बैल, गाय, भैंस आदि की खरीद-बिक्री काफी बड़े पैमाने पर होती है। इन मेलों में लोगों के मनोरंजन के लिए सर्कस, चिड़ियाघर, जादूघर, कठघोड़वा, झूला आदि भी बाहर से आते हैं।

(ङ) जादू-टोना और उसकी भूमिका :-

अन्य जनजातियों की तरह खरवार भी धर्म के साथ-साथ 'जादू-टोना' (जादुई शक्ति) पर पूर्ण विश्वास करते हैं। उनके समाज में ओझा, मति, डायन आदि का महत्त्वपूर्ण स्थान है। विशेषकर जनजातीय क्षेत्र में इसका प्रचार एवं प्रभाव अधिक है। फिर भी, अन्य जनजातियों की तरह उनके समाज में 'डायन हत्या' की वारदातें नगण्य हैं। वे ओझा, मति और डायन द्वारा प्राप्त एवं अधिग्रहीत तीन तरह की जादुई शक्ति पर विश्वास करते हैं :-

1. संवर्द्धक जादू :- जिसके द्वारा सुख और समृद्धि मिलती है। यह विभिन्न देवी-देवताओं या अच्छे प्रेतों को संतुष्ट कर एवं उनसे संबंधित मंत्रों को सिद्ध कर किया जाता है।

2. संरक्षक जादू :- इसके माध्यम से ओझा या मति दुष्ट प्रेतों के प्रभाव से लोगों को बचाता है।

3. विनाशक जादू - इस जादू का अधिकारी पुरुष या महिला डायन होती है। वह अपनी सिद्ध मंत्र शक्ति से दुष्ट एवं खतरनाक प्रेतों को अपने वश में कर लेती है और उनके द्वारा अपने दुश्मनों को नुकसान पहुँचाती है। इस जादू के माध्यम से वह रोग लगाने से लेकर मृत्यु तक का कारक बनती है। यह लोक-विश्वास उनमें काफी प्रचलित है।

इस जादुई शक्ति का प्रयोग डायन या ओझा कई तरह से करते हैं :- 1. आँख या दृष्टि से 2. स्पर्श से या छूकर 3. मंत्र द्वारा 4. किसी तत्व, जीव या व्यक्ति को माध्यम बनाकर।

उनमें जादू-टोना के लिए निम्नांकित वस्तुएँ अभिष्ट होती हैं :- अरवा चावल, सिन्दूर, हल्दी, काला मुर्गा, काला या लाल सूता, दूब घास, काला तिल आदि। इसके अलावे लोहबान का धूप या मिर्चा जलाकर प्रेत के प्रभाव को समाप्त करने का विधान है। जिस घर में प्रेत-बाधा का अनुमान होता है, ओझा मंत्र-शक्ति से सम्पन्न लोहे की कील गाड़ कर या सूता बांध कर प्रेत को दूर रखने की प्रक्रिया अपनाता है। कभी-कभी वह अपनी मंत्र-शक्ति से किसी प्रेतात्मा को किसी व्यक्ति पर आमंत्रित कर उसे डरा कर या संतुष्ट कर कहीं दूर जाने और पुनः न आने का निर्देश देता है।

जादू-टोना की शिक्षा के संबंध में उनकी अवधारणा है कि यह किसी सिद्ध ओझा या डायन से श्मशान घाट में दीपावली की या अमावस्या की रात में या आश्विन की नवरात्रि में सिद्ध किया जा सकता है। इसके लिए जो मंत्र होते हैं,

उनमें मारन, मोहन और उच्चाटन मंत्र प्रमुख हैं। कोई ओझा या डायन सामान्यतः अपने मंत्र को किसी को बताते नहीं हैं।

नवरात्रि या दीपावली के समय रोहतास और कैमूर क्षेत्र में कहीं-कहीं विशेषकर देवी-स्थान या ब्रह्म-स्थान में "देवास' लगता है, जहाँ प्रेत-बाधा से पीड़ित व्यक्ति आते हैं और ओझा उनकी प्रेत-बाधा को दूर करता है। कहीं-कहीं ओझा अपने घर में भी 'ओझाई' का आयोजन करता है और प्रेत-बाधा से पीड़ित लोगों को ठीक करता है। भागलपुर, साहेबगंज आदि क्षेत्र में इस तरह के आयोजन को 'कारू दान' कहते हैं। यह उस भगत या ओझा के घर पर आयोजन किया जाता है, जो मंत्र द्वारा देवी-शक्ति का आह्वन किसी व्यक्ति पर करता है। यह ओझा खरवार जाति का ही होता है। इस अवसर पर मुर्गे की बलि देकर शराब चढ़ाई जाती है। लोग 'कारू दान' व्यक्ति से डरते हैं।

अब शिक्षा के प्रचार-प्रसार से लोगों में ओझा-डायन के संबंध में अंधविश्वास की अवधारणाएँ कम हुई हैं। परन्तु सुदूरवर्ती देहाती क्षेत्र और जनजातीय क्षेत्र में, जहाँ शिक्षा की कमी और आवागमन के साधन की कमी है, वहाँ अभी भी लोग ओझा-मति और डायन के डरावने प्रभाव से प्रभावित हैं। जनजातीय क्षेत्र में इस काले जादू का आतंक इतना है कि किसी के बारे में डायन होने की जानकारी मिलते ही लोग उसे जान से ही मार देना चाहते हैं। आये दिन ऐसी अनेक घटनाएँ समाचार-पत्रों में देखने को मिलती हैं।

(च) गोत्र एवं निषेध :-

खरवार जन-जाति के गोत्रों की संख्या सर्वेक्षण में प्राप्त सूचनाओं एवं विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रस्तुत आलेखों के अनुसार 40 (चालीस) है, जिसकी पूर्ण विवरणी चौथे अध्याय में टेबुल-19 पर प्रस्तुत की गयी है। इसमें गोत्र के नाम के साथ-साथ गोत्र-प्रतीक की सूची दी गई है। सर्वेक्षण के दौरान यह तथ्य सामने आया कि बहुत से खरवार अपने गोत्र का नाम तथा उसके प्रतीक-चिह्न के बारे में नहीं जानते हैं। पलामू, गुमला और लोहरदगा तथा राँची के अधिकांश खरवार अपना गोत्र जानते हैं और सगोत्री विवाह करने में निषेध है। परन्तु भागलपुर, साहेबगंज आदि के खरवार अपने को 'कश्यप' गोत्र का बताते हैं। पूछने पर पता चला कि किसी ब्राह्मण द्वारा धार्मिक कृत्य के समय उनके पूर्वजों के मूल गोत्र "कच्छप' को सुधार कर कश्यप कर दिया गया। तब से वे अपना गोत्र कश्यप बताते हैं। एक ही गोत्र होने के कारण उस क्षेत्र के लोगों में सगोत्री विवाह का प्रचलन है।

उनके एक और गोत्र होने का पता उसके गोत्र-प्रतीक के पूज्य होने के कारण ज्ञातव्य हुआ। उनके क्षेत्र में करम त्योहार में करम वृक्ष की डाल की पूजा के स्थान पर 'कांस' या 'मूंज' घास के पौधे को लाकर पूजते हैं। पलामू आदि क्षेत्र में 'कांसी' गोत्र के लोग कांस या 'मूंज' को पवित्र मानते हैं और पूजा-पाठ में उसका उपयोग करते हैं। परन्तु इस तथ्य की जानकारी भागलपुर या उस क्षेत्र के अन्य जिले के खरवार लोगों को नहीं है। संभव है, उनमें से कुछ 'कांसी' गोत्र के भी होंगे।

निषेध के संबंध में चौथे अध्याय में विस्तृत रूप से चर्चा की गई है, जिसमें गोत्र एवं विवाह आदि संबंधों पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला गया है।

—— ** ——

अध्याय - 10

शिक्षा

(क) बिहार में शिक्षा :-

विहार में शिक्षा की स्थिति एवं साक्षरता का स्तर संतोषजनक नहीं कहा जा सकता है। जनसंख्या में वृद्धि की तेज दर ने निरक्षरता की संख्या में काफी वृद्धि की है। आजादी मिलने के बाद भारतीय संविधान की धारा 45 के तहत 14 वर्ष की उम्र के बालक/बालिका को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराना सरकार का कर्तव्य है। साथ ही धारा 46 के अन्तर्गत कमजोर वर्ग के लिए शिक्षा का विशेष प्रावधान किया गया है। शिक्षा पर सरकार द्वारा लगभग 8758 लाख रु. प्रति वर्ष खर्च किये जा रहे हैं। फिर भी 100 व्यक्ति में 62 व्यक्ति निरक्षर हैं। राज्य के कुल 56 जिलों के 727 प्रखंडों में साक्षरता का औसत प्रतिशत 20.54 है। पुरुषों में साक्षरता 52.05 है, जबकि महिलाओं में 22.08 प्रतिशत साक्षरता है। बिहार राज्य के 67500 गाँवों में एक कि.मी. की दूरी पर 13,600 ऐसे गाँव/टोले हैं, जहाँ प्राथमिक शिक्षा के लिए विद्यालय उपलब्ध नहीं है। जनजातीय क्षेत्र में स्थिति और भी खराब है।[1] खरवार क्षेत्र सहित जनजातीय क्षेत्रों में शिक्षा एवं साक्षरता की कमी के निम्नांकित कारण और समस्याएँ हैं :

1. एक कि.मी. के अन्दर गाँवों में प्राथमिक विद्यालय का अभाव।
2. विद्यालय चलाने के लिए भवनों की कमी।
3. विद्यालय में शिक्षकों का अभाव एवं उनकी अत्यधिक अनुपस्थिति।
4. गरीबी और अज्ञानता के कारण नामांकन के बाद छात्र/छात्राओं द्वारा विद्यालय का परित्याग।
5. सरकार द्वारा छात्र/छात्राओं को दी जाने वाली छात्रवृत्ति/मध्याह्न भोजन का अभाव या अनियमित वितरण।
6. शिक्षण एवं अभिभावक में समन्वय की कमी।
7. पदस्थापित शिक्षक में कहीं-कहीं स्थानीय बोली/भाषा की जानकारी की कमी।

---

1 बिहार दिग्दर्शन, स्टार पब्लिकेशन, पटना, प्रो. शिवशंकर सिंह, पृ. 487 से 495

8. मध्य बिहार में उग्रवादी तत्वों के कार्य-कलाप से शिक्षा का कार्यक्रम प्रभावित।

9. विद्यालयों के कार्य-कलापों के निरीक्षण, पर्यवेक्षण एवं अनुश्रवण आदि की कमी।

साक्षरता की दर में वृद्धि लाने के लिए जनजातीय क्षेत्र तथा अन्य क्षेत्रों में 1990 में 'बिहार शिक्षा परियोजना' कार्यक्रम लागू किया गया। इसका उद्देश्य सभी के लिए प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराना है और 5 वर्षों में 80 प्रतिशत तक साक्षरता दर हासिल करना है। इसका मुख्य लक्ष्य वर्ग सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग, अनुसूचित जाति/जन जाति और महिलाएँ हैं। परन्तु यह परियोजना भी अपने लक्ष्य की प्राप्ति में पूरी तरह सफल नहीं हो सकी है।[1]

(ख) खरवार जन-जाति की शिक्षा/साक्षरता की स्थिति :

खरवार जन-जाति में शिक्षा एवं सारक्षरता की स्थिति संतोषजनक नहीं है. जैसा कि क्षेत्रीय सर्वेक्षण एवं 1981 की जनगणना के आंकड़ों के अवलोकन से पता चलता है। 1981 की जनगणना के अनुसार खरवार की कुल आबादी में से साक्षरों की संख्या निम्न प्रकार है :-

टेबुल - 27

क्षेत्र	कुल जन संख्या			शिक्षा/साक्षर जन संख्या			प्र.श.
	पु.	मं.	कुल	पु.	म.	कुल	
1.	2.	3.	4.	5.	6.	7.	8.
शहरी	1,739	1,204	2,943	905	424	1,329	46
ग्रामीण	1,11,737	1,08,078	2,19,815	31,661	6418	38,079	16
कुल	1,13,776	1,09,282	2,22,758	32,566	6,842	39,408	31

इन ऑकड़ों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि महिलाओं में साक्षरता का कुल प्रतिशत 11 है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में मात्र 6 प्रतिशत है। महिलाओं में साक्षरता की कमी के निम्नांकित कारण पाये गए :-

1. गरीबी - खरवार परिवार के अधिकांश वयस्क सदस्य काम करने जाते हैं। कम उम्र के लड़के-लड़कियाँ घर पर रहकर छोटे बच्चों और मवेशियों की देख-रेख करते हैं।

1 बिहार दिग्दर्शन, स्टार पब्लिकेशन, पटना, प्रो. शिवशंकर सिंह, पृ. 487 से 497 वर्ष - 1997

2. अज्ञानता – शिक्षा के प्रति जागरूकता की कमी इनमें बहुत अधिक है। लोग बालिका शिक्षा के प्रति अधिक उदासीन रहते हैं।

3. विद्यालयों की कमी – खरवार के आवासीय क्षेत्रों में माध्यमिक और उच्च कक्षा के विद्यालयों का बहुत अभाव है। मध्य एवं उच्च विद्यालय की शिक्षा पाने के लिए कहीं-कहीं 3 कि.मी. से 10 कि.मी. तक जाना पड़ता है। कहीं-कहीं गाँव में प्राथमिक विद्यालय तक नहीं है।

4. लड़कियों में पर्दा प्रथा – खरवार की लड़की जब 13-14 वर्ष की हो जाती है, तो वे उसे सुरक्षा की दृष्टि से दूर जाकर पढ़ने की अनुमति नहीं देते। वे अभी भी सयानी लड़कियों को घर में ही (पर्दा) रखना पसन्द करते हैं।

5. वित्तीय सहायता (छात्रवृत्ति) का अभाव – विद्यालयों में पढ़ने वाले खरवार जन-जाति बहुत कम संख्या में छात्र/छात्राओं को छात्रवृत्ति मिलती है। सर्वेक्षण के क्रम में पाया गया कि गुमला, पलामू (लातेहार आदि) जिलों में 1995 के बाद से विद्यालयों में जनजातीय छात्रों को छात्रवृत्ति नहीं मिली है।

साक्षरता, शिक्षा का स्तर, छात्रवृत्ति वितरण आदि की स्थिति जानने के लिए कुछ प्रखंडों में सर्वेक्षण कराया गया एवं एतत् संबंधी सूचनाएं एकत्रित की गई।

1. बिशुनपुर प्रखंड (गुमला जिला)- इस प्रखंड की कुल जनसंख्या 1991 की जनगणना के अनुसार 42,628 है, जिनमें खरवार की जनसंख्या लगभग 3,000 है। इस प्रखंड में कुल 68 गाँव हैं। इस प्रखंड में विद्यालयों की संख्या निम्न प्रकार है –

उच्च विद्यालय	– बालक	–	4
	– बालिका	–	2
मध्य विद्यालय	– 12		
प्राथमिक विद्यालय	– 46 सभी 68 गाँवों में प्राथमिक विद्यालय नहीं है		
आवासीय विद्यालय (अनु. जनजाति के लिए	– उच्च विद्यालय	–	3 (कन्या के लिए)
	मध्य विद्यालय	–	2
	प्राथमिक विद्यालय	–	1

कल्याण विभाग द्वारा संचालित अनु. जन-जाति आवासीय विद्यालयों में अधिकांशतः अल्पसंख्यक आदिम जन-जाति (असुर, बिरहोर, कोरवा, बिरजिया) के

छात्रों को नामांकन में प्राथमिकता दी जाती है। इसके अतिरिक्त वहाँ के उराँव, मुंडा आदि बहुसंख्यक जनजातियों के छात्र ही अधिक प्रवेश पाते हैं। एक कन्या उच्च विद्यालय अनु. जनजातियों में टाना भगतों की लड़कियों के लिए संचालित है। अत: सामान्य जनजाति की छात्राएँ, खरवार जन-जाति सहित, प्रवेश नहीं ले पाती हैं।

1995-96 में इस प्रखंड में पढ़ने वाले अनु, जन-जाति एवं खरवार जन-जाति की छात्र संख्या एवं छात्रवृत्ति प्राप्त छात्र/छात्राओं की संख्या निम्न प्रकार पाई गई:

वर्ग	अनु.जनजाति के छात्र/छात्रा			खरवार जनजाति के छात्र/छात्रा		
	छात्र	छात्रा	कुल	छात्र	छात्रा	कुल
1 से 10	3,449	2,309	5,725	225	110	335
छात्रवृत्ति प्राप्त						
1 से 10	1350	106	1,656	119	11	130

उपर्युक्त आँकड़ों से यह स्पष्ट है कि इस प्रखंड में खरवार में शिक्षा और छात्रवृत्ति की स्थिति अच्छी नहीं है। यही कारण है कि इस प्रखंड में खरवार साक्षरता लगभग 12 प्रतिशत पुरुषों में और 3 प्रतिशत महिलाओं में है। प्रखंड साक्षरता का कुल प्रतिशत पुरुषों में 32 और महिलाओं में 7.62 है।

कल्याण विभाग द्वारा संचालित आवासीय विद्यालयों में, जहाँ नि:शुल्क शिक्षा के साथ-साथ नि:शुल्क भोजन, आवासीय सुविधा, पठन-पाठन सामग्रियाँ, वस्त्र आदि की सुविधा मिलती है, खरवार जन-जाति के लिए कोई अलग विद्यालय की व्यवस्था नहीं है।

इस प्रखंड में "विकास भारती' नामक एक स्वयंसेवी संगठन 1983 से ही संचालित है, जिसके माध्यम से शिक्षा एवं साक्षरता के कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। इस संस्था के द्वारा निकटवर्ती क्षेत्रों में 400 साक्षरता केन्द्र, 14 एकल विद्यालय और विशुनपुर में 'श्रम निकेतन' के नाम से एक आवासीय विद्यालय चलाये जा रहे हैं। इनसे 12,000 पुरुष/महिलाएँ साक्षर हुई हैं और 1500 बालक/बालिका (अनुसूचित जन-जाति के) शिक्षा पा रहे हैं, जिनमें 15 प्रतिशत खरवार लाभान्वित हो रहे हैं। श्रम निकेतन आवासीय विद्यालय में खरवार के 10 बालक एवं 6 बालिकाएँ शिक्षा प्राप्त कर रही हैं।

बिशुनपुर समेकित बाल विकास सेवा परियोजना के अन्तर्गत 48 आंगनबाड़ी केन्द्र संचालित हैं, जिनमें 3-6 वर्ष आयु वर्ग के लड़के/लड़कियाँ विद्यालय पूर्व शिक्षा प्राप्त करते हैं। उनमें 180 बालक/बालिकाएँ खरवार जन-जाति के हैं। इन

केन्द्रों के संचालन से विद्यालय में नामंकन की संख्या बढ़ी है और विद्यालय छोड़ने (ड्राप आउट) की संख्या में कमी आई है। फिर भी इस प्रखंड में ''ड्राप आउट'' छात्र/छात्राओं का प्रतिशत 30 तक है।

2. लातेहार प्रखंड (पलामू)- इस प्रखंड में 1991 की जनगणना के अनुसार अनु. जन-जाति की कुल जनसंख्या 36154 है, जो कि कुल जनसंख्या 73126 का लगभग 50 प्रतिशत होता है। इसमें खरवार जनसंख्या लगभग 11500 है। यहाँ के 176 ग्रामों में 11 पंचायतें हैं, जिनमें 10 अनुसूचित क्षेत्र में आते हैं।

इस प्रखंड में 2 महाविद्यालय, 1 बालक उच्च विद्यालय, । बालिका उच्च विद्यालय, 24 मध्य विद्यालय और 86 प्राथमिक विद्यालय हैं। इस प्रकार इस प्रखंड के सभी 176 गाँवों में प्राथमिक विद्यालय नहीं खोले गए हैं। इस प्रखंड में 1995 के बाद से विद्यालयों में छात्रवृत्ति का वितरण नहीं किया गया है, ऐसी सूचना मिली है।

इस प्रखंड में अनु. जाति के लिए एक आवासीय विद्यालय संचालित है। एक अनुसूचित जन-जाति का छात्रावास कल्याण विभाग द्वारा संचालित है, जिसमें अनु. जन-जाति के 50 छात्र रहते हैं। इसमें खरवार जन-जाति के केवल 3 छात्र रहते हैं। इस प्रखंड में पुरुष साक्षारता 17.50 प्रतिशत एवं महिला साक्षारता 2.50 प्रतिशत है।

बिहार शिक्षा परियोजना कार्यक्रम के अन्तर्गत इस प्रखंड में साक्षरता कार्यक्रम चलाया जा रहा है। इसके माध्यम से लोगों को साक्षर बनाने का कार्यक्रम चलाया जा रहा है, जिसमें खरवारों के गाँवों को भी चुना गया है।

इस प्रखंड में समेकित बाल विकास सेवा परियोजना के अन्तर्गत 1989-90 में 109 आंगनबाड़ी केन्द्रों की स्वीकृति मिली है, जो संचालित है। इनमें 3-6 वर्ष के अनु, जन-जाति/जाति एवं अन्य पिछड़े वर्ग के लगभग 2,800 बालक/बालिकाएँ विद्यालय पूर्व शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं, जिनमें 25 प्रतिशत के आस-पास खरवार जन-जाति के बाल-बालिकाओं की संख्या है। इस प्रखंड में भी 'ड्राप आउट' छात्रों का प्रतिशत लगभग 45 है।

3. कहलगांव प्रखंड (भागलपुर)- इस प्रखंड में 28 पंचायतों में कुल 213 गाँव हैं, जिनमें 87 बेचिरागी हैं। 1991 की जनगणना के अनुसार इस प्रखंड की कुल जनसंख्या 1,99,768 है, जिसमें अनु. जन-जाति की जनसंख्या 8.540 है। इसमें खरवार की जनसंख्या लगभग 6,000 है। इस प्रखंड में 12 बालक उच्च विद्यालय। बालिका उच्च विद्यालय, 32 मध्य विद्यालय, 95 प्राथमिक विद्यालय 1 तथा 2 महाविद्यालय के साथ-साथ 4 गैर-सरकारी विद्यालय भी संचालित हैं। यहाँ साक्षरता का स्तर 28 प्रतिशत है। खरवार जन-जाति में साक्षरता का स्तर लगभग 24 प्रतिशत

(पुरुष) तथा महिलाओं में लगभग 8 प्रतिशत है। यह बताया गया कि लगभग 60 प्रतिशत अनु. जन-जाति के छात्र/छात्राओं को ही विद्यालय छात्रवृत्ति मिल पाती है। इसका कारण आवंटन का अभाव है। इस प्रखंड में भी कुल 126 आबाद गाँव की तुलना में 95 प्राथमिक विद्यालय ही हैं और इस प्रकार 31 गाँवों में प्राथमिक विद्यालय नहीं हैं। इस प्रखंड में 'ड्राप आडट' का प्रतिशत लगभग 20 बताया गया।

इस प्रखंड में भी बाल विकास सेवा परियोजना की स्थापना 1983 में की गई थी। इसके अर्न्तगत 145 आंगनबाड़ी केन्द्र चलाये जा रहे हैं। इन केन्द्रों में 3-6 वर्ष आयु वर्ग के 4,500 शिशु विद्यालय पूर्व शिक्षा पाते हैं, जिनमें लगभग 15 प्रतिशत शिशु खरवार जन-जाति के हैं।

4. अघौरा प्रखंड (कैमूर जिला-भभुआ)- कैमूर जिला का अघौरा प्रखंड समुद्र तल से लगभग 1100 फीट ऊँचा है। इस प्रखंड के 12 पंचायतों में 102 गाँव हैं, जिसमें आबादी है और 29 गाँव बेचिरागी हैं। कुल जनसंख्या 34,378 है, जिसमें 16,760 अनुसूचित जन-जाति के लोग हैं, जो कुल जनसंख्या का लगभग 48 प्रतिशत है। इसमें लगभग 80 प्रतिशत खरवार हैं, जो अपने को 'सूर्यवंशी' कहते हैं। इस प्रखंड में शिक्षा विभाग द्वारा 1 उच्च विद्यालय, 3 मध्य विद्यालय तथा 65 प्राथमिक विद्यालय चलाये जा रहे हैं। कल्याण विभाग द्वारा अनु. जनजातियों के लिए 7 मध्य/उच्च आवासीय विद्यालय चलाये जा रहे हैं। इन विद्यालयों में 890 खरवार जन-जाति के छात्र नि:शुल्क शिक्षा के साथ-साथ नि:शुल्क भोजन, आवास, वस्त्र, पठन-पाठन सामग्री आदि की सुविधा से लाभान्वित होते हैं।

इस प्रखंड में 1996-97 में छात्रवृत्ति बहुत कम अनु. जन-जाति के छात्रों को छात्रवृत्ति दी गई, जिसमें खरवार जन-जाति के छात्र निम्नांकित संख्या में लाभान्वित हुए :-

वर्ग 1 से 6	छात्र	- 283	कुल	-	458
नवीकरण	छात्रा	- 175			
नवीन	छात्र	- 86	कुल	-	128
	छात्रा	- 42			
वर्ग 7 से 10	बालक	- 97	कुल	-	102
	बालिका	- 5			

इस प्रखंड में जनजातीय साक्षरता 18 प्रतिशत है, जिसमें महिला साक्षरता लगभग 2.50 प्रतिशत है। इस क्षेत्र में सभी गाँवों में विद्यालय नहीं हैं।

उपर्युक्त वर्णित सभी प्रखंडों में छात्रों की छात्रवृत्ति निम्नांकित दर से (प्रति माह की दर) दी जाती है :

1.	दिवाकालीन छात्रवृत्ति –	वर्ग 1 से 4	–	9/– रु. प्रति माह
		वर्ग 5 से 6	–	18/– रु. प्रति माह
		वर्ग 7 से 10	–	36/– रु. प्रति माह
2.	छात्रावास अनुदान –	वर्ग 5 से 10	–	54/– रु. प्रति माह
			–	80/– रु. प्रति माह

(ग) खरवार जनजाति में महाविद्यालय/विश्वविद्यालय/तकनीकी शिक्षा (1996):

1981 की जनगणना में उद्धृत आँकड़ों से यह प्रतीत होता है कि खरवार के बहुत कम छात्र महाविद्यालय/विश्वविद्यालय स्तर की अथवा तकनीकी शिक्षा पाते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में बिहार के दो खरवार बहुल वाले विश्वविद्यालयों से संबंधित जिलों – भागलपुर एवं राँची (सिद्धो-कान्हों विश्वविद्यालय एवं राँची विश्वविद्यालय) के जिला कल्याण कार्यालयों से खरवार छात्रों एवं उनकी स्वीकृति छात्रवृत्ति संबंधी आंकड़े लिए गए। उनके अवलोकन से यह प्रतीत होता है कि भागलपुर, कटिहार, साहेबगंज आदि क्षेत्रों में बसने वाले खरवार उच्च एवं तकनीकी शिक्षा पाने में अधिक अग्रणी हैं, जबकि पलामू आदि जनजातीय बहुल क्षेत्र के खरवार के लड़के/लड़कियाँ इस दिशा में काफी पीछे हैं।

टेबुल – 28

1. भागलपुर (1996):

क.	संस्थान का नाम	जनजातीय छात्र-छात्रा को स्वीकृत छात्रवृत्ति सं.	खरवार जनजाति के छात्र/छात्रा को स्वीकृत छात्रवृत्ति
1	2	3	4
1.	महाविद्यालय/विश्वविद्यालय	493	180
2.	शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, भागलपुर	2	2
3.	प्राइमरी शिक्षक प्र. महाविद्यालय, भागलपुर	1	1
4.	अभियंत्रण महाविद्यालय, भागलपुर	39	16

5.	जवाहरलाल चिकित्सा महाविद्यालय	7	–
6.	बिहार रेशम वस्त्र संस्थान, नाथनगर, भागलपुर	3	–
7.	राजेन्द्र कृषि महाविद्यालय, सबौर, भागलपुर	11	4
8.	राजकीय पॉलीटेकनिक, भागलपुर	12	9
9.	टी.एन.बी. विधि महाविद्यालय, भागलपुर	10	8
10.	मोतीलाल नेहरू रिजनल इन्जीनियरिंग कॉलेज, इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)	1	1

2. राँची (1996) :-

1.	राजेन्द्र चिकित्सा महाविद्यालय, राँची	11	–
2.	बी. आई. टी., मेसरा, राँची	38	2
3.	पशु चिकित्सा महाविद्यालय, काँके, राँची	18	–
4.	कृषि महाविद्यालय, काँके, राँची	29	–
5.	पॉलीटेकनिक (महिला), राँची	5	–
6.	पॉलीटेकनिक (पुरुष),राँची	54	–
7.	आई.टी.आई., राँची	357	–
8.	निफ्ट पॉलीटेकनिक, राँची	72	1
9.	महिला आई.टी.आई., राँची	14	–
10.	डॉन बॉस्को आई.टी.आई., कोकर, राँची	24	–

राँची विश्वविद्यालय की स्नातकोत्तर छात्रवृत्ति की स्वीकृति एवं वितरण 1996-97 से लम्बित है, जिसमें खरवार के छात्र/छात्रा नहीं हैं।

उच्च शिक्षा पाने वाले खरवार जनजाति (सभी अनु. जनजाति) को निम्नांकित दर से प्रतिमाह छात्रवृत्ति कल्याण विभाग द्वारा दी जाती है :-

क्र. सं.	शिक्षा का स्तर	छात्रवृत्ति की दर	छात्रावास अनुदान की दर
1	2	3	4
1.	आई.ए./आई.कॉम./आई.एससी.	90	150
2.	बी.ए./बी.एससी./बी.कॉम (पार्ट - दो-तीन)	120	230
3.	स्नातकोत्तर (एम.ए. आदि)	190	290
4.	तकनीकी महाविद्यालय	190	425

इसके अतिरिक्त उच्च शिक्षा पाने वाले छात्र-छात्राओं को शिक्षण शुल्क, परीक्षा शुल्क, विविध शुल्क आदि की प्रतिपूर्ति कल्याण विभाग द्वारा विभिन्न शिक्षण संस्थानों को दी जाती है। उच्च शिक्षा पाने वाले सभी अनु. जनजाति के छात्र-छात्राओं को छात्रवृत्ति दी जाती है, यह सर्वेक्षण के दौरान पता चला। छात्रवृत्ति स्वीकृति एवं विलम्ब के दो कारण बताये गए :

1. आवंटन की राशि की कमी (विद्यालय स्तर पर)
2. अनियमित सत्र का चलना (महाविद्यालय/वि. वि. स्तर पर)

फिर भी कल्याण विभाग द्वारा दी जाने वाली छात्रवृत्ति की सुविधा से शिक्षा के प्रसार में यथेष्ट वृद्धि हुई है। खरवार जनजाति के सदस्य भी इस योजना से यथेष्ट लाभ उठाकर उच्च शिक्षा पाकर विभिन्न उच्च पदों पर कार्यरत हैं।

—— ❋❋ ——

अध्याय - 11

लोक-परम्परा

(क) लोक-परम्परा की अवधारणा :

किसी भी जनजाति की सम्पूर्ण जीवनधारा, उसका उत्कर्ष-अपकर्ष, उत्थान-पतन और सांस्कृतिक चेतना उसकी लोक परम्परा में सदा-सर्वदा अक्षुण्ण एवं गतिमान रहती है। लोक-जीवन से जुड़े सभी लोक-विश्वास, लोक-साहित्य, लोक-संस्कृति, लोक-गीत, लोक-नृत्य आदि जनजातीय जीवन की प्राण-शिखा की तरह एक पीढ़ी को मौखिक परम्परा के रूप में स्थानान्तरित होते रहते हैं। प्राय: सभी जनजातियों की लोककथा, लोक-गीत, पहेली आदि मौखिक रूप में ही जीवित और विकसित होती रहती हैं। उनका यह धरोहर व्याकरणबद्ध परिनिष्ठित भाषा में आबद्ध नहीं होता वरन लोक-भाषा या बोली में ही सदा जीवित रहता है। लोक-साहित्य मात्र अतीत का संकलन न होकर वर्तमान का जीवित अभिलेख भी होता है, जो लोक-परम्परा को युगों तक अक्षुण्ण बनाये रखता है।

लोक-परम्परा समकालीन न होकर अतीत को प्रस्तुत करने, वर्तमान को अभिव्यक्त करने और भावी सम्भावनाओं को अंकुरित करने में समर्थ होती हैं। खरवार जनजाति की लोक-परम्परा के साथ ये सारे तत्व सार्थक लगते हैं। सिन्धु घाटी का समृद्धिशाली अतीत और वहाँ से पलायन के बाद का इतिहास उनके लोक-गीतों और लोक-कथाओं में कहीं-कहीं मूर्त हो उठता है।

इस सन्दर्भ में यह भी विचारणीय है कि परसंस्कृति की प्रक्रिया जब किसी जाति या जनजाति को प्रभावित करती है, तो उसकी लोक-परम्परा और लोक-साहित्य में अवशेष बनने की प्रवृत्ति उत्पन्न कर देती है। तीव्र परिवर्तन की यह स्थिति जनजाति विशेष की अपनी ऐतिहासिक परिस्थितियों के परिणाम होती है। यही कारण है कि ऐतिहासिक घटनाओं के शिकार खरवार जनजाति का जीवन-इतिहास प्रव्रजन, पलायन और विस्थापन के कारण उनकी वासभूमि में हुए निरन्तर परिवर्तन और उसके दुखद परिणामों से भरा हुआ है। इस कारण उनकी लोक-परम्परा में विविधता पाई जाती है। जिसमें उनकी आदिकालीन परम्पराओं के भी कुछ अवशेष मिल जाते हैं।

(ख) लोक-कथा :

विद्वानों के अनुसार लोक-कथा के जन्म का इतिहास मानव-सभ्यता के इतिहास से जुड़ा हुआ है। विशेषकर जनजातीय जीवन में लोक-कथा की मौखिक परम्परा आदि काल से चली आ रही है। लोक-कथाओं में उनकी सामाजिक व्यवस्था, आर्थिक जीवन, धार्मिक लोक-विश्वास, अन्य समुदायों के प्रति उनकी अवधारणा, उनकी सांस्कृतिक चेतना आदि की झलक सहज ही मिल जाती है। आदि काल से परिवार के बूढ़े-बूढ़ी अपनी नयी पीढ़ी को कथाओं के माध्यम से ही जीवन के आदर्शों पर आधारित नीतिपरक उपदेश एवं संदेश देते रहे हैं। लोक-कथाएँ न केवल मनोरंजन करती है, वरन् उस जाति या जनजाति के अतीत को उद्‌घाटित करते हुए वर्तमान के लिए मार्गदर्शक बनती हैं। कथक्कड़ या कथाकार कहानी की मूल धारा को कुछ नये चटपटे प्रसंगों को जोड़कर अधिक मनोरंजक और कौतूहलपूर्ण बना देता है।

खरवार जनजाति में भी विभिन्न प्रकार की लोक-कथाओं की एक समृद्ध परम्परा रही है। उनकी लोक-कथाओं में जहाँ एक ओर पौराणिक कथाओं का समावेश है तो दूसरी ओर वर्तमान युग की समस्याएँ भी उभर कर सामने आती हैं। उनकी लोक-कथाओं में मिथक (धार्मिक कथा), आख्यान (ऐतिहासिक कथा), लोक-कहानी आदि के तत्व मिलते हैं। लोक-कहानी में भी पशु-कथा, मूर्खकथा, धूर्त्तकथा, जातिकथा, परि-कथा आदि विभिन्न प्रकार की मनोरंजक और उपदेश देने वाली कथाएँ मिलती है। उनकी लोक-कथाओं में जनजातीय और गैर-जनजातीय दोनों प्रकार के कथा-साहित्य के तत्व मिलते हैं।

(1) भस्मासुर की कथा (मिथक)- आदिकाल की बात है, भस्मासुर नामक एक महाप्रतापी और बलवान असुर राजा हुआ था। वह शिवजी का भक्त था। उसने अपने को अमर और अजेय बनाने के लिए कठोर तपस्या की। उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान शिव प्रकट हुए और भस्मासुर से वरदान मांगने को कहा। भस्मासुर ने हाथ जोड़कर भगवान शिव से कहा - ''हे भगवन! मुझे ऐसा वरदान दें कि मैं किसी के द्वारा नहीं मारा जाऊं और मैं जिसके सिर पर हाथ रख दूं, वह जलकर भष्म हो जाय।''

भगवान शिव ने ''तथास्तु'' (अर्थात ऐसा ही हो) कह कर उसे उसका मनोवांछित वरदान दे दिया। इस वरदान को पाकर वह असुर दम्भ से भर गया और अपने वरदान के प्रभाव की परीक्षा शिव पर ही करने का विचार किया। शिव उसके इस अनैतिक विचार से अवगत होते ही वहाँ से चल दिये। परन्तु भस्मासुर अपने

निर्णयानुसार उनका पीछा करना शुरू किया। भगवान शिव भागते-भागते कैमूर पर्वत की एक गुफा में जाकर छिप गए। भस्मासुर उनकी खोज में इधर-उधर घूमता रहा और उस गुफा को नहीं पा सका।

यह दृश्य विष्णु के साथ अन्य देवता भी स्वर्गलोक से देख रहे थे। शिव ने भी विष्णु से मदद करने की प्रार्थना की। विष्णु शिव की मदद के लिए एक सुन्दर अप्सरा का मोहिनी रूप धारण कर कैमूर पहाड़ पर स्वर्ग से आ गए और वहाँ पहुंच गये, जहाँ भस्मासुर शिव की खोज में घूम रहा था। उस सुन्दर अप्सरा को वहाँ एकान्त में पाकर भस्मासुर उस पर मोहित हो गया और उसे पाने के लिए व्यग्र हो उठा। उसने उस परम सुन्दरी को अपने महल में चलने का आमंत्रण दिया और काफी अनुनय-विनय किया। इस पर मोहिनी ने उसके साथ जाने के लिए एक शर्त रखी। उसने कहा - 'हे महाप्रतापी असुर सम्राट, यदि तुम मुझे इतना ही चाहते हो तो तुम्हे एक अच्छे नर्तक की तरह मुझे अपना नाच दिखाना होगा। अगर तुम नाचने में खरें उतरे तो मैं तुम्हारे साथ अवश्य चलूंगी।

इस प्रस्ताव से भस्मासुर सहमत हो गया और विभिन्न मुद्राओं से नृत्य करने लगा। नाचते-नाचते अनायास उसका हाथ उसके सिर पर चला गया और देखते-देखते वह जल कर भस्म हो गया। इस प्रकार भगवान विष्णु ने भस्मासुर से भगवान शिव की जान बचाई। भगवान शिव कैमूर पहाड़ की जिस गुफा में छिपे हुए थे, वह अब 'गुप्ताधाम' के नाम से जाना जाता है। अब यह स्थान (गुफा) अधौरा प्रखंड में एक प्रमुख तीर्थ-स्थल बन गया है।

(2) खरवार की उत्पत्ति (मिथक)- प्राचीन काल में जब भगवान ने जल-प्रलय के बाद धरती की रचना की तब उन्होंने इस धरती पर बहुत जीव-जन्तु, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी आदि का सृजन किया। उनके द्वारा सृजित 'हंस' के जोड़े महासागर में रहते थे। एक बार एक मादा हंस उड़कर धरती पर आयी। कुछ दिनों तक जंगल में रहने के बाद उसने दो अंडे दिये। उन्हीं दो अंडों से दो मानव शिशुओं का जन्म हुआ। उनमें से एक बड़ा होकर अहिरी पिपरी नामक स्थान में जाकर बस गया और 'संथाल' कहलाया। दूसरा जाकर हरादुत्ती नामक स्थान में बस गया और 'खरवार' कहलाया। उन्हीं दोनों भाइयों से संथाल और खरवार जनजाति का विकास और विस्तार हुआ।

(कर्नल डाल्टन ने भी इस कथा का प्रसंग अपनी पुस्तक - एथनालॉजी ऑफ बंगाल) में दिया है।

(3) भुजबल राय की कथा (मिथक/आख्यान)- खरवार के संबंध में यह मिथक या आख्यान भी प्रचलित है कि खरवार की उत्पत्ति सूर्य और लक्ष्मी की पुत्री से हुई है। इस संबंध में प्रचलित लोक-कथा निम्न प्रकार है :

प्राचीन काल की बात है- लक्ष्मी देवी की एक पुत्री अत्यन्त सुन्दरी थी। वह सारा नामक नगर में रहती थी। उसके रूप पर सूर्यदेव मोहित हो गए और उससे शादी करना चाहा। सूर्य शंख बजाकर उसकी ध्वनि से अपने प्यार को अभिव्यक्त करते थे।

एक बार जब वह शंख में जल डाल कर उसे बजा रहे थे, उस समय लक्ष्मी-पुत्री बाहर खड़ी होकर शंख की मधुर ध्वनि सुन रही थी। उसी समय शंख से एक बुंद जल गिरकर उसके मुंह में चला गया और वह गर्भवती हो गए। उसकी भुजा से भुजबल राय नामक पुत्र और जंघा से जंघ राय नामक पुत्री पैदा हुई। भुजबल राय सूर्य का औरस पुत्र था इस कारण वह महाप्रतापी और परम तेजस्वी राजा हुआ। परन्तु कुछ दिनों बाद उसे अपने बल और धन पर बहुत घमण्ड हो गया।

एक बार लक्ष्मी जी उसकी परीक्षा लेने के लिए भिखारिन के वेष में भिक्षा मांगने उसके राजमहल के सामने गईं। वह यह जांचना चाहती थीं कि उस भुजबल राय को धनवान बनाकर उन्होंने अच्छा किया या नहीं। अपने राजमहल के सामने भिक्षा पात्र लिए एक वृद्धा को देखकर वह क्रोधित हो गया और बिना भीख दिये उसने उस बुढ़िया को भगा दिया। लक्ष्मी उसके इस दंभी आचरण से बहुत रुष्ट हुई और उसे शाप दिया - 'तुम और तुम्हारे वंशज खरवार बराबर गरीब और विपन्न रहेंगे। जंगल में रहकर खेर से कत्था बनाकर अपना भरण-पोषण करेंगे।' तभी से खरवार विपन्न बन गए और जंगल में रहकर खैर पेड़ की लकड़ी से कत्था बनाकर अपना भरण-पोषण करने लगे।

(इस कथा में वर्णित प्रसंगों का विवरण रसेल की पुस्तक-कास्ट एन्ड ट्राइब ऑफ सेन्ट्रल प्रोविन्सेज ऑफ इन्डिया में भी मिलता है)

(4) झांपी का बूढ़ा (धूर्त्त कथा) - प्राचीन काल की बात है - एक धनी खरवार अपने लड़के के लिए एक लड़की देखने और शादी की बात करने गया। बातचीत के बाद 'नियर पानी' के लिए अंजोरिया में तृतीया तिथि का दिन तय हुआ। उस दिन लड़के के तरफ से पाँच आदमी लड़की के घर गए। लगनपान कराने के बाद भात, मांस और हंड़िया से उनका स्वागत हुआ। पूरे गांव के खरवार उनलोगों का 'सहर हांड़ी' से स्वागत किया। लड़के के पिता ने लड़की के पिता को हल्दी

रंगा पीला चावल देकर कहा – 'कल आप लोग बारात में अस्सी आदमी आइयेगा और उसमें एक भी बूढ़ा नहीं होना चाहिए।'

लड़की के पिता ने कहा – 'हमारी भी एक शर्त है। हम आपके इच्छानुसार अस्सी जवान लोगों को बारात में ले जायेंगे। परन्तु आप को हमलोगों के लिए अस्सी खस्सी और अस्सी घड़ा हंड़िया देना पड़ेगा।' लड़के के पिता ने सोचा कि अस्सी आदमी भी अस्सी खस्सी का मांस कैसे खा सकेंगे और अस्सी घड़ा हंड़िया कैसे पी सकेंगे। ऐसा सोचकर वह लड़की वाले की शर्त मान गया।

दूसरे दिन अस्सी युवा खरवार बारात में जाने के लिए एकत्रित हुए। लड़की के पिता ने सोचा – 'जवान तो अनुभवहीन होते हैं। शादी में कहीं कुछ गोल-माल होगा' तो राय-सलाह कौन देगा। ऐसा सोचकर उसने अपने आजा बूढ़ा को बांस की बनी झापी में छिपाकर ले जाने का निश्चय किया। एक बक्से में कपड़ा-लत्ता और झांपी में आजा बूढ़े को बैलगाड़ी पर रखकर बारात बाजे-गाजे के साथ चल पड़ी। जब बारात जनवासा में पहुँच गई तब लड़के वालों आकर देखा और पाया कि बारात में कोई बूढ़ा नहीं आया है। अतः अपने वादे के अनुसार वह अस्सी खस्सी और अस्सी घड़ा हंड़िया (चावल की शराब) लाकर जनवासे में रखवा दिया।

सभी बाराती सोचने लगे भला इतनी खस्सी का मांस कैसे पचेगा। उन्हें चिन्तित देखकर लड़की का पिता झापी में छिपे अपने आजा बूढ़ा से इसका समाधान पूछा। झापी का बूढ़ा बोला – 'एक-एक खस्सी काटते जाओ और हल्दी-नमक में पकाकर हड़िया के साथ खाते जाओ। रात भर में सब पच जायेगा।

बारातियों ने ऐसा ही किया और दूसरे दिन विवाह खत्म होने तक सब खस्सी और हंड़िया हजम हो चुका था। यह देखकर लड़के वाले आश्चर्यचकित हो गये और इसका रहस्य जानना चाहा। अन्त में उन्हें मालूम हुआ कि बांस की झांपी में आजा बूढ़ा को छिपाकर लाया गया था और उन्हीं की बुद्धि से यह संभव हुआ। लड़के वाले बड़े लज्जित हुए और आजा बूढ़ा को झांपी (हरथा) से बाहर निकाल कर उनका काफी सत्कार कर बारात को विदा किया। तभी से खरवार समाज में यह तय हुआ कि बारात में कम से कम एक बूढ़ा आदमी जरूर जायेगा।

(ग) कहावत, मुहावरा, पहेली आदि :-.

खरवार जनजाति में अनेकों कहावतें, मुहावरे और पहेलियाँ या बुझौलिया काफी दिनों से प्रचलित हैं। वे काफी अर्थपूर्ण, व्यंग्य से भरी, प्रासंगिक और उपदेशात्मक लगते हैं। 'गागर में सागर' का उदाहरण ये प्रस्तुत करता है। खरवार दो पंक्तियों में

ही किसी गम्भीर विषय को सरलतापूर्वक और व्यंग्य शैली में प्रस्तुत कर देते हैं। कुछ उदाहरण अवलोकनीय है –

कहावत, मुहावरा –

(1)	खाये के सतुआ ना आ नहाये के तड़के।	(विपन्नता या गरीबी को छिपाने का प्रयास)
(2)	घर में मूँजी भांग ना, बीबी मांगस चूड़ा।	(तदैव)
(3)	माथा में बार ना, बरवंट सिंह नाम।	(नाम के विपरित काम)
(4)	खेत ना खरिहान, खेतन सिंह नाम।	(तदैव)
(5)	तेली के तेल जरे, मसालची के माथा बथे।	(कंजूसी)
(6)	लिख-लोढ़ा पढ़ पत्थर, नाम बा लाल बुझक्कड़।	(मूर्खता)
(7)	मांगे के भीख, चुकावे के गांव के जामा।	(दंभ या घमंड)
(8)	काम निकल गइल दुख बिसर गइल।	(कृतघ्नता)
(9)	चटपट के बियाह में कनपट्टी में सेनुर (सिन्दूर)	(हड़बड़ी का काम करना)
(10)	चले ना जाने आंगनवा टेढ़।	(अयोग्यता)
(11)	नौ महीना के डहर (रास्ता) में चली त चलीं छव महीना के डहर में ना चलीं	(दूरदर्शिता)

(घ) लोक-गीत :

खरवार जनजाति में भी अन्य जनजातियों की तरह लोक-गीतों का अत्यधिक महत्त्व है। उनके लोक-गीतों में उनके लोक-जीवन के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आदि पक्षों की सरल एवं व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति मिलती है। उनके लोक-गीत छोटे और अवसरानुकूल भावों से ओत-प्रोत और काव्य की विभिन्न विधाओं और शैलियों – अभिद्या, लक्षणा और व्यंजना – में व्यक्त करने की क्षमता रखते हैं। गीतों में लय, ताल और मात्रा का संयोजन ऐसा होता है कि उनमें आरोह अवरोह, गतिमयता और प्रवाह अपने आप आ जाता है। लोग गीतों में उनका उज्ज्वल और स्वर्णिम अतीत और वर्तमान की विपन्नता और विद्रुपता – दोनों के दर्शन हो जाता हैं। उनके गीतों में उनकी लोक-परम्परा के साथ-साथ अन्य जातियों/जनजातियों की लोक-परम्पराओं का प्रभाव भी दिखाई पड़ता है। इसके फलस्वरूप कैमूर से लेकर भागलपुर और कटिहार तक के लोक-गीतों में भाव, भाषा, शैली,

ताल और लय में अन्तर स्पष्ट रूप से झलकता है।

उनके लोक-गीतों को पाँच भागों में विभाजित कर उनके उदाहरण दिये जा सकते हैं। 1. पर्व गीत 2. आनुष्ठानिक या भक्ति-गीत 3. विवाह-गीत 4. श्रम या श्रमिक-गीत 5. विविध गीत

(1) विवाह-गीत - (बारात दरवाजा लगने पर)

''सासु जी के अंखिया लगले मधुमखिया हो,
कइसे हम परिछौं दामाद अलबेलवा हो।
चलनी के चालल दुलहा सुप के फटकारल हो,
कइसे हम परिछी दामाद अलबेलवा हो।''

(सास की आंखें इतनी सुन्दर हैं कि उन्हें फूल समझकर मधुमक्खियाँ उस पर मंडरा रही हैं। इस कारण सास अपने अति सुन्दर दामाद को परिछने में कठिनाई अनुभव कर रही है। उनका दामाद इतना साफ और सुन्दर है, जैसे उसे विशेष प्रकार का रूप और रंग मिला है। ऐसे अपरूप दामाद का परिछावन वह कैसे करे।)

उपर्युक्त गीत कैमूर और रोहतास क्षेत्र में गाया जाता है। पलामू, गुमला, लोहरदगा आदि जनजातीय क्षेत्र के गीत (विवाह के)

(2) *''बाबा केरा आंगना में एक गाछ चम्पा सयो तरे।*
चाचा केरा आगना में एक गाछ चम्पा सयो तरे।
बढ़ली राम बोली रे।।
मामा करा आंगना में .....तरे।'

(इस गीत में कन्या को अपने पिता, चाचा, मामा आदि के आंगन का चम्पा वृक्ष कहा गया है। इस पृष्ठभूमि में यह भाव व्यक्त किया गया है कि अब वह चम्पा ससुराल जा रही है और इस घर का आंगन सूना और सुगन्ध हीन हो जायेगा।)

(3) शादी के समय-सिन्दूर दान आदि के अवसर का गीत :

''हाय रे हाय बताब धनी,
कतनो बताव बुधी।
बाबू माँगे दहेज घड़ी, सोना के अंगुठिया।
बताऊँ त धनी कवनो बुधी।
कौनो नखे, धन नखे,
एते खेते तनी। बताऊँ त धनी कवनो बुधी।।''

(इस गीत में दहेज-प्रथा पर व्यंग्य किया गया है। साथ ही, खरवार की विपन्नता को भी दर्शाया गया है। दहेज से बचने के लिए पिता अपनी पुत्री से ही जानकारी चाहता है, क्योंकि वह अपने दामाद को घड़ी और सोने की अंगूठी देने में असमर्थ है)

(4) बारात दरवाजा लगने पर गाया जाने वाला गीत :

''नि राजा घरे गाजा बाजा नी माजा लागे,
गरीब घरे ढेकी बाजा सुपट माजा लागे।
रायमुनी चुकड़ गुड़ा मार में रखाय बे,
आयो आलू आटा बिजे सुपट माजा लागे,
उलटी माजा लागे, पलटी माजा लागे।'

(इस गीत में विपन्नता के कारण बारात में बजने वाले बाजे से अधिक ढेकी का संगीत अच्छा लगता है। उसी प्रकार घी और गुड़ से पकवान से अधिक आलू और बैंगन की सब्जी के साथ किया जाने वाला भोज अधिक मजेदार लगता है)

(5) भागलपुर क्षेत्र में शादी के अवसर पर गाया जाने वाला गीत :-

''कथिके बोढ़नियाँ गे बेटी,
कथिके बोन्हनियाँ।
कतन शबद गे बेटी गे,
आंगना बोढवले।
सोना के बोढ़नियाँ गे बेटी,
रूपा के बोन्हनियाँ।
कोयली शबद गे बेटी,
आंगना बोढ़वले।''

(इस गीत में कन्या के मायके की सम्पन्नता दर्शायी गयी है, जहाँ चांदी से बांधा गया सोने का झाड़ू है जिससे वह अपने आंगन को बुहारती थी। आंगन को बुहारने के समय वह कोयल की तरह मधुर स्वर में गीत गाती थी। अब ससुराल वालों से भी यही अपेक्षा की गयी है)

(6) शादी बाद प्रीतिभोज के समय गाया जाने वाला व्यंग्य गीत (गुमला): -

''पतरी जे परि गेल ओरे ओर,
समधि बइठी गेले जागजोर।
रांधली दाइल भात करा के भुंजरी,
परोसी देली पतरी पर,
समधि खाय कमरि भरि-भरि।।''

(इस व्यंग्य-गीत को देहात में 'गारी' भी कहा जाता है। इसमें समधी पर व्यंग्य करते हुए कहा गया है कि समधी महाभुक्खड़ है और वह साधारण रूप से परोसा गया दाल, भात, और केला की भुंजिया को भी कमर तक भरकर अथवा जरुरत से ज्यादा खा रहा है)

पर्व गीत :

(7) करम-जीतिया का गीत :

''हाय रे हाय कइसे दिन काटब गोइयाँ,
दुनिया कर दूसरे रवइया भाई।
महंगी मारय जान, गरीब कर परेसान,
कइसे दिन काटब गोइयाँ।
घटी टूटी कोई ना देवइया भाई,
कइसे दिन काटब गोइयाँ।'

(इस पर्व गीत पर भी गरीबी और महंगाई का प्रभाव हावी है जिसे बड़े ही मार्मिक ढंग से सरल भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है। गरीबी और महंगाई ने पर्व के रंग और उत्साह को भी फीका कर दिया है। ऐसी स्थिति में कमी को किससे मांग कर पूरा किया जाय)

(8) सरहुल (जदुरा) गीत :-

अजोधा में राम जनम ले लें,
जनकपुरे सीता अवतार।
भरत राम भाई हलें,

जनकपुरे धनुख तोड़ले,
सीता से विवाह कइलें रामचन्दर,
अब अजोधा में राम जनम लेलें।।''

(सरहुल में, जब सूर्य और धरती के विवाह का पर्व मनाया जाता है, खरवार राम-सीता के विवाह का गीत गाते हैं)

(9) होली या फगुआ गीत (रोहतास) :

''होरी खेलेलन कन्हइया हो,
बजा के बांसुरी।
बजा के बांसुरी हो, बजा के मुरली,
होरी खेलेलन कन्हइया हो बजा के बांसुरी।
वृन्दावन में रास रचल बा,
राधा अइली संग सहेली।
कान्हा मलेलन गुलाल हो बजाके बांसुरी,
होरी खेलेलन कन्हइया हो बजाके बांसुरी।।'

(होली में राधा और कृष्ण को मुख्य पात्र मानकर यह गीत गाते हैं)

(10) होली गीत (पलामू):-

''होरी रे, होरी रे, एहोरी।
एक दिन अइहें कलजुगवा ए होरी,
नाहीं पूजे मन्दिर, नाहीं पूजे मसजीद,
होरी रे, ए होरी।
बाभना से मुरगी ढोअइहें, ए होरी।।''

(इसमें समाज में फैली विद्रुपता पर व्यंग्य किया गया है)

आनुष्ठानिक/धार्मिक गीत (धर्म-ग्रन्थों) पात्रों पर आधारित) -

(11) राम के वनवास से संबंधित गीत (भरथ की ओर से) :-

"घुर भइया रामचन्दर, घुर भइया लछुमन,
मर जइबे भूखे त पियासे।
खाये के ना लेले कुछो,
सतुई लडुइया, मर जइबे जंगले भुलाके।'

(12) सरस्वती-वन्दना :

''जल के कमल खील, सुरसती जनम लेलें,
झूमी-झूमी बीना के बजालें, सरसती जनम लेलों
एक हाथ कमल फूले, सक हाथ बीना नीरे,
झूमी-झूमी बीना के बजाल, सरसती जनम लेलों।'

विविध गीत -

(13) पलामू किले की गौरव-गाथा :

''देखली पलामू कीला, एक भाला बेख हो। देखली.....।
घरे घरे कुढ़नी, घीड़ के मलाय हो। देखली.....।
नाहीं त मोर छान-बान, बरदा उघार हो। देखली.....।'

(14) पर्यावरण पर आधारित गीत :-

''सुनसान लागे आपन जनम करम ठाव।
नदी नाला बन रहे आपन कोना कोना,
मिलत रहे हीरा मोती आउर चानी सोना।
डांड़ी चुआं सूख गेल, कहाँ पीपर छांव। सुनसान .....
बन के जीव रहे सगर मुलुक मुलुक,
चलीं गइले चुपचाप आपन मुलुक मुलुक।
सुनसान लागे आपन जनम करम ठांवं।
बन लगाऊँ बन बचाऊँ एही राउर काम,
सावन भादो बरसी त सुखी होई गाँव। सुनसान .....।

(15) छोटानागपुर की विपन्नता पर आधारित गीत (अंगनई) :-

''हाय रे हाय हीरानागपुर,
टुटी गेलक सपना मधुर। हीरानागपुर, हायरे हाय .....
सोचलि होवी राम राज,
परजा पिंधबयें ताज,
सोंचले मैल गाँधी के अधूर। हीरानागपुर, हाय रे हाय .....।
खेत हमर छीन लेल,

मुआवजा नाहीं देल,
रोजी रोटी ले मेल
मजबूर हीरानागपुर। टूटी गेल सपना मधुर, हीरानागपुर .....!

(ङ) लोक-नृत्य :-

प्रत्येक जन-जाति समुदाय में लोक नृत्य की अपनी विशिष्टता होती है। प्रत्येक लोक-नृत्य, उससे संबंधित लोक-गीत के स्वर, ताल, और लय के अनुरूप संयोजित होता है। जनजातीय नृत्य एकल न होकर सामूहिक होता है। सामान्यतः लोक नृत्य में दो समूह या दल बनते हैं - एक महिलाओं का और दूसरा पुरुषों का। दोनों दलों के बीच में वादक अपने वाद्य-यंत्रों के ताल-लय से नृत्य की गति और गीत को संचालित और नियंत्रित करते हैं। उनमें नृत्य की कई विधाएँ होती हैं, जो अलग-अलग अवसरों पर प्रस्तुत की जाती है। उनके गीत-नृत्य में भी ताल और लय के मन्द, मध्यम, सम और उच्च स्वर एवं गति होती है। गीत में आरोह एवं अवरोह के अनुसार उनके नृत्य में गति आती है।

खरवार जनजाति में भी समूह नृत्य की परम्परा है, परन्तु रोहतास एवं कैमूर में एकल नृत्य के रूप में किसी लड़के को साड़ी आदि पहना कर नृत्य कराते हैं, जिसे वे 'लौंडा का नाच' कहते हैं। शादी-विवाह या होली में यह नाच आयोजित होता है। खरवार के नृत्य में केवल महिलाएँ भाग लेती हैं, पुरुष नृत्य में भाग नहीं लेते और वे केवल वाद्य-यंत्रों - ढोल, मांदर, नगाड़ा, खंजड़ी, झांझ, करताल, बांसुरी आदि बजाते हैं। उनके नृत्य विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग प्रकार के होते हैं। क्षेत्रानुसार नृत्य के अवसर एवं प्रकार :-

टेबुल - 29

कैमूर एवं रोहतास -

क्र.सं.	**नृत्य का नाम**		**नृत्य का अवसर**
1.	झूमर	-	शादी, अन्य पर्व आदि।
2.	करमा	-	करम त्योहार के अवसर पर।
3.	जाट-जटिन	-	श्रावण भादो एवं अन्य अवसरों पर।
4.	डोमकच	-	शादी में।
5.	जोगीड़ा	-	होली में।

पलामू, गुमला आदि (जनजातीय क्षेत्र) -

1.	झूमर	-	सरहुल तथा अन्य अवसरों पर।
2.	डोमकच	-	शादी के अवसर पर।
3.	अंगनई	-	करम त्योहार के अवसर पर।
4.	जदुरा	-	सरहुल में।
5.	फगुआ	-	होली में।
6.	माठा	-	दशहरा में।
7.	औंड़ी-बौंड़ी	-	मकर-संक्रान्ति में।

भागलपुर, साहेबगंज आदि -

1.	करमा धरमा	-	करम पर्व में।
2.	जाट जटिन	-	कभी भी (विशेष कर श्रावण-भादो में)।
3.	डोमकच	-	शादी में।
4.	झुमर	-	कभी भी।

(च) अतिथि-सत्कार एवं प्रीतिभोज :

खरवार जन-जाति में अतिथि-सत्कार का विशेष महत्त्व है। वे भी 'अतिथि देवो भव' अर्थात् मेहमान या अतिथि देवता-तुल्य होता है, यह मानते हैं। उनके दरवाजे पर अतिथि के आने पर सर्वप्रथम 'लोटा-पानी' से उसका सत्कार किया जाता है. और परिवार का मुखिया दोनों हाथ जोड़कर नमन निवेदित करता है। हाथ-पैर धुलवा कर अतिथि को चटाई या अन्य किसी आसन पर बैठाते हैं। इसके बाद उसे गुड़ या अन्य किसी मीठी वस्तु के साथ पीने के लिए पानी देते हैं, जिसे वे 'जलखई' (जलपान) कहते हैं। अब मेहमानों को चाय पिलाने की भी परम्परा प्रचलित है। इसके बाद मेहमान को खैनी, पान, बीड़ी या सिगरेट देते हैं। उसके बाद वे समाचार का आदान-प्रदान करते हैं।

खाने-पीने और खिलाने-पिलाने में खरवार हमेशा से शाहखर्च रहे हैं, परन्तु अब उनमें अधिकांश विपन्न हो गए हैं और चाह कर भी प्रीति-भोज के अवसरों पर अपने इच्छानुसार खान-पान की व्यवस्था नहीं कर पाते। भोज के अवसर पर पहले अतिथियों को खिलाया जाता है और बाद में परिवार के लोग खाते हैं। पूजा-पाठ या विवाह के अवसर पर धार्मिक अनुष्ठान समाप्त होने के बाद वे सर्वप्रथम अपने ब्राह्मण पुरोहित को खिलाते हैं। प्रीति-भोज में अधिकांशतः मांसाहारी भोजन की

व्यवस्था करते हैं। उनमें जो गरीब या वैष्णव मत या अन्य ऐसे धर्म को मानने वाले हैं, वे शुद्ध शाकाहारी भोजन की व्यवस्था करते हैं। गुमला आदि कुछ क्षेत्रों में खस्सी के मांस के साथ-साथ मुर्गे का मांस भी बनता है। पीने के लिए वे अधिकांशत: शराब का प्रयोग करते हैं। उनके खान-पान पर पूर्व के अध्याय में विस्तृत रूप से प्रकाश डाला गया है।

(छ) गोदना (टैटू) :

गोदना का प्रचलन प्राय: सभी जनजातियों में लोक-प्रिय है। पहले खरवार के लड़के भी गोदना गोदवाते थे। सर्वेक्षण के क्रम में कई ऐसे व्यक्ति मिले, जिनके शरीर पर गोदना का चिह्न वर्तमान है। परन्तु अब पुरुषों में गोदना की परम्परा समाप्त हो चुकी है। खरवार महिलाएँ गोदना गोदवाती हैं। सामान्यत: किशोर वय में ही लड़कियाँ गोदना गोदवाती हैं, परन्तु अब शिक्षा के प्रचार-प्रसार से लड़कियाँ भी इसे उतना महत्त्व नहीं देतीं। महिलाएँ सामान्यत: गोदना कलाई पर, गले के नीचे, पैर एवं चेहरे के किसी भाग पर गोदवाती हैं।

गोदना का आकार छोटा या बड़ा दोनों प्रकार का होता है। गोदना में निम्नांकित चिन्हों या प्रतीकों का उपयोग किया जाता है :- कोई फूल, गोत्र प्रतीक, अपना या पति का नाम, सर्प या बिच्छू, अन्य प्रकार के चिन्ह।

गोदना के संबंध में उनमें कई लोक-विश्वास प्रचलित हैं, जिनमें मुख्य हैं :--

1. गोदना मृत्यु के बाद भी साथ-साथ जाता है।
2. यह सजावट एवं सौन्दर्य में वृद्धि करने का एक प्रसाधन है।
3. यह किसी को पहचानने का एक माध्यम है।
4. इससे गोत्र प्रतीक को संरक्षित रखने में सहायता मिलती है।

गोदना गोदने का कार्य मुख्यत: ग्रामीण हाटों या मेलों में होता है। कई गोदना गोदने वाली महिलाएँ गाँव में भी घर-घर जाकर यह कार्य करती हैं। गोदना गोदने वाली मुख्यत: नट जाति की महिला होती है। वह एक खास तरह की सियाही और एक विशेष प्रकार की सूई का प्रयोग कर शरीर के किसी भाग में गोदना उकेरती है। अब हाट-बाजार में बैटरी चालित मशीन से भी गोदना गोदा जाता है। इस प्रक्रिया से गोदना का चिह्न उकेरने में कम समय लगता है और कम कष्टदायक होता है।

(ज) पारम्परिक औषधियाँ और वैद्य :

खरवार जन-जाति के जो लोग पहाड़ों पर और जंगलों में रहते हैं, उन्हें उस क्षेत्र में मिलने वाली जड़ी-बूटी एवं औषधीय गुणों से युक्त पेड़-पौधों की अधिक जानकारी रहती है। उनके समुदाय में भी पारम्परिक वैद्य होते हैं, जो इन जड़ी-बूटियों से विभिन्न रोगों का इलाज करते हैं। उनके समुदाय में जो ओझा-गुनी होते हैं, वे रोग के निवारण के लिए मंत्र-तंत्र के साथ-साथ जड़ी-बूटी का भी प्रयोग करते हैं। उनके क्षेत्र में मिलने वाली जड़ी-बूटी तथा अन्य औषधीय पौधों का विस्तृत विवरण पूर्व के अध्याय में प्रस्तुत किया गया है, जिसमें संबंधित रोगों की विवरणी भी दी गई है।

भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार आदि क्षेत्रों की लोक-कथा, लोक-गीत, कहावत, बुझौलिया आदि भाषा-शैली की दृष्टि से कैमूर, पलामू, गुमला आदि से भिन्न है। उस क्षेत्र से प्राप्त कुछ कहानी, गीत, कहावत, मंत्र आदि को प्रसंग हेतु प्रस्तुत किया जा रहा है।

लोक-कथा -

''करमा धरमा' का खिस्सा (कथा) (अंगिका में) :-

''करम धरम दू भाय छेलै। दोनों र कनियाँ एकादशी ब्रत करकै। करमों केरो धन उपजी गेलै आरू धरमों र मरी गेलै। इ देखी के धरमो र कनियाँ बोललै ''तों ठाकुर जी र द्वार जा। जाय क ठाकुर स कोहो कि हमरो करम कैनें जरि गेलै।''

धरम महाराज चललों सात समुंदर पार ठाकुर स भेंट करै ला रस्ता म जैत-जैत एक ठो बोझो वाला भेंटी गेले। वे न पूछै छै - ''धरम भाय, तो कहाँ जाय छो'' धरम बोललो - ''हम ठाकुर लग जाय छीं। हमर करम जरि गेलो। बोझोवाला कही छै ''एक ठो हमरों लेने जा। कहियो कि हमरो बोझो नै गिरै छा।''

धरम उसी ठीहा एक गिरहे बानि लेलको। चलत-चलत रास्ता में एक ठू गाय भेंटलो। गाय धरमों र सब बात जानी क कहलको - ''एक ठू हमरों संदेश लेन जो। कहियो कि हम्म चरै-बुलै छी। लेकिन हमरा कोई बान्हे-छान्हे नै छ।'' धरमो एक गिरो आरू बानी लेलको।

वहाँ से चललो, एक ठू भंसिया (औरत) भेंटी गेलो। भंसिया अपनो दुखड़ा सुनलको कि धरम भाई, हमरो हाथो स डोय-ढकनी नै छुटै छै। होकरू संदेश लेक एक गिरहो बान्हो लेलको।

फेनु आगु बढ़लै त रास्ता में एगो बैर गांछ मिललै। धरमों क देखी करी बैर गांछी पुछकै- 'धरम तो कहाँ जाय छो?' धरमो कैलकै - 'हम्म ठाकर लग जाय छौं।' बैरी गांछी भी एक तृ संदेश देलक। होकरो एक गिरह बान्हा लेलको। कहलके ''हमरो गाछी र कोय नै फल खाय छै।''

धरम फिरू चललो समुद्र के रो किनारा पर जैसे पहुँचलै, एक ठू करम काछु (कछुआ) घोलअलो छा। धरमों पुछै छै - "हमरा सात समुद्र पार करि दे।' करम कछ पछै छै- "तो के भय।' धरम बोललो - 'हम्म धरम छेका। हम्म ठाकुर लंग जाय छी। - से हमरो करम जरी गेलो छै। वहा पूछ ल जाय छी' करमकछू कही छै- 'हमरो एक ठू संदेश लेन जां। कहियो ठाकुर बाबा क कि हम्म कैहो न डुबै छी।' इन सब बात कही क करमकाछन न धरमो क सात समुद्र पार करी देलको। धरम हेकरो बाद ठाकुर दरबार म पहुँचलो।

ठाकुर स सवाल करै छै धरमों न - 'ठाकुर जी, हमरे करम केन्हें जरलो छै?' तुरंत ठाकुर न कही छै- 'तारो कनियाँ न टटका भात लेक पारनो करको छौ। करमों र कनियाँ न बासी भात लेक पारनो करक। तहीं स तोरो करम जरलो छै आर तही से होकरो करम ठीक-ठाक छै।' ।

वही दिनों से एकादशी करै वाला न बासी भात लेक पारनो करै छै। यही तरीका स बारी-बारी से बोझो वाला र, गाय र, भैंसिया र, बेरी बांछी र आरू करमकाछु र बात ठाकुर से कहिलकै। ठाकुर न सब बात धरमों क कहिलक। ई सब बात सुनला के बाद धरमा वहाँ से चललै।

समुद्र किनारा पर करमकाछ असरा देखै छेलै। जैसहैं क धरमों के देखी के खशी हो गेले। तडाक सना करमका पुछै छै - 'भाय, हमरो संदेश लानलो हो?' ध रम कही छै - 'हाँ, लेकिन हमरा सात समुद्र पार करी तब बतैबो।' धरम करमकाछ र पीठी पर चढ़ी क समुद्र पार होलो। पार होला के बाद धरमों कही छै- 'करमकाछ भाय, तो राजा बेटी र सरसरी र हार निगली गेलो छो। जांव केकरौ त उगली क दे देभों तो डूबी जैभो।' करमकाछु न तुरंत धरमों क उगली क कार दे देलको। तब कछुआ डुबी गेलो।

वहाँ से आगु बढ़लो, रास्ता म बैरी र गांछी असरा देखें छलै। धरमों न बैरी र गांछी क कहलकै - 'तोरो जड़ी म कलसी छौ यही खातीर कोय नै तोरो फल तोड़ी क खाय छौ। कारण जब तक उ कलशी कोय न उखाडयों तब तक फल मीठा ने होथौ। तब फल तोरो खैथौं।' बैरी कहलकै - ''धरम, हम्म केकरा खेजबों। तोहीं उखाड़ ला।'' धरमों सब कलशी क उखाड़ी करी ले लेलको। कलशी लेक चललो।

रस्ता म भंसिया भेटलो। भैसिया क कहलकै – ''तों केकरहौ भरी पेट नै खियाव छो। यही खातीर तोरो हाथो स ढकनी नै छूटै छांव। "भसिया बोललो – 'आज तोरी भरी पेट हम्म खिलाय छियौं।'' एक तरह से होकरो ढकनी छूटी गेलै। धरमों न एक-एक करी क गिरहो भी खोलन जाय छौ। वहाँ से भरी पेट खाय करी क चललों। रास्ता म गाय न असरा देखें छेलै। धरमों क देखी करी क गाय न पुछकै। "धरम कहलकै कि जांअ तोरा कोई जोरीद त वहा दिनों से तोरो सब समस्या मिटी जैथौं। गाय बेचारी कहलको कि हम्म कहा खोजबो, से तो हमरा जोरी दोहो। धरमों वहा करकै। गाय क भी साथों मल करीक चललै। अंतिम में बोझा बाला भेंटी गेलै। बोझाबाला भी धरमों क देखी करी क पुछकै – ''भाय, जल्दी कोहो. हमरा भारी लागलो जाय छै।'' धरम बोललो – ''तों केकरौ आपन बोझो उतरवाय नै छौं। नै त केकरो बोझो उठाय दैं छो। जांव तो आज दिनों स सब्मै र बोझो उठाभो, आरू आपनो भी उठाभो, तब तोरो बोझो गिरथौं।''

बोझो बाला बोललै – ''आज दिनो से हम सब्मै र बोझो उठाभो, आरू आपनो भी उठभो।'' इ कही र साथ धरमों न होकरो बोझो उतारी देलकैं। इसी तरह स सब्भी गिरहो खोली क धरम स घर पहुँचलो। घरो में हुनको पत्नी असरा देखै छेलै। सब बात कही क धरमों न आपनो पत्नी से कहलको – ''पारनों तो बासी भातो स करो। तोरो सब बेड़ा पार होया जैथों।''

इस पर्व कथा में लोक-परम्परा के महत्त्व को दर्शाया गया है।

—— ** ——

अध्याय - 12

सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन

(क) बालक-बालिकाओं पर शिक्षा का प्रभाव :

जैसा कि पूर्व अध्याय (10वाँ)में यह प्रस्तुत किया गया है कि खरवार जन-जाति में अभी भी शिक्षा की बहुत कमी है। 1981 की जनगणना के अनुसार शहरी-क्षेत्र में खरवार में साक्षरता 46 प्रतिशत है, तो ग्रामीण क्षेत्र में 14 प्रतिशत है। महिलाओं में साक्षरता की दर 6 प्रतिशत है। अगर हम इसकी तुलना 1971 की जनगणना से करते हैं तो साक्षरता और शिक्षा के क्षेत्र में कुछ प्रगति पाते हैं, जिसके तुलनात्मक आंकड़े निम्न प्रकार हैं :

टेबुल - 30

क्र. सं.	शिक्षा का स्तर	1971				1981			
		शहरी		ग्रामीण		शहरी		ग्रामीण	
		पु.	म.	पु.	म.	पु.	म.	पु.	म.
1.	अशिक्षित	504	419	59137	66436	832	820	80076	101660
2.	साक्षर	52	15	6378	863	425	389	16728	7388
3.	प्राथमिक शिक्षा प्राप्त	54	15	4402	349	219	211	2004	4196
4.	मिडिल पास	-	-	-	-	456	350	5028	774
5.	मैट्रिक पास	31	1	482	1	220	52	3452	169
6.	उच्चतर मा./ आई.ए. पास तकनीकी	-	-	-	-	65	22	493	18
7.	डिप्लोमा प्राप्त	-	-	-	-	7	2	1	-
8.	तकनीकी डिग्री प्राप्त	2	1	-	-	4	-	-	-
9.	स्नातक/ स्नातकोत्तर पास	4	-	67	-	46	6	10	-

शिक्षा के क्षेत्र में उपलब्ध आंकड़ों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि 1971 से 1981 के बीच 10 वर्षों में खरवार लड़के-लड़कियों ने मैट्रिक, आई.ए. स्नातक एवं स्नातकोत्तर एवं तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में कुछ प्रगति की है। परन्तु उनकी संख्या जनसंख्या की दृष्टि से नगण्य मानी जायेगी। 1996-97 के जो छात्रवृत्ति संबंधी आंकड़े प्राप्त हुए हैं और जिनका विवरण पूर्व के अध्याय (10 वाँ) में दिया गया है, उसके अवलोकन से ज्ञात होता है कि इधर के कुछ वर्षों में (1981 के बाद) शिक्षा की दिशा में कुछ अधिक प्रगति हुई है।

यह सर्वविदित है कि विकास का एवं विशेष कर युवा विकास का महत्त्वपूर्ण मापदंड शिक्षा है। युवा पीढ़ी में शिक्षा से बदलाव आना स्वाभाविक है। परन्तु बदलाव और वह भी सकारात्मक बदलाव के लिए शिक्षा के साथ-साथ अर्थिक-स्थिति में सुधार, नियोजन के भरपूर अवसर आदि में सुधार एवं प्रगति आवश्यक कारक है। खरवार जन-जाति का जो समुदाय कैमूर और रोहतास जिले में रहता है, उनके लिए शिक्षा की सुविधा अपेक्षाकृत अधिक है। परन्तु उनकी आर्थिक-स्थिति अच्छी नहीं रहने के कारण वे उसका यथेष्ट लाभ नहीं उठा पाते। वहाँ के लड़के-लड़कियों में मेधा-शक्ति भी सामान्य से अधिक है। परन्तु वहाँ भी खरवार अपनी लड़कियों को किशोर वय से ही कहीं दूरवर्ती विद्यालय में पढ़ने के लिए भेजना नहीं चाहते। साथ ही, उस क्षेत्र में आवागमन की भी उतनी अच्छी सुविधा नहीं है। बाहर नहीं जाने से वे बाहरी दुनिया के प्रभाव से अछूता रह जाती हैं। उनका ग्रामीण परिवेश और अर्द्ध-शिक्षित या अशिक्षित पारिवारिक वातावरण उनके दृष्टिकोण और सोच में कोई खास बदलाव नहीं ला सका है। उनके कपड़े और वेश-भूषा में अवश्य परिवर्तन आया है। अब वे भी सलवार-समीज या फ्राक पहनती हैं।

लड़के बाहर जाकर पढ़ते और घूमते-फिरते हैं, जिन पर शहरी या कस्बाई सामाजिक वातावरण का प्रभाव पड़ा है। उनके रहन-सहन और सोच में पुरानी पीढ़ी की अपेक्षा कुछ बदलाव आया है और वे अपने भविष्य के प्रति जागरूक दीखते हैं। वे अपने जनजातीय अधिकारों के प्रति भी अधिक जागरूक हैं और उन्हें पाने के लिए प्रयासरत रहते हैं। परन्तु अभी तक उस क्षेत्र से किसी युवक को उच्च-शिक्षा पाकर किसी उच्च राजपत्रित पद पर जाने की सूचना नहीं मिली है।

इस क्षेत्र में पहले लड़के कान में ''कनौसी'' (बाली) और कलाई में चांदी का ''बेरा'' (कडा) पहनते थे। परन्तु शिक्षा के प्रचार-प्रसार से अब यह परम्परा समाप्त हो गई है और अब वे अपनी कलाई में घड़ी पहनने लगे हैं। पहले उस

क्षेत्र के लड़के गिल्ली-डंडा, चीका, ओल्हापाती आदि ग्रामीण खेल खेलते थे। परन्तु अब वे फुटबॉल, वॉलीबॉल, हॉकी, क्रिकेट आदि खेलते हैं। आवासीय विद्यालयों में पढ़ने वाले या बाहर जाकर पढ़ने वाले लड़कों में विशेष परिवर्तन हुआ है। उनके खान-पान, वस्त्र, केश विन्यास आदि में काफी परिवर्तन आया है। पहले की अपेक्षा उनकी मेधा-शक्ति और तर्क-शक्ति में काफी वृद्धि हुई है। उच्च-शिक्षा पाकर उच्च पदों पर काम करने की लालसा उनमें काफी बढ़ी है। परन्तु आर्थिक संसाधनों और अनुकूल अवसर के अभाव में उनका विकास कुंठित हो जाता है। वे आज के वैज्ञानिक विकास और देश की राजनीति में भी रुचि रखने लगे हैं। यदि उन्हें अनुकूल वातावरण और उपयुक्त अवसर मिले तो उनके काफी आगे बढ़ने की संभावना है। शारीरिक रूप से स्वस्थ और मानसिक रूप से चैतन्य खरवार के बालक-बालिकाओं को उचित एवं उपयुक्त शिक्षा का अवसर प्रदान कर उन्हें काफी आगे बढ़ाया जा सकता है। पलामू, गुमला, लोहरदगा आदि जनजातीय क्षेत्रों की स्थिति लगभग सामान्य है। अधिक गरीबी, आवागमन के साधनों की कमी, शिक्षा, विशेष कर उच्च शिक्षा, के अवसर की कमी आदि के कारण इस क्षेत्र के बालक-बालिकाओं में सकारात्मक बदलाव इतना नहीं आ सका है, जितना अपेक्षित था।

गंगा की घाटी और दियारा क्षेत्र के भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार आदि जिलों में निवास करने वाले खरवार शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़े हैं। इसका अवलोकन अध्याय-10 में प्रस्तुत शिक्षा संबंधी विवरणी में किया जा सकता है। इस क्षेत्र के लड़के-लड़कियों में शिक्षा के कारण कुछ अधिक खुलापन आया है। इस क्षेत्र के मैथिल प्रभावित अंगिका की संस्कृति का प्रभाव भी उन पर पड़ा है और इस कारण उनकी मूल संस्कृति और बोली में परिवर्तन परिलक्षित होता है। फिर भी जनजातीय भोलापन और सीधापन उनके आचरण और व्यवहार में आज भी स्पष्ट रूप से झलकता है। जनजातीय मनोविज्ञान के रूप में 'संकोच' और 'संदेह' (अपरिचित के प्रति) की प्रवृत्ति उनमें अभी भी देखी जा सकती है। परन्तु रहन-सहन, वेश-भूषा, केश-विन्यास आदि में काफी परिवर्तन आया है। इस क्षेत्र में पूर्व में लड़कों को कान में कुंडल, कलाई में बेरा और गले में धुकधुकी (लाकेट) पहनाया जाता था। परन्तु अब लड़के इन गहनों को नहीं पहनते। लड़कों में पहले गोदना गोदवाने की भी परम्परा थी। परन्तु अब वह परम्परा समाप्त हो चुकी है। अब लड़कियाँ भी पढ़ने-लिखने के कारण गोदना नहीं गोदवाती हैं। अब लड़के-लड़कियाँ कलाई घड़ी पहनना अधिक पसन्द करते हैं।

उच्च एवं तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में लड़कों ने ही अधिक तरक्की की है। परन्तु लड़कियाँ इस क्षेत्र में काफी पिछड़ी हुई हैं। इस कारण उच्च एवं तकनीकी पदों पर जाने का अवसर खरवार के कुछ लड़कों को ही मिला है, लड़कियाँ उससे वंचित रही हैं। विवाह के मामले में भी युवा-वर्ग के दृष्टिकोण में काफी बदलाव आया है। वे अब पढ़-लिख कर नौकरी पाने के बाद ही विवाह करना पसन्द करते हैं। कई लड़के 28-29 वर्ष के अविवाहित मिले, जो अभी नौकरी की तलाश में हैं और शादी नहीं किया है। पढ़े-लिखे लड़के अब खेती करने से परहेज करते हैं। उच्च एवं तकनीकी शिक्षा पाकर बेकार रहने के कारण वे कुण्ठाग्रस्त हो जाते हैं और आज की सामाजिक, राजनैतिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था के प्रति आक्रोश की भावना परिलक्षित होती है।

आधुनिक शिक्षा का प्रभाव खरवार युवाओं और युवतियों पर एवं उनके जनजातीय संस्कारों और अवधारणाओं पर भी पड़ा है। वे जनजातीय सांस्कृतिक मूल्यों और परम्पराओं को भूलते जा रहे हैं। अनेक युवक एवं युवतियाँ ऐसे मिले, जो अपना गोत्र एवं गोत्र के चिह्न नहीं जानते हैं। उनके परम्परागत देवी-देवता, लोक-गीत, लोक-कथा, बोली आदि को अधिकांश लोग भूल गए हैं। अपनी लोक परम्परा के प्रति लड़कों की अपेक्षा लड़कियाँ अधिक जागरूक लगती हैं। नयी पीढी के लड़के डायन, ओझा, भूत-प्रेत आदि पर विश्वास नहीं करते और न ही उनसे भयभीत होते हैं।

इस प्रकार शिक्षा का कुछ अनुकूल और कुछ प्रतिकूल प्रभाव उन पर पड़ा है।। शिक्षा के क्षेत्र में आई गिरावट के कारण और आर्थिक सुविधा के अभाव में उनका यथोचित विकास नहीं हो सका है। फिर भी खरवार के लड़के एवं लड़कियाँ आज की सामाजिक विकृतियों के शिकार कम हुए हैं। वे शिक्षित होकर भी अपने समाज के नैतिक-मूल्यों और आदर्शों से जुड़े हुए हैं।

(ख) जातीय पहचान :

खरवार जन-जाति 'द्रविड़' प्रजाति या मूल की जन-जाति है, जैसा कि विद्वानों द्वारा प्रस्तुत विचारों के आधार पर पूर्व के अध्यायों में इस पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला गया है। काल क्रमानुसार खरवार अपने मूल वास-स्थल से विस्थापित होकर विभिन्न स्थानों एवं विभिन्न जातियों/जनजातियों के बीच जाकर बसते गए इस कारण वे अपनी सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, भाषायी एकता खोते गए। कहीं उन्होंने 'सूर्यवंशी राजपूत' के रूप में अपनी पहचान बनाने का प्रयास किया तो कहीं वे जन-जाति के रूप में जाने गए। जो खरवार रोहतास गढ़ से पलामू आदि

क्षेत्रों में जाकर बसे, वे अपने को 'सूर्यवंशी' मानते हैं। परन्तु खरवारों का जो दल खैरागढ़ (मध्य प्रदेश) से पलामू, गुमला, राँची आदि क्षेत्रों में आकर बसा वे अपने को खरवार या देशवारी (मूल) खरवार जन-जाति का मानते हैं। इस कारण अब इस क्षेत्र में सूर्यवंशी खरवार को बड़का खरवार और शेष को छोटका खरवार कहते हैं। दोनों के खान-पान, शादी-विवाह, धार्मिक अनुष्ठान, पर्व-त्योहार आदि में थोड़ा अन्तर पाया जाता है।

उनकी जातीय पहचान उनके गोत्र, गोत्र-प्रतीक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहचान, पूजा-पाठ, देवी-देवता, पर्व-त्योहार आदि के रूप में अक्षुण्ण है। वे इस क्षेत्र में मुंडा, उराँव, असुर, बिरजिया, महली, खड़िया आदि जनजातियों के बीच में बस गए हैं। अतः उन पर जनजातियों की संस्कृति तथा सामाजिक और धार्मिक-परम्पराओं का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। उनकी जातीय परम्परा पर हिन्दु-सभ्यता एंव संस्कृति का प्रभाव भी काफी पड़ा है। वे अपने सुरक्षा और कल्याण के लिए हिन्दु तथा अन्य स्थानीय जनजातीय समुदाय के देवी एवं प्रेतों की भी पूजा करते हैं।

उनकी जातीय पहचान के रूप में उनमें प्रचलित 40 गोत्र हैं, जिसके प्रतीकों की पवित्रता बनाये रखकर वे उनकी पूजा करते हैं। इस कारण वे सगोत्री विवाह नहीं करते हैं। दहेज रहित विवाह उनमें आदि काल से प्रचलित है, जो आज भी यथावत है। अन्य जनजातियों की तरह "वधु-मूल्य' या 'गोनोंग' की प्रथा इनमें नहीं है। विवाह पूर्व यौन-संबंध की वर्जना इनकी अपनी विशिष्टता है। जन्म एवं मृत्यु के अवसर पर किये जाने वाले धार्मिक-संस्कार, खान-पान, स्त्रियों में गोदना का प्रचलन, उनके उपनाम के साथ खरवार का जुड़ा रहना आदि ऐसे तत्व हैं, जो उनकी जातीय पहचान बनाए हुए हैं। जनजातीय क्षेत्र में उनके रूप-रंग, शारीरिक बनावट आदि में बहुत कम परिवर्तन आया है। परन्तु वे अपनी आदिकालीन खरवारी या खेरवाली बोली बिल्कुल भूल चुके हैं। वे अब स्थानीय बोली ही बोलते हैं, जिसकी विस्तृत जानकारी क्षेत्रानुसार पूर्व में दी गयी है। वे अपने धर्म को हिन्दु धर्म मानते हैं और कोई-कोई उसे सनातन धर्म भी कहते हैं। जनजातीय क्षेत्र में बसने वाले कुछ खरवार सरना धर्म को भी मानते हैं और सरना स्थल में जाकर पूजा करते हैं। विभिन्न अवसरों पर वे जनजातीय देवी-देवताओं को संतुष्ट करने के लिए बकरे और मुर्गे की बलि चढ़ाते हैं।

गंगा के किनारे दियारा क्षेत्र में भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार आदि क्षेत्रों में खरवार जन-जाति के लोग लगभग 400 वर्ष पहले जाकर बस गए हैं। उस क्षेत्र की भौगोलिक-स्थिति, पर्यावरण, वहाँ की सामाजिक एवं सांस्कृतिक संरचना का

उनकी जातीय विशिष्टता पर गहरा प्रभाव पड़ा है। इस क्षेत्र के बहुत से खरवारों का वैवाहिक-संबंध मालदा जिला (पश्चिम बंगाल) में भी काफी पहले से होता आ रहा है। वहाँ के बंगला भाषा-भाषी एवं बंगला परिवेश से बहुएँ इस क्षेत्र में आती रही हैं। इस प्रकार के वैवाहिक संबंधों के फलस्वरूप इस क्षेत्र के कुछ खरवार परिवारों पर बंगला संस्कृति एवं लोक-परम्परा का भी प्रभाव पडा है। भौतिक पर्यावरण, वैवाहिक संबंध तथा कालक्रमानुसार विभिन्न चरणों में हुए संभावित 'म्यूटेशन' के कारण इस क्षेत्र के कुछ खरवार लोगों की शारीरिक बनावट, रूप-रंग आदि में भी परिवर्तन हुआ है। कुछ क्षेत्रों में बसे खरवारों के रूप-रंग, नाक-नक्श आदि उनके आदि काल के द्रविड़ प्रजाति के चिह्न को घोषित करते हैं। उदाहरण स्वरूप भागलपुर के रानी दियारा के चटइया गाँव के खरवार लोगों में द्रविड़ मूल या प्रजाति के अनेकों शारीरिक लक्षण विद्यमान हैं। इसी कारण इस गाँव को लोग 'कारी चटइया' अथवा काले लोगों का चटइया गाँव कह कर सम्बोधित करते हैं।

इस क्षेत्र के अधिकांश खरवार अपना गोत्र 'कश्यप गोत्र' बताते हैं। ज्ञातव्य है कि खरवार में प्राप्त सूचनानुसार 40 गोत्र हैं, जिनमें कश्यप गोत्र से मिलता-जुलता 'कच्छप' या 'कछुआ' गोत्र भी है। परन्तु अधिकांश लोग अपने पुराने गोत्र एवं गोत्र-प्रतीक को भूल गए हैं। कुछ लोगों से बातचीत में ऐसा लगा कि संभवत: उनका मूल गोत्र 'कच्छप' था। परन्तु उच्चारण की सुविधानुसार वह कालक्रमानुसार कश्यप हो गया। कई लोगों ने यह भी सूचित किया कि शादी-विवाह के अवसर पर ब्राह्मण पुरोहित द्वारा पूछे जाने पर गोत्र की जानकारी नहीं देने के फलस्वरूप पुरोहित द्वारा उनका गोत्र कश्यप रख दिया गया।

इस क्षेत्र के खरवार अपने नाम के साथ खरवार टाइटल न जोड़कर मंडल, सिंह आदि लिखते हैं, जो इस क्षेत्र में उनकी जातीय पहचान है। अधिकांश नामकरण ब्राह्मण पुरोहित द्वारा जन्म की राशि देख कर किया जाता है। नामकरण के संबंध में पूर्व अध्याय में विवरण प्रस्तुत किया जा चुका है। भागलपुर आदि क्षेत्रों में भी खरवार की जनजातीय परम्परा के अनुसार शादी में दहेज लेने या देने की परम्परा नहीं है। विवाह बिना वधु मूल्य दिये ही सम्पन्न हो जाता है। इस कारण सभी विवाह योग्य लड़के या लड़कियों की शादी बिना किसी विघ्न-बाधा के सम्पन्न हो जाती है। शादी-विवाह के रीति-रिवाज पर एवं उनकी अपनी परम्परा पर कुछ स्थानीय प्रभाव भी पड़ा है। अन्य खरवारों की तरह वे भी हिन्दु देवी-देवताओं की पूजा करते हैं। अनजातीय पर्व में वे मुख्यत: करम पर्व मनाते हैं। अत: कुछ मायने में खरवार के रूप में उनकी जातीय पहचान बरकरार है।

(ग) परिवर्तन के कारकः

खरवार जन-जाति के सम्बन्ध में पूर्व के विभिन्न विद्वानों ने यह मत व्यक्त किया है कि वे हिन्दु जाति के रूप में सम्परिवर्तित हो चुके हैं। विभिन्न विद्वानों के विचारों पर पूर्व के अध्यायों में विस्तृत रूप से विचार किया जा चुका है। विद्वानों एवं मानव वैज्ञानिकों के मत एवं क्षेत्र में किये गये सर्वेक्षण के दौरान उनके (खरवार के) सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आदि क्षेत्रों में परिवर्तन के कारक निम्न प्रकार पाये गये :-

(1) आव्रजन (माइग्रेशन):- सिन्धु घाटी से लेकर गंगा की घाटी तथा कैमूर के पहाड़ से लेकर नेतरहाट के पठार तक की उनकी यात्रा-कथा अनेकों संघर्षों और उनके उत्थान-पतन की व्यथा कथा है। कभी वे कत्था बनाने में निपुण और इसके अच्छे व्यवसायी थे। परन्तु इससे अलग होने के कारण उनकी आर्थिक-स्थिति प्रभावित हुई। साथ ही, विभिन्न स्थानों में घूमते और विस्थापित होते रहने के कारण, वे सम्पन्न कृषक नहीं बन सके। पलामू में कभी वे जागीरदार थे। परन्तु अंग्रेजों से दुश्मनी मोल लेकर उन्हें अपनी जगह-जमीन से हाथ धोना पड़ा।

इस आव्रजन और पलायन ने उन्हें रोहतास और कैमूर की पहाड़ी से लेकर गंगा नदी की घाटी में भागलपुर से लेकर साहेबगंज, कटिहार, पूर्णियां और पश्चिम बंगाल के मालदा जिले में जाकर बसने को मजबूर किया। इस कारण वे अपने उद्‌भव या उत्पत्ति के मूल इतिहास को भूलते गये। उनके समुदाय में संगठन के स्थान पर बिखराव आ गया। स्थान बदल-बदल कर बसने के कारण उनकी बोली या भाषा में एकरूपता नहीं रही और अपनी मूल भाषा या बोली-खेरवारी बिल्कुल भूल गए।

(2) पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी (एन्वेरान्मेंट एन्ड इकॉलॉजी):- विद्वानों के मतानुसार खरवार द्रविड़ मूल की विकसित जनजाति समुदाय के हैं, जिनकी सभ्यता एवं संस्कृति सिन्धु नदी की घाटी में काफी विकसित थी। परन्तु बर्बर आर्यों के हमले और उनसे पराजित होकर खरवार उत्तर की ओर चले गए। उसके बाद वृन्दावन (उत्तर प्रदेश) खैरागढ़ (मध्यप्रदेश) आदि उनके आवास क्षेत्र बने। वहाँ से वे रोहतासगढ़ एवं कैमूर क्षेत्र में आकर बस गए। वहाँ से पलामू और राँची के पठारी क्षेत्र में भी कुछ लोग आकर बस गए। उनका जीवन घने और फल-फूल से सम्पन्न जंगलों में बीता, जहाँ उन्होंने वनों को काटकर कृषि-कार्य प्रारम्भ किया। उस समय उनका पर्यावरण और पारिस्थितिकी उनके काफी अनुकूल थे। उनका भौतिक और अभौतिक दोनों पर्यावरण उनके लिए काफी सम्पन्न और सुखदायी थे। परन्तु बाद में अंग्रेजों की गलत नीति के कारण वे अपनी जमीन और जंगल से बेदखल हो गए।

इस कारण अधिकांश खरवार कृषक से कृषि मजदूर और भूमिहीन हो गए। धीरे-धीरे जंगल कटते गए और पर्यावरण के असंतुलित होने के कारण उनका भौतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन विपरीत रूप से प्रभावित हुआ है। जो लोग गंगा की घाटी में बस गए, वे बाढ़ की त्रासदी से जूझते रहे हैं। पर्यावरण में परिवर्तन के कारण उनके रूप-रंग, शारीरिक बनावट, खान-पान आदि में काफी परिवर्तन हुआ है।

(3) सामाजिक एवं सांस्कृतिक मिश्रण :- खरवार अपने मूल स्थान से हटकर जहाँ भी जाकर बसे, वहाँ पूर्व से ही कई बहुसंख्यक जातियाँ / जनजातियाँ बसी हुई थीं। अत: खरवार को उनके साथ सामंजस्य स्थापित करने और उनके साथ मिलकर सौहार्दपूर्ण जीवन बिताने के लिए अपने सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों एवं परम्पराओं में परिवर्तन लाना पड़ा और वहाँ के निवासियों की सामाजिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं को अपनाना पड़ा। इसी कारण आज उनके सामाजिक रीति-रिवाज, पर्व-त्योहार, देवी-देवता, बोली आदि के विविध रूपों पर हिन्दु एवं अन्य जनजातियों का प्रभाव स्पष्ट झलकता है।

(4) आर्थिक कारण :- खरवार शुरू से ही कृषि से जुड़े रहे हैं और पूर्व में उनकी गणना सम्पन्न किसानों में की जाती रही है। उनकी एक शाखा के लोग कत्था बनाने में काफी प्रवीण और दक्ष थे। कुछ खरवार अच्छे योद्धा थे और जिन्हें बहादुरी के कारण जागीरें भी मिली थीं। परन्तु जमीन्दारी समाप्त होने के कारण उनकी जागीरें भी चली गईं। अब वे अपने पुराने आर्थिक आधारों से दूर हो चुके हैं। जंगलों के कटने और उसके सरकारीकरण से वे वन-सम्पदा से भी वंचित हो गए। शिक्षा की कमी के कारण उनमें अधिकांशत: कोई अच्छी नौकरी नहीं पा सके। लगभग 40 से 45 प्रतिशत खरवार गरीबी-रेखा से नीचे जीवन-यापन कर रहे हैं। उनमें कुछ लोग ही सम्पन्न हैं। आर्थिक पिछड़ापन के कारण ही उनमें अपेक्षित बदलाव नहीं आ सका है।

(5) शिक्षा :- पूर्व में उनकी साक्षरता एवं शिक्षा के संबंध में विस्तृत रूप से विचार किया गया है। खरवार में जिस प्रकार से शिक्षा का प्रचार-प्रसार हुआ है या हो रहा है, उसे संतोषजनक नहीं कहा जा सकता है। फिर भी उनके जीवन और समाज में जो सकारात्मक परिवर्तन परिलक्षित हो रहे हैं, उसका कारण शिक्षा है। अब खरवार जनजाति के सदस्य भी उच्च एवं तकनीकी शिक्षा पाकर प्रशासन में उच्च पदों पर कार्यरत हैं और उनके परिवार का जीवन-स्तर काफी ऊँचा हुआ है। खरवार के युवा वर्ग की जीवन-दृष्टि एवं सोच में काफी प्रगति हुई है। परन्तु महिलाओं में

अभी भी शिक्षा की कमी के कारण काफी पिछड़ापन देखने को मिलता है।

(6) आवागमन की सुविधा :- पूर्व की अपेक्षा खरवार जनजाति के क्षेत्रों में आवागमन की सुविधा-सड़क आदि का विस्तार एवं विकास हुआ है। अब वे कहीं भी आसानी से आ-जा सकते हैं। इस सुविधा के कारण दूर जाकर शिक्षा प्राप्त करने, वैवाहिक-संबंध स्थापित करने, नौकरी करने आदि कार्य सम्पन्न करने में वे अधिक सक्षम हुए हैं। फिर भी कुछ क्षेत्र ऐसे हैं, विशेषकर कैमूर, पलामू, गुमला आदि का पहाड़ी एवं जंगली क्षेत्र, जहाँ अभी भी आवागमन के लिए सड़कें उपलब्ध नहीं हैं। सड़कों के अभाव में परिवहन की सुविधा भी नगण्य है। इस कारण इन क्षेत्रों का समुचित विकास नहीं हो सका है और लोग काफी पिछड़े हैं।

(7) संचार-माध्यमों का प्रसार एवं विकास :- आज के युग में समाचार पत्र-पत्रिकाओं के साथ-साथ इलेक्ट्रानिक मीडिया का भी काफी विकास हुआ है। रेडियो और टेलीविजन के प्रचार-प्रसार ने लोगों को अधिकाधिक जागरूक करने का काम किया है। लोगों के रहन-सहन, खान-पान, सोच-विचार आदि पर इनका काफी असर देखने को मिलता है। इससे सामाजिक एवं राजनैतिक जागरूकता आयी है और लोग राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं से परिचित होने लगे हैं। सिनेमा-जगत और दूरदर्शन के धारावाहिकों से लोग इतने अधिक प्रभावित हैं कि वे अपने शिशु का नामकरण उनमें काम करने वाले अभिनेताओं और अभिनेत्रियों के नाम पर करने लगे हैं। प्रचार-माध्यमों से प्रचारित एवं प्रसारित सूचनाओं और विज्ञापनों के आधार पर वे उच्च / तकनीकी पाठ्यक्रमों तथा नौकरी के लिए आवेदन भेजते हैं और अपने लक्ष्य को पाने का प्रयास करते हैं और सफल भी होते हैं।

(8) राजनैतिक कारण :- खरवार जनजाति के लोग आरम्भ काल से ही राजतंत्र की राजनीति से जुड़े रहे और अनेक राजाओं के उत्थान-पतन में उनके साथ रहे। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की पहली लड़ाई 1857 के सिपाही विद्रोह में भी उन्होंने भाग लिया। इसके अलावा छोटानागपुर में विभिन्न जनजातियों द्वारा चलाये गये आन्दोलनों में उन्होंने उनका साथ दिया। 1942 के स्वतंत्रता-आन्दोलन में भी उनकी अहम भूमिका रही। उनको अपनी स्वतंत्रता और अस्मिता की रक्षा करने की प्रेरणा उनके अपने राष्ट्रवादी पूर्वजों - नीलाम्बर, पीताम्बर, फेटल सिंह आदि से मिली। विभिन्न आन्दोलनों से जुड़े रहने के कारण उनमें राजनैतिक जागरूकता काफी रही है। अभी भी राजनीति के क्षेत्र में उनके कई वरीय सदस्य - सर्वश्री यमुना सिंह (पलामू), अम्बिका प्रसाद (भागलपुर) आदि सशक्त हस्ताक्षर माने जाते हैं। आज के युवा-वर्ग में भी राजनैतिक जागरूकता एवं सक्रियता दृष्टिगोचर होती है।

(9) धार्मिक दृष्टि-कोण एवं प्रतिबद्धता :- अपने धर्म एवं धार्मिक लोक-विश्वासों के प्रति उनमें दृढ़ आस्था है। उनकी धार्मिक-दृष्टि पर हिन्दु तथा अन्य जनजातीय धार्मिक-धारणाओं का भी प्रभाव पड़ा है। परन्तु उन्होंने विजातीय या विदेशी धार्मिक-विश्वासों से अपने को पूरी तरह अलग रख। यही कारण है कि उनमें इस्लाम या ईसाई धर्मावलम्बी नहीं के बराबर हैं।

(10) उग्रवाद का प्रभाव :- कैमूर, रोहतास, पलामू, गुमला, लोहरदगा आदि पहाड़ी एवं जनजातीय क्षेत्रों में अनेक उग्रवादी संगठन सक्रिय हैं। खरवार प्राय: इन संगठनों से परहेज करते हैं और उनसे दूर रहते हैं। परन्तु उग्रवादी हिंसात्मक गतिविधियों से उनका एवं उनके क्षेत्र का विकास काफी हद तक बाधित हुआ है। उनके युवकों को उग्रवादी तत्वों से अपने को दूर रखने और उनका साथ नहीं देने के कारण कभी-कभी उनकी प्रताड़ना सहनी पड़ती है।

—— ** ——

अध्याय - 13

विकास के कार्यक्रम

(क) सरकार द्वारा चलाये जा रहे कल्याणकारी कार्यक्रम :-

बिहार प्रदेश में जनजातीय विकास के विभिन्न कार्यक्रम प्रथम पंचवर्षीय योजना काल (1951-56) से ही चलाये जाते रहे हैं। जनजातीय विकास की अवधारणा 'सामुदायिक विकास' के रूप में शुरू हुई, जो बाद में 'जनजातीय विकास प्रखंड/ परियोजना' में संपरिवर्तित हो गई। इसके अर्न्तगत जनजातीय बहुल क्षेत्रों को जनजातीय विकास के सघन कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए चुना गया। आगे चलकर पूरे जनजातीय क्षेत्र को जनजातीय जनसंख्या को आधार बनाकर तीन भागों में विभक्त कर दिया गया, जो निम्न प्रकार है :

(1) जनजातीय उपयोजना क्षेत्र :- इसमें वे जिले / प्रखंड आते हैं, जहाँ जनजातीय जनसंख्या 50 प्रतिशत से अधिक है। इसमें 18 जिले आते हैं।

(2) माडा (मोडीफायड एरिया डेवेलपमेंट एजेन्सी):- जिन जिलों में जनजाति की जनसंख्या 50 प्रतिशत से कम है, परन्तु जहाँ जनजातियों की घनी आबादी है। इसमें 11 जिलों के 42 प्रखंड आते हैं।

(3) बिखरे जनजाति क्षेत्र :- इसमें बिहार के वैसे क्षेत्र या प्रखंड आते हैं, जहाँ जनजाति समुदाय के लोग बिखरे हुए हैं।

खरवार जनजाति के लोग प्राय: इन सभी क्षेत्रों में निवास करते हैं। इन क्षेत्रों में जो भी विकास के कार्यक्रम चलाये गये, उनमें उन जनजातियों को विशेष प्राथमिकता दी गई, जो सामाजिक एवं आर्थिक रूप से अधिक पिछड़ी थीं। इनमें असुर, बिरहोर, कोरवा, बिरजिया, परहिया, सवर, हिल खड़िया आदि प्रमुख थे। जनजातीय विकास एवं कल्याण के लिये निम्नांकित कार्यक्रम अपनाये गये :

(1) आधारभूत संरचना विकास :- इस कार्यक्रम के अन्तर्गत सड़क, पुलिया, विद्यालय, स्वास्थ्य केन्द्र आदि खोले गए। अनेक क्षेत्रों में पंचायत भवन एवं सामदायिक भवन भी बनाये गए। पेयजल के लिए कूप / नलकूप की व्यवस्था की गई।

(2) आर्थिक विकास के कार्यक्रम :- इसके अर्न्तगत कृषि-विकास के लिए भूमि संरक्षण एवं भूमि समतलीकरण, अनुदान पोषित बैल, खाद, बीज, उन्नत

औजार, कीटनाशक दवाओं का वितरण, सिंचाई के लिए कूप, आहार, तालाब, बाँध आदि का निर्माण।

बागवानी विकास - फल और अन्य उपयोगी साग-सब्जी के पौधों एवं बीजों का नि:शुल्क वितरण तथा उनके संबंध में तकनीकी जानकारी देना।

गव्य विकास - अनुदान में उन्नत नस्ल की गायों का वितरण तथा दुग्ध शीतलीकरण केन्द्रों का निर्माण।

सहकारिता सेवा- लैम्पस तथा अन्य सहकारी समितियों का गठन एवं उनके माध्यम से अच्छे किस्म के बीज, खाद, ऋण आदि उपलब्ध कराना।

पशुपालन सेवा एवं विकास - इसके अन्तर्गत उन्नत नस्ल के गाय, बकरी, सुअर आदि का वितरण एवं उनके नस्ल के सुधार का कार्य। साथ ही मुर्गी, बत्तख आदि का अनुदान-पोषित योजना के अन्तर्गत वितरण।

मत्स्य-पालन - जनजातीय क्षेत्र में मत्स्य पालन विकास प्रक्षेत्र का निर्माण एवं प्रशिक्षण देकर मछलीपालन को प्रोत्साहित करना। साथ ही, तालाबों का निर्माण एवं जिर्णोद्धार कर उनमें मत्स्य-पालन के लिए मछली के जीरा का मुफ्त वितरण।

(2) नियोजन एवं स्वनियोजन कार्यक्रम :- स्वनियोजन हेतु 'ट्रायसम' योजनान्तर्गत जनजातीय युवा-वर्ग को विभिन्न तकनीकी / पारम्परिक कुटीर उद्योगों में प्रशिक्षण देकर उन्हें अनुदान द्वारा पूँजी उपलब्ध कराकर स्वनियोजित कराना। पढ़े-लिखे युवक-युवतियों को प्रधानमंत्री रोजगार योजनान्तत अनुदान-सह-कर्ज देकर उन्हें स्वनियोजित करना।

जवाहर रोजगार योजना, प्रधानमंत्री की सुनिश्चित रोजगार योजना आई.आर. डी.पी. आदि के अन्तर्गत उन्हें रोजगार एवं अनुदान आदि उपलब्ध कराकर उनका आर्थिक-विकास सुनिश्चित करना।

डवाकरा के अन्तर्गत जनजातीय महिलाओं को स्वनियोजन एवं रोजगार का अवसर उपलब्ध कराना। उनको बिचौलियों के शोषण से बचाने तथा उनके आर्थिक विकास के लिए राँची में आदिवासी सहकारिता विकास निगम लि. की स्थापना की गई। इसका मुख्य काम जनजातीय क्षेत्र में मिलने वाले वनोत्पादों को उचित मूल्य पर खरीद कर बिचौलियों के शोषण से बचाना और जनजातियों की सहयोग-समिति बनाकर उन्हें काफी कम सूद पर ऋण उपलब्ध कराकर उनको अपना उद्योग, व्यापार आदि चलाकर आर्थिक-विकास करना।

(3) आवास योजना :- जनजातियों को आवास की सुविधा देने के लिए पूर्व में कल्याण विभाग द्वारा जनजातियों के लिए और विशेषकर अल्प-संख्यक आदिम जनजातियों (असुर, बीरहोर, परहिया आदि) के लिए गृह-निर्माण के लिए अनुदान देने का प्रावधान था। बाद में इन्दिरा आवास योजना के अर्न्तगत जनजातियों के साथ-साथ अनुसूचित जाति को भी गृह-निर्माण का लाभ मिलने लगा। इस योजना के अन्तर्गत अनेक बेघरों को घर का लाभ मिला।

इन योजनाओं के कार्यान्वयन एवं उनसे खरवार जनजाति को मिले लाभ का सर्वेक्षण संबंधित क्षेत्रों में कराया गया। अधिकांश प्रखंडों में खरवार के आर्थिक-विकास से संबंधित किये गए कार्यों का अलग से कोई प्रतिवेदन अथवा आंकड़ा उपलब्ध नहीं कराया गया। सर्वेक्षण में प्राप्त प्रतिवेदन के अनुसार खरवार के विकास से संबंधित निम्नांकित कार्यक्रम (1996-97) सम्पन्न हुए :

टेबुल - 31

क्र. सं.	जिला	प्रखंड	ग्राम	योजना का नाम	योजना का स्रोत	लाभान्वितों की सं.
1	2	3	4	5	6	7
1.	कैमूर	अधौरा	चैनपुरा	सिंचाई बांध	आई.आर.डी.पी.	30 परिवार
2.	कैमूर	अधौरा	दीधार	5 सिंचाई कूप	प्रखंड से जलधारा	5 परिवार
3.	गुमला	बिशुनपुर	कासमार घाधारा	25 तदैव	तदैव	25 परिवार
4.	गुमला	बिशुनपुर	कसमार घाघरा	1 चेक डैम	सिंचाई विभाग (प्रखंड से)	40 परिवार
5.	गुमला	बिशुनपुर	कसमार घाघरा	1 नहर	तदैव	102 परिवार
6.	गुमला	बिशुनपुर	कसमार घाघरा	1 इन्दिरा आवास	प्रखंड से	1 परिवार
7.	गुमला	बिशुनपुर	कसमार घाघरा	सड़क-3 कि.मी.	प्रखंड से जवाहर रोजगार योजना	3 गाँव
8.	पलामू	लातेहार	बेरी	1 चेक डैम	प्रखंड से	45 परिवार
9.	पलामू	लातेहार	बेरी	10 सिंचाई कूप	प्रखंड से जलधारा	10 परिवार

1	2	3	4	5	6	7
10.	पलामू	लातेहार	बेरी	1 चापाकल	पी.एच.ई.डी.	60 परिवार
11.	पलामू	लातेहार	ललगड़ी	25 इन्दिरा आवास	प्रखंड	25 परिवार
12.	पलामू	लातेहार	बिशुनपुर पंचायत	4 इन्दिरा आवास	प्रखंड	4 परिवार
13.	पलामू	लातेहार	बिशुनपुर पंचायत	4 सिंचाई कूप	जलधारा प्रखंड	4 परिवार
14.	पलामू	लातेहार	बिशुनपुर पंचायत	1 डिजल पम्प	आइ.आर.डी.पी.	1 परिवार
15.	पलामू	लातेहार	बिशुनपुर पंचायत	7 बैल	आइ.आर.डी.पी.	7 परिवार
16.	पलामू	लातेहार	बिशुनपुर पंचायत	2 कि.मी. सड़क	जवाहर रोजगार योजना	2 गाँव
17.	पलामू	लातेहार	लेथपा	8 कि.मी. सड़क	जवाहर रोजगार योजना	4 गाँव
18.	पलामू	लातेहार	पोचरा	7 कि.मी. सड़क	जवाहर रोजगार योजना	3 गाँव
19.	पलामू	लातेहार	पोचरा	6 कि.मी. सड़क	जवाहर रोजगार योजना	2 गाँव
20.	पलामू	लातेहार	कुरा	4 कि.मी. सड़क	आर.ई.ओ.	2 गाँव
21.	पलामू	लातेहार	लबरपुर	2 कि.मी. सड़क	जवाहर रोजगार योजना	2 गाँव
22.	पलामू	लातेहार	ललगड़ी	2 सिंचाई कूप	मेसो परियोजना	2 गाँव
23.	भागलपुर	पिरपैंती	मधुबन	100 इन्दिरा आवास	प्रखंड	100 परिवार
24.	साहेबगंज	साहेबगंज	बड़ी कोदरजना	1 कि.मी. सड़क	जवाहर रोजगार योजना	2 गाँव

1	2	3	4	5	6	7
25.	साहेबगंज	साहेबगंज	बड़ी कोदरजना	विद्यालय भवन	प्रखंड	8 गाँव
26.	साहेबगंज	साहेबगंज	बड़ी कोदरजना	20 बांस बोरिंग	प्रखंड	20 परिवार
27.	साहेबगंज	साहेबगंज	बड़ी कोदरजना	2 इंदिरा आवास	प्रखंड	2 परिवार

सर्वेक्षित क्षेत्रों में ऊपर वर्णित योजनाओं के अतिरिक्त खरवार जनजाति के विकास और कल्याण के लिए क्रियान्वित अन्य किसी योजना के संबंध में जानकारी नहीं मिली। प्रधानमंत्री शिक्षित बेरोजगार योजना के अन्तर्गत किसी भी पढ़े-लिखे खरवार युवक के लाभान्वित होने की जानकारी नहीं मिली। विभिन्न पदाधिकारियों से बातचीत के क्रम में यह जानकारी मिली कि खरवार को विकास-कार्यों में प्राथमिकता देने का कोई प्रावधान सरकार की ओर से नहीं है। बल्कि क्षेत्रीय सर्वेक्षण से ऐसा लगा कि अन्य जनजातियों की तुलना में उन्हें विकास-कार्यों में सबसे कम तरजीह दी जाती है।

(ख) जल-संसाधन :- खरवार जिन क्षेत्रों में बसते हैं, वह निम्न तरह के भौगोलिक क्षेत्रों में अवस्थित है।

1. पहाड़ी और जंगली क्षेत्र - कैमूर, रोहतास, पलामू, गुमला आदि।
2. गंगा कोसी, महानन्दा आदि - भागलपुर, साहेबगंज, मुंगेर, कटिहार आदि। नदियों की घाटी / दियारा

जिन पहाड़ी क्षेत्रों में खरवार बसते हैं, वहाँ पहाड़ी झरना और पहाड़ी नदियाँ एवं नाले ही मुख्य जल-स्रोत हैं। इन्हीं नालों या झरनों के पानी को छोटे-छोटे चेक डैम बनाकर संग्रहीत किया जा सकता है। इस क्षेत्र में कहीं-कहीं वर्षा का अभाव के कारण उसका जल संग्रहीत नहीं हो पाता। इन क्षेत्रों की नदियाँ भी बरसाती हैं और गर्मी में सूख जाती हैं। कहीं-कहीं नदियों से नहरें निकाली गई हैं. जैसे रोहतास में सोन नहर। परन्तु इससे रोहतास के निचले इलाके को ही पानी मिलता है और पहाड़ी क्षेत्र को इससे कोई लाभ नहीं होता है। निचले भाग में रहने वाले खरवार उससे लाभ नहीं उठा पाते हैं।

पलामू जिले के लातेहार अनुमंडल के लातेहार, चन्दवा, गारू, बरवाडीह आदि तथा गढ़वा जिले के रंका, भंडरिया आदि क्षेत्रों में जो भी नदी-नाले हैं, वे भी

बरसाती हैं। इस क्षेत्र में बहने वाली प्रमुख नदियाँ निम्नांकित हैं, जिनसे खरवार लाभान्वित होते हैं :

1. पलामू (गढ़वा सहित) कोयल तथा ओरंगा नदी।
2. गुमला - दक्षिण कोयल तथा शंख।
3. लोहरदगा - दक्षिण कोयल।
4. हजारीबाग - दामोदर और बराकर।
5. कैमूर, रोहतास - कर्मनाशा, सोन तथा काव।
6. भागलपुर, साहेबगंज कटिहार आदि - गंगा, कोसी तथा महानन्दा।

इन नदियों में सोन नदी से नहरें निकाली गई हैं, जिनसे सिंचाई होती है। ओरंगा नदी के दक्षिणी भाग में पलामू खरवार जन-जाति की काफी आबादी है। परन्तु बरसाती नदी होने के कारण गर्मी में सिंचाई के लिए पानी उपलब्ध नहीं रहता है। इसके अलावा जब पहाड़ी क्षेत्रों में झरने के रूप में जल के काफी स्रोत उपलब्ध हैं, उनसे भी लोग सिंचाई का काम लेते हैं।

भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार आदि क्षेत्रों में गंगा, कोसी और महानन्दा मुख्य नदियाँ हैं, जिनमें साल भर पानी उपलब्ध रहता है, जिनसे पइन निकाल कर या अन्य साधनों से सिंचाई होती है। इस क्षेत्र में हर वर्ष बाढ़ का खतरा बना रहता है। वर्ष । 1998 में गंगा, कोसी, महानन्दा और उनकी सहायक नदियों में बाढ़ आने से इन जिलों में काफी तबाही हुई है। खरवार मुख्यत: नदी किनारे या दियारा क्षेत्र में ही बसे हैं। अत: बाढ़ से उन्हें काफी नुकसान उठाना पड़ता है।

(ग) नियोजन के संसाधन :

1981 की जनगणना के आंकड़ों से ज्ञात होता है कि खरवार जन-जाति के अधिकांश लोग कृषि-श्रमिक हैं। उनकी जनसंख्या का नगण्य भाग उद्योग, खान, परिवहन आदि सेवाओं में कार्यरत है। इसका मुख्य कारण शिक्षा की कमी है। खरवार जिन जिलों में रहते हैं, उनमें से कुछ जिलों में नियोजन के संसाधन उपलब्ध हैं। परन्तु उनमें वे बहुत कम संख्या में नियोजित हैं अथवा नियोजन संख्या शून्य है। सर्वेक्षण के दौरान उनके नियोजन-संबंधी कुछ आंकड़े मिले हैं, जिन्हें टेबुल-32 पर प्रस्तुत किया जा रहा है :

टेबुल - 32

क्र.सं.	जिला	उद्योग की विवरणी	नियोजित खरवार की अनुमान्य सं.
1.	2.	3.	4.
1.	कैमूर, रोहतास	डालमियां नगर का कारखाना बंजारी सीमेंट कारखाना	अभी बंद है
2.	पलामू	कास्टिक सोडा फैक्टरी, चूना पत्थर की खान	अप्राप्त
3.	गुमला, लोहरदगा	बाक्साइट की खानें	15
4.	हजारीबाग, गिरिडीह, धनबाद	कोयला एवं अबरख	अप्राप्त
5.	पूर्णियाँ, कटिहार	जूट उद्योग	20
6.	भागलपुर	तसर, बीड़ी, एन.टी.पी.सी, आदि	30
7.	साहेबगंज	क्रसर उद्योग, बीड़ी उद्योग	100 50

इसके अलावा प्रखंडों द्वारा कार्यान्वित जवाहर रोजगार योजना, सुनिश्चित रोजगार योजना आदि में भी उनके नियोजन के कुछ अवसर उपलब्ध होते हैं। जनजातीय क्षेत्रों से खरवार जनवरी से मई तक राज्य के भीतर या राज्य के बाहर ईट भट्ठों में जाकर काम करते हैं। जो लोग उच्च-शिक्षा प्राप्त किये हैं या तकनीकी योग्यता रखते हैं, सरकारी या अर्द्ध सरकारी सेवा में नियोजित हैं, जिसका संक्षिप्त विवरण पूर्व में दिया जा चुका है। खरवार समुदाय में भी शिक्षित बेरोजगारी काफी है और कई लोग इंजीनियरिंग करके बेकार हैं।

(घ) स्वास्थ्य-संबंधी सुविधाएँ :

सरकार द्वारा पूरे राज्य में स्वास्थ्य एवं चिकित्सा की सुविधा उपलब्ध कराने के लिए जिला-स्तर पर सदर अस्पताल, अनुमंडल स्तर पर अनुमंडलीय अस्पताल, प्रखंड स्तर पर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र/अपर प्रा. स्वास्थ्य केन्द्र/रेफरल अस्पताल तथा पंचायत या ग्राम-स्तर पर स्वास्थ्य उप केन्द्र खोले गए हैं। इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा जनजातीय बहुल क्षेत्र में आयुर्वेदिक चिकित्सा-केन्द्र भी चलाये जा रहे हैं।

इन सभी चिकित्सालयों और स्वास्थ्य केन्द्रों/उपकेन्द्रों के संचालन हेतु चिकित्सा पदाधिकारी, एल.एच.वी., ए.एन.एम. तथा अन्य चिकित्सा कर्मी पदस्थापित हैं। जनजातीय क्षेत्र में स्वास्थ्य-संबंधी सुविधाओं पर ध्यान दिया जाता है। स्वास्थ्य एवं चिकित्सा-संबंधी इस आधारभूत संरचना के पीछे यही उद्देश्य है कि लोगों को स्वास्थ्य एवं चिकित्सा की सुविधा उनके घर तक अथवा निकटतम स्थान पर उपलब्ध करा दी जाय, परन्तु इस कार्यक्रम का यथेष्ट लाभ खरवार या अन्य जनजातियों को नहीं मिल पा रहा है। खरवार जिन क्षेत्रों में रहते हैं, उन क्षेत्रों में कल्याण विभाग द्वारा जड़ी-बूटी पर आधारित आयुर्वेदिक चिकित्सा-केन्द्र रोहतास और कैमूर में 2, पलामू में 2, लोहरदगा में 1, साहेबगंज में 2, गुमला में 4 संचालित हैं। ये चिकित्सा-केन्द्र जनजातीय क्षेत्र में काफी लोकप्रिय है। इन केन्द्रों में आयुर्वेदिक चिकित्सा पदाधिकारी तथा एक वैद्य सहायक रहते हैं। यहाँ पर निःशुल्क जाँच एवं दवा देने की सुविधा उपलब्ध रहती है। इससे खरवार के साथ-साथ अन्य जन-जाति के लोग भी लाभान्वित हो रहे हैं। जनजातीय क्षेत्र में चिकित्सा के लिए अनु. जन-जाति के रोगी को चिकित्सा कराने के लिए आर्थिक-सहायता देने का भी प्रावध ान है और इससे खरवार भी लाभान्वित होते हैं। सर्वेक्षण के दौरान लातेहार अनुमंडल में 1996-97 में 12 खरवार जन-जाति के रोगियों को 6100/- रु. चिकित्सा-अनुदान के रूप में दिया गया, ऐसी जानकारी मिली।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के सहयोग से पूरे राज्य में कुष्ठ रोग उन्मूलन कार्यक्रम सघन एवं व्यापक रूप में चलाया जा रहा है और इसका उद्देश्य 2000 ई. तक इस रोग को पूर्णतः समाप्त कर देना है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत किये जा रहे सर्वेक्षण में अप्रैल 98 तक कोई भी खरवार सर्वेक्षित क्षेत्र में इस रोग से ग्रस्त नहीं पाया गया। इस जाँच में खरवार भी पूरी तरह सहयोग कर रहे हैं और इस अभियान के कारण आयी जागरूकता से वे अब इसे ईश्वर का अभिशाप न समझ कर पूरी तरह ठीक होने वाला रोग मानने लगे हैं।

स्वास्थ्य-सेवाओं को सुदूरवर्ती क्षेत्र तक पहुँचाने या उपलब्ध कराने में और खरवार समुदाय को लाभान्वित करने में निम्नांकित कठिनाईयों का पता चलाः-

1. सुदूरवर्ती पहाड़ी एवं जंगली क्षेत्रों में आवागमन की सुविधा एवं साधन का अभाव।
2. स्वास्थ्य केन्द्र/उप-केन्द्र के संचालन हेतु भवन का अभाव।
3. चिकित्सकों/स्वास्थ्य कर्मियों की कमी एवं उनकी अनुपस्थिति।

4 चिकित्सकों/स्वास्थ्य कर्मियों के लिए आवासीय भवनों की कमी।

5. आवश्यक दवाओं और चिकित्सा उपकरणों का अभाव।

6. लोगों में गरीबी के कारण महंगी दवाओं के प्रति उदासीनता।

फिर भी खरवार जन-जाति के लोग अपने स्वास्थ्य के प्रति काफी जागरूक हैं और उपलब्ध चिकित्सा-सेवाओं का पूरा-पूरा लाभ उठाते हैं। सर्वेक्षित 50 परिवारों में से 45 परिवार इन सुविधाओं का लाभ उठा रहे हैं। केवल 5 परिवार गरीबी एवं अज्ञानता के कारण इस सुविधा से प्राय: वंचित पाये गए।

(क) परिवार कल्याण कार्यक्रम :

खरवार जन-जाति में शिशुओं का जन्म ईश्वरीय वरदान के रूप में लिया जाता है। प्राय: अधिकांश खरवार परिवार में औसतन 3 से 4 बच्चे होते हैं। यहाँ तक कि गरीबी-रेखा से नीचे जीवन बिताने वाले भी इतनी सन्तान को अधिक नहीं मानते। के परिवार कल्याण या परिवार नियोजन के लिए गर्भ-निरोधक उपकरणों या दवाओं का उपयोग नहीं करते। साथ ही, परिवार नियोजन के लिए शल्य-क्रिया का भी सहारा नही लेते। गर्भ-निरोध के लिए वे कुछ प्राकृतिक नियमों का पालन करते हैं और जड़ी-बूटी का भी प्रयोग करते हैं। उनका यह मानना है कि जब तक बच्चा माँ का स्तन-पान करता रहेगा, तब तक गर्भधारण नहीं होगा।

अब शिक्षा के प्रसार से परिवार-कल्याण की सोच में परिवर्तन आया है और पढ़े-लिखे लोग परिवार को छोटा रखने के लिए गर्भ-निरोध के उपकरण का इस्तेमाल करने लगे हैं। अब वे एक बच्चे के बाद दूसरे बच्चे के जन्म की कालावधि कम से कम दो से तीन वर्ष रखते हैं। प्रसव-पूर्व, प्रसव के समय और प्रसवोत्तर के अवसर पर वे जच्चा-बच्चा पर विशेष ध्यान देते हैं। इस कारण उनमें शिशु-मृत्यु दर अपेक्षाकृत काफी कम है।

(च) प्रतिरक्षीकरण कार्यक्रम :

यह ज्ञातव्य है कि हमारे देश एवं बिहार राज्य में छ: जानलेवा बीमारियाँ हैं. जिनसे बचाव के लिए प्रतिरक्षीकरण का राष्ट्रीय कार्यक्रम चलाया जा रहा है। इनमें टेटनस, गलघोंटू, काली खांसी, तपेदिक, पोलियो और खसरा बीमारियाँ हैं, जो शिशुओं के लिए जानलेवा होती हैं या उन्हें विकलांग बना देती हैं। टेटनस गर्भवती महिलाओं के लिए भी घातक होता है। इन्हीं छ: प्राणघातक रोगों से छुटकारा पाने के लिए भारत सरकार द्वारा 1985 में राष्ट्रीय टीकाकरण कार्यक्रम प्रारम्भ किया

गया। इसका लक्ष्य था - 1990 तक सभी गर्भवती महिलाओं और जन्म लेने वाले 85 प्रतिशत शिशुओं का सम्पूर्ण टीकाकरण करना। इसका उद्देश्य 2000 ई. तक देश को पोलियो की बीमारी से मुक्त करा कर शिशुओं को विकलांग होने से बचाना है। इस अभियान में युनिसेफ और विश्व स्वास्थ्य संगठन का भी सहयोग भारत सरकार को प्राप्त है।

टीकाकरण की दवाएँ सभी अस्पतालों/प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्रों में नि:शुल्क उपलब्ध रहती हैं और चिकित्सा पदाधिकारी एवं उनके संबंधित स्वास्थ्य-कर्मियों द्वारा विभिन्न केन्द्रों में दी जाती हैं। यह कार्यक्रम आंगनबाड़ी केन्द्रों तथा विभिन्न स्वयं-सेवी संगठनों द्वारा भी किया जा रहा है।

इसके अलावा स्वास्थ्य विभाग द्वारा वर्ष 1994 से "पल्स पोलियो कार्यक्रम' का अभियान चलाया जा रहा है, जिसका उद्देश्य शिशुओं को पोलियो की दवा अतिरिक्त खुराक के रूप में देकर पोलियो होने की संभावना को जड़ से समाप्त कर देना है। यह कार्यक्रम काफी वृहत स्तर पर पूरे देश में वर्ष में दो बार चलाया जा रहा है और काफी लोकप्रिय सिद्ध हुआ है। इससे लगभग 90 प्रतिशत बच्चे (खरवार के) लाभान्वित हुए हैं। खरवार जन-जाति के लोग भी टीकाकरण कार्यक्रम के प्रति काफी जागरूक हुए हैं और निकटवर्ती टीकाकरण केन्द्र में जाकर वे अपने शिशुओं और गर्भवती महिलाओं को विभिन्न प्रकार के टीके दिलवाते हैं। सर्वेक्षण में विभिन्न प्रभारी चिकित्सा पदाधिकारी एवं बाल विकास परियोजना के परियोजना पदाधिकारी से प्राप्त सूचना के आधार पर टीकाकरण से आच्छादित खरवार जन-जाति की महिलाओं (गर्भवती) एवं शिशुओं का प्रतिशत निम्न प्रकार पाया गया :-

1. टेटनस का टीका (गर्भवती के लिए) - 60 प्रतिशत।
2. बी. सी. जी. का टीका (शिशु के लिए) - 60 प्रतिशत।
3. डी. पी. टी. का टीका (तदैव) - 60 प्रतिशत।
4. खसरा का टीका (तदैव) - 60 प्रतिशत।
5. पोलियो की दवा (पल्स पोलियो सहित) - 90 प्रतिशत।

सर्वेक्षित 50 परिवारों में केवल एक व्यक्ति पोलियों से विकलांग चापाटोली, बिशुनपुर प्रखंड में मिला। पहले खरवार परिवारों में पुराने हंसिया से नवजात शिशु का नाल काटने के कारण टेटनस से मौत काफी होती थी। परन्तु अब वे नये ब्लेड या चाकू से या अन्य किसी तेज धार वाले साफ और मुर्चा रहित उपकरण से नाल

काटने का कार्य सम्पन्न करते हैं। टीकाकरण कार्यक्रम के विस्तार के कारण ही खरवार जन-जाति समुदाय में शिशु मृत्यु-दर एवं विकलांगता में काफी कमी आई है।

(छ) महिलाओं और शिशुओं के लिए विशेष कार्यक्रम :

प्रधानमंत्री के 20 सूत्री कार्यक्रम का शुभारम्भ 1975 से हुआ और 14 जनवरी, 1982 में 15वें सूत्र में महिलाओं और शिशुओं के कल्याण कार्यक्रमों पर विशेष महत्त्व दिया गया है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत यह प्रावधान किया गया है:-

'महिलाओं और बच्चों के कल्याण कार्यक्रमों तथा गर्भवती महिलाओं, माताओं, बच्चों, खासकर आदिवासी और पिछड़े इलाके में रहने वालों के लिए पौष्टिक आहार कार्यक्रम तेजी से लागू किया जायेगा।' इस कार्यक्रम के अन्तर्गत पूर्व में खिचड़ी केन्द्र, व्यावहारिक पोषाहार केन्द्र आदि चलाये गए।

महिलाओं और शिशुओं के सम्पूर्ण एवं समेकित विकास के लिए भारत सरकार द्वारा "समेकित बाल विकास परियोजना' का शुभारम्भ जनजातीय क्षेत्र, गंदी बस्तियों और ग्रामीण-क्षेत्रों में किया गया। इस परियोजना का उद्देश्य 15 वर्ष से 45 वर्ष तक की महिलाओं, गर्भवती तथा दूध पिलाने वाली माताओं और 0-6 वर्ष तक के शिशुओं को पूरक पोषाहार, प्रतिरक्षीकरण, स्वास्थ्य जाँच, स्वास्थ्य-शिक्षा, सन्दर्भ सेवा तथा विद्यालय पूर्व शिक्षा के कार्यक्रमों को समेकित रूप से चला कर लाभ पहुँचाना है। इन सेवाओं को प्रदान करने के लिए परियोजना स्तर पर बाल विकास परियोजना पदाधिकारी, क्षेत्रीय स्तर पर महिला पर्यवेक्षिका एवं ग्राम-स्तर पर सेवा प्रदान करने के लिए स्थापित आंगनबाड़ी केन्द्र में सेविका एवं सहायिका को रखा गया है। साथ ही, सभी आंगनबाड़ी केन्द्रों में स्वास्थ्य एवं चिकित्सा-सेवा उपलब्ध कराने हेतु प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्र/स्वास्थ्य उप-केन्द्र के प्रभारी चिकित्सा पदाधिकारी एवं अन्य स्वास्थ्य कर्मियों (एल.एच.वी., ए.एन.एम. आदि) को जिम्मेवार बनाया गया है। समेकित बाल विकास सेवा परियोजना जनजातीय क्षेत्र के प्रायः सभी प्रखंडों में खोला जा चुका है। कुछ चुने हुए परियोजनाओं के कार्य-कलापों का सर्वेक्षण किया गया तथा उनसे महिलाओं और शिशुओं को होने वाले लाभ तथा प्रभाव की जानकारी प्राप्त की गई:-

(1) समेकित बाल विकास सेवा परियोजना, लातेहार (पलामू):-

इस परियोजना की स्थापना 1989-90 वर्ष में हुई। इस परियोजना में 109

आंगनबाड़ी केन्द्र स्वीकृत हैं, जिनमें सर्वेक्षण के समय 99 केन्द्र संचालित बताये गए। प्रत्येक केन्द्र से 0-6 वर्ष के 42 शिशु, 5 गर्भवती तथा 5 दूध पिलाने वाली माताओं को लाभान्वित किया जा रहा है। इस परियोजना में संचालित विभिन्न कार्यक्रमों की स्थिति निम्न प्रकार बताई गई -

प्रतिरक्षीकरण कार्य -

गर्भवती महिला	टेटनस का टीका (सूई)	100 प्रतिशत
शिशु (0-5 वर्ष)	डी. पी. टी.	60 प्रतिशत
तदैव	खसरा	60 प्रतिशत
तदैव	बी. सी. जी.	60 प्रतिशत
तदैव	पोलिया	100 प्रतिशत

पूरक पोषाहार -

केयर द्वारा प्रदत्त सी.एस.बी. पौष्टिक चूर्ण को गुड़ आदि मिलाकर हलुआ या लड्डू दिया जाता है। यह काफी पौष्टिक होता है। इससे प्रति केन्द्र गरीबी-रेखा से नीचे के परिवारों के, जिसमें खरवार भी हैं, 42 शिशुओं और 10 महिलाओं को प्रति दिन पोषाहार दिया जाता है।

विद्यालय पूर्व शिक्षा -

3 से 6 वर्ष आयु के 20 से 25 बच्चे विद्यालय पूर्व शिक्षा पाने प्रत्येक केन्द्र में आते हैं।

अन्य कार्यक्रम भी समय-समय पर चलाये जाते हैं। विशेष रूप से डायरिया के रोक-थाम के लिए 'ओ.आर.टी' (ओरल रिहाइड्रेशन थेरापी) का प्रशिक्षण आंगनबाड़ी सेविकाओं और अन्य ग्रामीण महिलाओं को समय-समय पर दिया जाता है। इससे डायरिया से होने वाली मृत्यु में काफी कमी आई है। साथ ही, आंगनबाड़ी केन्द्रों में एक चिकित्सा पेटी भी दी जाती है, जिसके माध्यम से सेविका प्राथमिक चिकित्सा लोगों को उपलब्ध कराती है। इस परियोजना से लगभग 40 प्रतिशत खरवार लाभान्वित हो रहे हैं।

(2) समेकित बाल विकास सेवा परियोजना, विशुनपुर, गुमला :-

इस परियोजना की जरूरत 1982-83 वर्ष में हुई। इस परियोजना में 55

आंगनबाड़ी केन्द्र स्वीकृत हैं, जबकि सर्वेक्षण के समय 48 चालू बताये गये। इस परियोजना के कार्यों की प्रगति निम्न प्रकार बताई गई :

प्रतिरक्षीकरण कार्य :-

गर्भवती महिला	टेटनस का टीका (सूई)	50 प्रतिशत लाभान्वित
शिशु (0-5 वर्ष)	डी. पी. टी.	60 प्रतिशत लाभान्वित
तदैव	खसरा	60 प्रतिशत लाभान्वित
तदैव	बी. सी. जी.	60 प्रतिशत लाभान्वित
तदैव	पोलिया	90 प्रतिशत लाभान्वित

पूरक पोषाहार -

केयर द्वारा प्रदत्त सी.एस.बी. पोषाहार चूर्ण में गुड़ आदि मिलाकर हलुआ या लड्डू लाभान्वितों को वितरित किया जा रहा है। इससे 10 गर्भवती एवं दूध पिलाने वाली महिलाएँ तथा 6 माह से 6 वर्ष तक के 42 शिशु प्रत्येक केन्द्र से लाभान्वित हो रहे हैं। इन केन्द्रों में 14 बच्चे ग्रेड-3 के कुपोषित बताये गए।

विद्यालय पूर्व शिक्षा -

प्रत्येक संचालित केन्द्र में 3-6 वर्ष के बच्चे/बच्चियाँ खेल-खेल में शिक्षा पाने के लिए जाते हैं, जिनकी औसत उपस्थिति प्रत्येक केन्द्र में 20 से 25 रहती है। इन केन्द्रों से 30 प्रतिशत के लगभग खरवार भी लाभान्वित हो रहे हैं। डायरिया की रोक थाम के लिए ओ.आर.टी. पाउडर का वितरण भी किया जाता है और चीनी-नमक का घोल बनाकर ओ.आर.टी. के संबंध में सभी को जानकारी भी दी गई है। इस क्षेत्र में भी डायरिया से मृत्यु की घटना बहुत कम हो गई है।

(3) समेकित बाल विकास सेवा परियोजना, कहलगाँव (भागलपुर):-

इस परियोजना की स्थापना 1983 में हुई। इस परियोजना में 172 आंगनबाड़ी केन्द्र स्वीकृत हैं। यह ग्रामीण परियोजना है। सर्वेक्षण के समय 145 आंगनबाड़ी केन्द्र चालू हालत में बताये गए। प्रत्येक केन्द्र में 0-6 वर्ष के 88 शिशु और 12 गर्भवती तथा दूध पिलाने वाली महिलाएँ लाभान्वित होती हैं। लगभग 25 प्रतिशत खरवार जन-जाति के परिवार लाभान्वित हो रहे हैं, ऐसी सूचना दी गई। इस परियोजना के प्रमुख कार्यक्रमों की प्रगति निम्न प्रकार बतायी गई -

प्रतिरक्षीकरण कार्य -

गर्भवती महिला	टेटनस का टीका (सूई)	100 प्रतिशत लाभान्वित
शिशु (0-5 वर्ष)	डी. पी. टी.	80 प्रतिशत लाभान्वित
तदैव	खसरा	80 प्रतिशत लाभान्वित
तदैव	बी. सी. जी.	80 प्रतिशत लाभान्वित
तदैव	पोलिया	100 प्रतिशत लाभान्वित

पूरक पोषाहार -

मार्डन फूड (भारत सरकार) द्वारा प्रदत्त पोषाहार पाउडर द्वारा हलुआ या लड्डू बनाकर आंगनबाड़ी केन्द्र द्वारा बांटा जाता है। इस परियोजना में कुपोषित बच्चे (खरवार के) नहीं हैं, ऐसी सूचना दी गई।

विद्यालय पूर्व शिक्षा

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रत्येक आंगनबाड़ी केन्द्र में 25 से 30 बच्चे, 3 से 6 आयु वर्ग के, शिक्षा प्राप्त करने आते हैं।

इस परियोजना में स्वास्थ्य सेवाओं के अन्तर्गत डायरिया प्रबन्धन, सुरक्षित प्रसव, स्वच्छता आदि से संबंधित प्रशिक्षण भी ग्रामीण महिलाओं को समय-समय पर दिया जाता है। सभी आंगनबाड़ी केन्द्रों में प्राथमिक चिकित्सा हेतु दवा की पेटी दी गई है। गर्भवती महिलाओं को आयरन के रूप में फोलिक एसिड गोली भी दी जाती है।

इन सभी परियोजनाओं में अक्सर पोषाहार खाद्यान्न की कमी हो जाती है, जिसके कारण इस महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम के संचालन में बाधा होती है।

(ज) राष्ट्रीय बाल सुरक्षा एवं सुरक्षित मातृत्व कार्यक्रम :-

स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा चिकित्सा पदाधिकारियों/स्वास्थ्य कर्मियों के लिए एक निर्देशिका 1995 ई. में तैयार कर प्रसारित की गई है। इसमें उल्लेखित अनुदेशों/निर्देशों के अनुसार शिशुओं की सुरक्षा एवं सुरक्षित मातृत्व के संबंध में विस्तृत दिशा-निर्देश दिये गये हैं। इस निर्देशिका के आलोक में सघन रूप से प्रशिक्षण एवं उन्मुखीकरण कार्यक्रम चलाये गये। इस कार्य के मुख्य लक्ष्य निम्न प्रकार हैं -

1. सन् 1995 तक शिशु मृत्यु-दर को 80 से 75 प्रति हजार करना। यह लक्ष्य कुछ हद तक प्राप्त किया गया है।

2. सन् 2000 तक बाल मृत्यु-दर को प्रति हजार 50 तक घटाना है। साथ ही, 1 से 4 वर्ष की शिशु-मृत्यु 41.2 प्रति हजार से घटाकर 10 करना है।

3. 2000 ई. तक मातृ-दर 400 से 200 तक (प्रति एक लाख में) घटाना है।

4. सन् 2000 हजार तक पोलियो का उन्मूलन करना।

5. सन् 1995 तक नवजात टेटनस की समाप्ति - इस लक्ष्य को प्राप्त करना अभी बाकी है।

इन कार्यक्रमों के संचालन से खरवार जन-जाति के लोग भी लाभान्वित हो रहे हैं और इसका लाभ उन्हें उनके क्षेत्र में अवस्थित अस्पतालों/स्वास्थ्य-केन्द्रों के माध्यम से मिल रहा है। परिवार कल्याण के सन्दर्भ में यह एक महत्त्वपूर्ण एवं प्रभावी कार्यक्रम सिद्ध हो रहा है।

(झ) महिला एवं शिशु विकास का कार्यक्रम - ''ड्वाकरा'' :-

इस योजना का पूरा नाम - ''ग्रामीण महिलाओं और शिशुओं का विकास'' है। भारत सरकार के कृषि मंत्रालय के अन्तर्गत ग्रामीण विकास विभाग द्वारा 1988 में प्रारम्भ किया गया था। इसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक-स्थिति का सुदृढीकरण तथा उनके बच्चों का समुचित विकास करना है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामीण महिलाओं का 15 से 20 का एक ग्रुप बनाकर उन्हें कोई-कोई उद्योग धंधा या व्यापार करने के लिए ऋण-सह-अनुदान योजना के अन्तर्गत पूंजी उपलब्ध कराना है, ताकि वे अपने पैरों पर खड़ी हो सकें और अपने परिवार को आर्थिक सहायता पहुँचा सकें। साथ ही, विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों की जानकारी देकर उन्हें अधिक जागरूक किया जाना है। इस कार्य में उन्हें ग्रामसेविका से मार्गदर्शन मिलता है। इसमें आर्थिक सहायता के रूप में 15000/- की पूंजी मिलती हैं, जिससे कि वे कच्चा माल, मशीन, बच्चों की देखभाल के सामान, अन्य आवश्यक उपकरण आदि खरीद कर अपना उद्योग या व्यापार कर सकें। इस मूल पूंजी को 'रिवाल्विंग कैपिटल' के रूप में रखा जाता है और आय की राशि को महिला सदस्यों में वितरित किया जाता है। इसके अर्न्तगत दालें, पापड़, अचार, शरबत, सिले हुए वस्त्र आदि तैयार कर बेचा जाता है। कार्य-स्थल के पास ही उनके बच्चों के लिए बालवाड़ी चलायी जाती है। इसे चलाने का प्रयास विशनपुर में विकास भारती द्वारा किया गया था। परन्तु बाद में यह कार्य बन्द हो गया। सर्वेक्षण के समय किसी भी खरवार क्षेत्र

में इसे संचालित नहीं पाया गया। इस कार्यक्रम के संचालन से खरवार जन-जाति की महिलाओं को काफी लाभ हो सकता है।

(ट) पेयजल की सुविधा :

सरकार द्वारा पेयजल की सुविधा उपलब्ध कराने हेतु विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत पेयजल कूप और चापाकल का प्रावधान किया जाता रहा है। सरकार की यह योजना है कि सन् 2000 तक कोई भी गाँव पेयजल की सुविधा से वंचित नहीं रहेगा। यह कार्यक्रम एक अभियान के रूप में चलाया जाता रहा है। फिर भी अभी बहुत से ऐसे गाँव और टोले हैं, जहाँ शुद्ध पेयजल की सुविधा अभी भी उपलब्ध नहीं है। पहाड़ी क्षेत्रों में अनेक ऐसे खरवार गाँव हैं, जहाँ एक कि.मी. दूर से पानी लाना पड़ता है।

कैमूर और रोहतास के पहाड़ी क्षेत्रों में पेयजल की दिक्कत होती है। विशेषकर गर्मी के मौसम में बहुत से कुएँ सूख जाते हैं। सर्वेक्षण के समय अधौरा प्रखंड (कैमूर) के तीन गाँवों (चैनपुरा, दीधार, अधौरा) में पेयजल के संसाधन निम्न प्रकार पाये गए:

1. पेयजल कूप - 39 (18 कुओं में ही पूरे वर्ष पानी रहता है)
2. चापाकल - 37 (केवल 15 चालू पाये गए)
3. चुआं/डांडी - 4
4. झरना - 1

उस क्षेत्र में पशुओं के लिए आहार या पोखर का पानी काम में लाते हैं।

पलामू जिला दक्षिणी भाग, जहाँ खरवार की घनी आबादी है, पहाड़ी एवं जंगली है। इस क्षेत्र में रंका, लातेहार, गारू, बरवाडीह, मनिका, चन्दवा आदि प्रखंडों में खरवार बसते हैं। इस क्षेत्र में वर्षा भी तुलनात्मक दृष्टि से कम होती है और जमीन के भीतर का जल-स्तर भी काफी नीचे है। इस क्षेत्र में गर्मी के दिनों में अधि कांश कुएं सूख जाते हैं। इस क्षेत्र में कई ऐसे गाँव और टोले हैं, जहाँ शुद्ध पेयजल आसानी से उपलब्ध नहीं होता है। लातेहार के तीन गाँवों (पीरी, बेरी और मुक्का) के सर्वेक्षण में पीने के पानी के निम्नांकित स्रोतों का पता चला :-

1. पेयजल कूप - 20 (10 कूप में बराबर पानी रहता है)
2. चापाकल - 7 (4 चालू हालत में हैं)

3. चुआँ/डांडी – 4

4. झरना – 3

गुमला, लोहरदगा आदि जिलों के पहाड़ी क्षेत्रों में भी खरवार बसते हैं, जहाँ पेयजल का अभाव गर्मी के दिनों में हो जाता है। इन क्षेत्रों में झरने का पानी काफी मात्रा में उपलब्ध है, जिससे वे पीने का पानी प्राप्त करते हैं। बिशुनपुर प्रखंड (गुमला) के तीन गाँवों (कसमार, घाघरा, चापा टोली, हाडुप) के सर्वेक्षण में पेयजल के स्रोत निम्न प्रकार पाये गए :-

1. पेयजल कूप – 28 (16 अच्छी हालत में)

2. चापाकल – 11 (8 खराब है)

3. चुआं/डांडी – 3

4. झरना – 5

इस क्षेत्र में एक बरसाती नदी, दो तालाब तथा दो आहर भी हैं, जिनमें गर्मी के दिनों में पानी नहीं रहता है। गंगा नदी के दियारा क्षेत्र एवं उसके किनारे बसे भागलपुर, साहेबगंज आदि क्षेत्रों में भूगर्भीय जल काफी ऊपर मिलता है। इस कारण इन क्षेत्रों में पेयजल का अभाव बाढ के दिनों को छोड़कर साल भर पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध रहता है। बाढ़ आ जाने पर कुआँ आदि के डूब जाने और उनमें पानी (बाढ़ का) भर जाने पर शुद्ध पेयजल की समस्या हो जाती है। परन्तु यह समस्या जुलाई और अगस्त के मध्य ही होता है। इस क्षेत्र के तीन गाँवों (बरोहिया - कहलगांव प्रखंड, बनियाँ - गोपालपुर प्रखंड तथा बड़ी कोदरजना - साहेबगंज प्रखंड) के सर्वेक्षण में पेय जल के स्रोत निम्न प्रकार पाये गए :-

	बरोहिया	**बनियाँ**	**बड़ी कोदरजना**
1. पेय जल कूप -	6	5	7
2. चापाकल -	10	8	12
3. बांस बोरिंग -	6	6	4
4. चुआँ/डांड़ी -	शून्य	शून्य	शून्य

गंगा के निकट बसे लोग गंगा नदी से भी पीने तथा स्नान आदि के लिए जल प्राप्त करते हैं। कटिहार, पूर्णियाँ आदि क्षेत्रों में भी पेयजल की कोई समस्या नहीं।

है। उन क्षेत्रों में गंगा के अतिरिक्त कोशी, महानन्दा आदि नदियों में बाढ़ आने पर शुद्ध पेय जल की समस्या हो जाती है।

(ठ) आवागमन की सुविधा :

खरवार जन-जाति के लोग जिन क्षेत्रों में जा बसे हैं, वे पूर्व में काफी दुर्गम क्षेत्र माने जाते थे। वे सर्वप्रथम बिहार में कैमूर पहाड़ पर एक ओर बस गए, जहाँ आज भी आवागमन के साधन बहुत कम हैं। पहाड़ पर जाने के लिए पहाड़ी सड़क मार्ग है, जिससे अधौरा जाया जा सकता है। इस क्षेत्र में बस-सेवा भी बहुत कम है। पहाड़ से नीचे तथा अन्य भागों में अधिकतर लोग पैदल या अपनी सवारी से चलते हैं। इस पहाड़ पर अनेक दुर्गम घाटियाँ हैं और गुफाएँ हैं, जिनके कारण पहुँच-पथों की काफी कमी है। खड़ी चढ़ाई के कारण सभी स्थानों पर सड़कें भी नहीं बनाई जा सकती हैं। खरवारों की जो बस्ती या गाँव नीचे के समतल भाग में अवस्थित हैं, वे रेल एवं बस-मार्ग से जुड़े हुए हैं। परन्तु डिहरी, सासाराम आदि के निकटवर्ती प्रखंडों/गाँवों में उनकी आबादी बहुत कम है और आबादी पहाड़ पर ही है। यह क्षेत्र ईस्टर्न रेलवे के ग्रैंड कार्ड लाइन तथा सड़क मार्ग में ग्रैंड ट्रंक रोड से जुड़ा हुआ है।

पलामू में खरवार जिन क्षेत्रों में बसे हैं, अधिकांश भाग पहाड़ी और जंगलों से आच्छादित है। इन क्षेत्रों में आवागमन के लिए सड़क-मार्ग का काफी अभाव है और उनके गाँवों तक जाने के लिए पहुँच पथों और सवारी गाड़ियों की काफी कमी है। उनके क्षेत्र से रेलवे लाइन गुजरी है, जो चन्दवा, लातेहार और बरवाडीह से होकर गुजरती है। इससे आवागमन की कुछ सुविधा उस क्षेत्र के लोगों को है। राँची से चन्दवा होते हुए डाल्टेनगंज जाने वाली सड़क, गढ़वा से रंका की ओर जाने वाली सड़क डाल्टेनगंज से महुआडांड़ जाने वाली सड़क आदि से उन्हें कुछ दूर तक सड़क-मार्ग द्वारा बस से सफर करने की सुविधा मिल जाती है। परन्तु सड़क से सुदूर क्षेत्रों में बसे उनके गाँवों तक जाने का कोई साधन नहीं है। अब जवाहर रोजगार योजना के अन्तर्गत कुछ सड़कें पहुँच-पथ के रूप में बनाई जा रही हैं, जो खरवार गाँवों तक जाने की सुविधा प्रदान करेंगी। इस तरह की कुछ सड़कों का विवरण पूर्व के अध्याय में दिया गया है। गुमला, लोहरदगा आदि क्षेत्रों में भी आवागमन की काफी असुविधा है, जहाँ खरवार पठारी क्षेत्रों में रहते हैं। उस क्षेत्र में मुख्य रूप से सड़क-मार्ग के रूप में राँची-लोहरदगा-नेतरहाट सड़क है, जिस पर कुछ बसें और छोटी गाड़ियाँ चलती हैं। इस क्षेत्र में नेतरहाट से महुआडांड-गारू-डाल्टेनगंज रोड भी है, जिस पर कई बसें चलती हैं। परन्तु दूरवर्ती क्षेत्रों में रहने वाले खरवारों को अपने घर तक पैदल या अपनी सवारी से ही जाना पड़ता है।

भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार, पूर्णियाँ आदि क्षेत्रों में आवागमन के लिए रेलमार्ग, सड़क-मार्ग और जल-मार्ग अथवा नदी-मार्ग उपलब्ध हैं। परन्तु जिन दियारा या अन्य दूरवर्ती क्षेत्रों में खरवार बसे हैं, वहाँ तक आवागमन की सुविधा कुछ कम है वैसे भी दियारा क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति एवं बनावट ऐसी होती है, कि वहाँ कोई स्थाई सड़क-मार्ग बनाना कठिन होता है। गंगा के किनारे बसे लोग एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में नाव या स्टीमर से जाते हैं। वर्षा-ऋतु में यह क्षेत्र जल प्लावन में डूब जाता है और सड़क-मार्ग प्रायः बन्द हो जाता है। 1998 की बाढ़ में अधिकांश खरवार का दियारा क्षेत्र बाढ़ के पानी से जल-मग्न रहा, जिसकी सूचना विभिन्न संचार-माध्यमों से मिलती रही है। इस बार गंगा, कोसी, महानन्दा और उनकी सहायक नदियों की बाढ़ से अधिकांश क्षेत्र बाढ़ की भीषण चपेट में आ गये।

अन्य क्षेत्रों - हजारीबाग, गिरिडीह, धनबाद आदि में अपेक्षाकृत आवागमन की सुविधा अधिक है। इन क्षेत्रों में रेल और सड़क-मार्ग पर्याप्त हैं।

(ड) विद्युत :-

विद्युत या बिजली ऊर्जा का सबसे महत्त्वपूर्ण स्रोत है। इस कारण इसकी मांग हर क्षेत्र में - घरेलू, औद्योगिक क्षेत्र, खान आदि - अत्यधिक है। कृषि-क्षेत्र में सिंचाई के लिए इसकी उपयोगिता काफी है। राज्य में बिजली की खपत की मात्रा और उत्पादन विकास-दर का सूचक होता है। इस प्रकार आर्थिक-प्रगति और औद्योगिक विकास के लिए बिजली आज की जरूरत है। पिछले एक दशक में बिहार में विद्युत-परियोजनाओं पर लगभग 1200 करोड़ रुपये खर्च किये गये।[1]

बिहार में शक्ति या ऊर्जा के प्रमुख स्रोत हैं - कोयला, जल-विद्युत, सौर-ऊर्जा, बायो-गैस एवं पवन-ऊर्जा। भारत सरकार द्वारा विद्युत उत्पादन के लिए पंच वर्षीय योजनाओं में अन्य राज्यों के लिए जो वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराये जाते रहे हैं, ये आबादी की तुलना में काफी कम हैं। बिहार में देश की कुल जनसंख्या का 10.21 प्रतिशत लोग बसते हैं, जबकि विद्युत प्रक्षेत्र में मात्र 3.9 प्रतिशत ही पूंजी का निवेश किया गया है।[2]

विभिन्न पंच वर्षीय योजनाओं में विद्युत-उत्पादन के लिए बड़ी-बड़ी परियोजनाएं बनाई गई, जिसके अन्तर्गत दामोदर घाटी निगम के अन्तर्गत तिलैया, मैथन, पंचेत और कोनार में डैम बनाकर बिजली उत्पादन का कार्य प्रारम्भ किया गया। चन्द्रपुरा,

---

1 बिहार दिग्दर्शन, प्रो. शिव शंकर सिंह, स्टार पब्लिकेशन, पटना 1997

2 बिहार दिग्दर्शन, प्रो. शिव शंकर सिंह, स्टार पब्लिकेशन, पटना 1997

बोकारो, पतरातू थर्मल पावर स्टेशन की स्थापना हुई। ये सभी विद्युत उत्पादन-केन्द्र बिहार मे यथेष्ट बिजली उत्पादन एवं आपूर्ति के लिए स्थापित किये गए थे। सातवीं पंच वर्षीय योजना में तेनुघाट विद्युत-परियोजना भी बनकर तैयार हो गई। भागलपुर के कहलगाँव में बिहार का सबसे बड़ा विद्युत उत्पादन-केन्द्र स्थापित किया गया। प्रायः ये सभी विद्युत उत्पादन-केन्द्र बिहार के दक्षिणी भाग में ही स्थापित हैं।

पाँचवीं पंच वर्षीय योजना से ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम पर जोर दिया जाने लगा और छठी योजना में यह संकल्प लिया गया था कि अधिकांश गाँवों को विद्युत से जोड़ दिया जायेगा। परन्तु ग्रामीण विद्युतीकरण के क्षेत्र में जो विकास अपेक्षित था, वह पूरा नहीं हो सका। अभी तक जनजातीय क्षेत्र में, और विशेषकर जिन क्षेत्रों में खरवार बसे हुए हैं, विद्युतीकरण का कार्य काफी पिछड़ा हुआ है। रोहतास और कैमूर के पहाड़ी क्षेत्रों में 25 से 30 प्रतिशत के लगभग लोगों को बिजली अनियमित रूप से मिल पाती है। पलामू के अधिकांश खरवार क्षेत्र विद्युत की सुविधा से वंचित हैं। गुमला-लोहरदगा की भी वही स्थिति है। इन क्षेत्रों में खरवार बहुल ग्रामों में विद्युतीकरण का काम अभी भी लम्बित है। इन क्षेत्रों के प्रखंड मुख्यालयों में भी कभी-कभी लगातार कई दिनों तक बिजली की आपूर्ति बाधित रहती है।

भागलपुर क्षेत्र में एन.टी.पी.सी. के सहयोग से कहलगाँव में विद्युत ताप-गृह का निर्माण हुआ है। इसके निर्माण से इस क्षेत्र के लोगों को आशा थी कि उस क्षेत्र में इसके पूरा हो जाने के बाद बिजली का संकट दूर हो जायेगा। परन्तु इस विद्युत-केन्द्र के बन जाने के बाद भी खरवार बहुल क्षेत्र - पीरपैंती, कहलगाँव आदि में अभी भी पूरे क्षेत्र में बिजली की लाइन नहीं जा सकी है और यह क्षेत्र भी बिजली के संकट से जूझता रहता है। साहेबगंज के कुछ क्षेत्रों में विद्युतीकरण हुआ है। परन्तु अन्य ग्रामीण क्षेत्रों में विद्युतीकरण का अभाव है। इसके फलस्वरूप इन क्षेत्रों में सिंचाई और उद्योग के क्षेत्र में यथेष्ट प्रगति नहीं हो पाई है।

इन क्षेत्रों में ऊर्जा के अन्य स्रोतों -पवन-उर्जा, सौर-उर्जा, बायोगैस की काफी संभावना है। परन्तु इनके विकास के संबंध में अभी कोई खास कार्रवाई नहीं की गई। कहीं-कहीं सौर-ऊर्जा और बायोगैस के खराब पडे संयंत्र देखने को मिले. जो उचित रख-रखाव के कारण अनुपयोगी हो गए हैं। विद्युत के अभाव में खरवारों के अधिकांश क्षेत्र लालटेन युग में जी रहे हैं।

(ढ) सिंचाई के संसाधन :

सिंचाई के लिए जल-संसाधन के लिए जल के दो मुख्य स्रोत हैं- 1. भूगर्भीय जल 2. धरातलीय जल। बिहार में इन दोनों प्रकार के जल-संसाधनों से सिंचाई का काम लिया जाता है। उपलब्ध जल संसाधन का उपयोग निम्नांकित माध्यमों से किया जाता है, जो खरवार के आवास-क्षेत्र में प्रचलित हैं -

1. सिंचाई कूप -

बड़े व्यास के सिंचाई कूप प्राय: सभी क्षेत्रों में अनुदान के माध्यम से खरवार लाभान्वितों द्वारा बनवाये गए हैं। "जलधारा' कार्यक्रम के अन्तर्गत सघन रूप से ऐसे कूपों का निर्माण किया गया है। इन कूपों से लाठ या अन्य संसाधनों से तथा डीजल पम्प की सहायता से पानी निकाल कर सिंचाई की जाती है। इस तरह के कुएँ पहाड़ी क्षेत्रों में उतने सफल नहीं हुए हैं। परन्तु मैदानी भागों में ये लघु सिंचाई के लिए काफी उपयोगी हैं।

(2) नलकूप या डीप बोरिंग वेल -

जहाँ भूगर्भीय जल पर्याप्त है और ज्यादा नीचे नहीं है, वहाँ तो बांस बोरिंग या हाथ बोरिंग से काम चल जाता है और गंगा के दियारा क्षेत्र में काफी लोकप्रिय और कम खर्चीला है। परन्तु पहाड़ी क्षेत्रों में या जहाँ पानी का भूगर्भीय स्तर काफी नीचे है. वहाँ डीप बोरिंग करने की आवश्यकता पड़ती है। पहाडी क्षेत्रों या अन्य समतल भागों में इस तरह की बोरिंग की जाती है। यह काफी खर्चीला होता है। इसके चलते खरवार के क्षेत्र में यह बहुत लोकप्रिय नहीं है।

(3) तलाब / आहर -

कहीं-कहीं तालाब या आहर से भी सिंचाई करते हैं। पलामू, रोहतास, कैमूर, गुमला आदि क्षेत्रों में इनसे भी सिंचाई का काम लिया जाता है। परन्तु इनकी संख्या बहुत कम है। पहाड़ी क्षेत्रों में इनका निर्माण भी उतना सरल नहीं है।

(4) झरना -

पलामू, गुमला, लोहरदगा आदि पहाड़ी क्षेत्रों में झरनों की संख्या काफी है, जिनके जल को रोक कर खरवार सिंचाई का काम लेते हैं। इन झरनों में पूरे वर्ष जल प्रवाहित होता रहता है।

(5) नहर -

रोहतास और कैमूर क्षेत्र में बसने वाले खरवार कुछ भागों में सोन नहर से सिंचाई का लाभ उठा पाते हैं। परन्तु अधिकांश खरवार पहाड़ पर रहते हैं, इस कारण उन्हें सोन नहर का पानी नहीं मिल पाता। अन्य पहाड़ी क्षेत्रों में नहर से सिंचाई की सुविधा प्राप्त नहीं है।

(6) पइन -

गंगा, कोसी, महानन्दा आदि नदियों के किनारे बसे गाँवों में इन नदियों से पइन निकाल कर गर्मी के दिनों में सिंचाई का काम लिया जाता है। पहाड़ी क्षेत्रों में पइन से सिंचाई नहीं हो पाती है। गंगा, कोसी, महानन्दा आदि नदियों के किनारे या दियारा क्षेत्र में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है। परन्तु पहाड़ी क्षेत्रों में सुनिश्चित सिंचाई की सुविधा उपलब्ध नहीं है। उन क्षेत्रों की खेती पूरी तरह वर्षा पर ही निर्भर करती है।

सर्वेक्षित क्षेत्र के कुछ प्रखंडों में सिंचाई से संबंधित क्षेत्रों के आंकड़े निम्न प्रकार मिले हैं, जिनसे सिंचाई एवं सिंचित भूमि की जानकारी मिलती है -

क्र.सं.	प्रखंड का नाम	कृषि योग्य भूमि	सुनिश्चित सिंचाई क्षेत्र
1.	अधौरा	18745.17 एकड़	646.26 एकड़
2.	लातेहार	20634.94 हेक्टर	2104.00 एकड़
3.	कहलगाँव	16972.80 हेक्टर	13152.00 हेक्टर
			टाल क्षेत्र - 434.80 हेक्टर
			दियार क्षेत्र - 1000.00 हेक्टर

इन आंकड़ों से यह स्पष्ट होता है कि खरवार क्षेत्रों में सिंचाई की सुनिश्चित सुविधा बहुत कम है। गंगा आदि के दियारा क्षेत्र के सभी भागों या अन्य नदियों के क्षेत्र में सिंचाई की अच्छी सुविधा उपलब्ध है।

पहाड़ी क्षेत्रों में कुछ वर्ष पूर्व उद्‌भव सिंचाई कार्यक्रम चलाया गया था, जो अब बन्द हो गया है।

(ण) कीटनाशक दवाओं का छिड़काव :

खरवार क्षेत्र में जहाँ धान की खेती होती है, वहाँ कभी-कभी धान में झुलसा या अन्य रोग लगने पर वे रासायनिक दवाओं का छिड़काव करते हैं। ऐसे क्षेत्र

रोहतास, कैमूर, पलामू, भागलपुर, कटिहार, गुमला आदि में हैं, जहाँ धान की खेती होती हैं, पहाड़ी या बलुआही मिट्टी में लोग अधिकतर मकई, महुआ, गोड़ा, गोंदली, अरहर आदि लगाते हैं, जिनमें दवा का छिड़काव नहीं करते। कहीं-कहीं सब्जी खेती में कीड़ा लगने पर बहुत सीमित रूप में दवा छिड़कते हैं।

जनजातीय क्षेत्र में धान रोपने के बाद वे "भेलवा' वृक्ष की डाल खेतों में गाड़ देते हैं, जिससे कीड़े नहीं लगते हैं। इन क्षेत्रों की मिट्टी में एसिड या क्षार-तत्व अधिक रहने के कारण पौधों को दीमक से बहुत अधिक नुकसान होता है। अत: दीमक को समाप्त करने के लिए गैमेक्सिन का प्रयोग करते हैं और चूना भी खेतों में डालते हैं। सर्वेक्षण के समय यह जानकारी मिली कि 5 से 10 प्रतिशत खरवार ही कीटनाशक दवाओं का प्रयोग करते हैं।

(त) खरवार जन-जाति के विकास में स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका :

सर्वेक्षण के दौरान यह ज्ञात हुआ कि खरवार के कुछ क्षेत्रों में कई स्वयंसेवी संगठन कार्यरत हैं, जो अन्य जनजातियों के साथ-साथ खरवार के सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, स्वास्थ्य आदि से संबंधित विकास-कार्यों से जुड़े हुए हैं। इस सन्दर्भ में जिन संगठनों के संबंध में जानकारी मिली, उनके कार्य-कलापों का विवरण निम्न प्रकार है:-

(1) विकास भारती, बिशुनपुर (गुमला)

यह संस्था इस क्षेत्र के अलावा लातेहार, लोहरदगा, पलामू के अन्य प्रखंडों में भी कार्य करती रही है और यह 1983 में अपनी स्थापना-काल से ही जनजातीय विकास-कार्यों से जुड़ी हुई है। इसके द्वारा किये जा रहे कार्य निम्न प्रकार हैं -

श्रम निकेतन, बिशुनपुर -

इस संस्थान में 100 गरीब एवं अनाथ अनु. जनजाति के बच्चे-बच्चियों को आवासीय एवं भोजन आदि की सुविधा प्रदान कर शिक्षा एवं प्रशिक्षण दिया जाता है। इसमें खरवार के 20 छात्र-छात्रा लाभान्वित हो रहे हैं।

क्षेत्रीय कारीगर पंचायत-सह-प्रशिक्षण केन्द्र, बिशुनपुर -

इस केन्द्र में अब तक कृषि यंत्र एवं उपकरण बनाने का प्रशिक्षण 1428 जन-जाति के सदस्यों को दिया गया है, जिनमें खरवार जन-जाति के लोग भी लाभान्वित हुए हैं। इनमें करीब 50 प्रतिशत लोग स्वनियोजन से जुड़ गए हैं।

कृषि विकास केन्द्र -

इस केन्द्र में बागवानी, पौधशाला प्रबन्धन, कम्पोस्ट निर्माण-विधि आदि की जानकारी खरवार तथा अन्य किसानों को दी जाती है। इससे 60 खरवार प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके हैं।

महिला शिक्षण एवं रोजगार प्रशिक्षण केन्द्र -

इस केन्द्र में महिलाओं को चटनी, अचार, मुरब्बा, शरबत, जैम, जेली, पापड़ आदि बनाने का प्रशिक्षण दिया जाता रहा है। इससे 6 खरवार महिलाएँ भी प्रशिक्षित हुई हैं। निधि के अभाव में यह केन्द्र सर्वेक्षण के समय बन्द पाया गया।

पर्यावरण संरक्षण एवं वनीकरण कार्यक्रम -

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत सामाजिक वानिकी कार्यक्रम चलाये गए और अपनी पौधशाला तैयार कर विभिन्न प्रकार के पौधे खरवार क्षेत्रों में लगाये गए। इससे 35117 लोग लाभान्वित हुए बताये गए और सामाजिक वानिकी का प्रशिक्षण 1,318 जनजातीय लोगों को दिया गया, जिनमें खरवार भी थे।

पेयजल एवं जन-स्वास्थ्य कार्यक्रम -

इसके अन्तर्गत संस्था द्वारा सरकारी अनुदान से 600 कूपों का निर्माण तथा 120 चुओं का निर्माण/जिर्णोद्धार कराया गया। इससे लगभग 30 प्रतिशत खरवार लाभान्वित हुए।

शिक्षा-विकास के कार्यक्रम -

इसके अन्तर्गत 14 प्राथमिक विद्यालय, कई एकल विद्यालय तथा एक विकलांगों के लिए विद्यालय चलाये जा रहे हैं, जिनमें खरवार के लड़के-लड़कियों को नि:शुल्क शिक्षा दी जाती है। इसके द्वारा साक्षरता के कार्यक्रम भी चलाये गए हैं।

इस संस्था द्वारा मद्य-निषेध, ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत, सामाजिक एवं सांस्कृतिक संरक्षण तथा विकास आदि के क्षेत्र में कार्य किये जा रहे हैं, जिससे खरवार समाज में काफी जागरूकता एवं सुधार हुआ है।

(2) अखिल भारतीय खरवार (अनु.जन-जाति) कल्याण समिति, साहेबगंज :-

इस समिति की स्थापना 1992 में खरवार जन-जाति के सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास के लिए की गई। इस संस्था के मुख्य कार्यक्रम हैं-

1. बाल-विवाह एवं दहेज-प्रथा पर पूर्ण रोक लगाना।
2. स्त्री-शिक्षा को प्रोत्साहित करना।
3. शराब, गांजा आदि नशीले पदार्थों के सेवन पर रोक लगाना।
4. गरीब छात्र-छात्राओं को आर्थिक सहायता देकर शिक्षा के लिए प्रोत्साहित करना।
5. बाढ, अगलगी, सुखाड़, नौका दुर्घटना आदि में पीडितों को मदद करना।
6. बेघरों को इन्दिरा आवास-योजना के अन्तर्गत आवास गृह दिलवाना।

मधुबन (पिरपैंती) में आगलगी से जले 200 घरों के निर्माण की स्वीकृति संस्था द्वारा कराई गई, जिसमें 100 घर इन्दिरा आवास योजना के अन्तर्गत निर्माणाधीन हैं।

7. गरीब एवं असहाय युवतियों की शादी करवाना।
8. गाँवों में सड़क-निर्माण, विद्यालय आदि का भवन निर्माण, विद्युतीकरण आदि कार्यों के लिए प्रयास करना एवं सहायता देना।
9. खरवार जन-जाति की संस्कृति और धर्म की सुरक्षा और विकास का काम करना तथा धर्म परिवर्तन को रोकना।
10, खरवार युवक एवं युवतियों के स्वनियोजन हेतु प्रशिक्षण की व्यवस्था करना।

इस संस्था ने श्री अम्बिका प्रसाद, विधायक के संरक्षण में अपना कार्यक्रम प्रारम्भ किया है और खरवार जन-जाति के समग्र विकास के लिए प्रयत्नशील है। इसके प्रयास से कई विद्यालय-भवन बने हैं तथा बड़ी कोदरजना (साहेबगंज) का विद्युतीकरण हो सका है। सम्प्रति इसका कार्य-क्षेत्र भागलपुर और साहेबगंज है। परन्तु यह संस्था सम्पूर्ण बिहार को अपना कार्य-क्षेत्र बनाने के लिए कृत संकल्प है।

(3) देशवारी खरवार उत्थान समिति, राँची :

इस समिति द्वारा खरवार जन-जाति के सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक आदि सुधार एवं विकास के लिए जागरूकता लाने के कार्यक्रम किये जा रहे हैं। खरवार की जनजातीय पहचान बनाये रखने के लिए यह समिति कृतसंकल्प है।

(4) राष्ट्रीय ग्रामीण निधि, पटना :-

इस संस्था द्वारा ग्रामीण महिलाओं के लिए प्रशिक्षण एवं स्वनियोजन संबंधी प्रशिक्षण-कार्य एवं आर्थिक-संसाधन मुहैया कराने के कार्य किये जा रहे हैं, ऐसी

जानकारी मिली है। इस संस्था द्वारा कुछ माह पूर्व खरवार बहुल मनिका प्रखंड की महिलाओं (खरवार सहित) के लिए 'महिला स्वयं सहायतार्थ समूह' की 35 महिलाओं के लिए बचत ऋण प्रक्रिया, बैंकिंग कार्य-प्रणाली, लेखा संसाधन, लेन-देन की प्रक्रिया, विपणन आदि का प्रशिक्षण शिविर आयोजित किया गया था। इसके द्वारा मनिका की महिला मंडलों और महिला समितियों को ऋण का लाभ भी मिला और खरवार महिलाओं के आर्थिक विकास की संभावनाएँ बढ़ी हैं।

खरवार जन-जाति के क्षेत्र में उनके विकास के लिए स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। परन्तु उनके विस्तृत आवास-क्षेत्र एवं जनसंख्या की तुलना में स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका एवं संख्या काफी कम है।

(थ) विकास-कार्यों का प्रभाव :

स्वतंत्रता के पचास वर्षों में खरवार जन-जाति के क्षेत्र में जितना विकास होना चाहिए था, उतना नहीं हो सका। फिर भी विकास-कार्यक्रमों का उन पर कुछ सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। विकास-कार्यक्रमों का प्रभाव निम्नांकित क्षेत्रों में विचारणीय है :

(1) शिक्षा -

इस क्षेत्र में पूर्व की अपेक्षा काफी वृद्धि हुई है, जिसका उल्लेख जनगणना के आंकड़ों के माध्यम से पूर्व में किया गया है। पहले की अपेक्षा उनके क्षेत्रों विद्यालय/महाविद्यालय/तकनीकी संस्थान आदि काफी संख्या में खुले हैं, जिसके फलस्वरूप उन्हें शिक्षा पाने की सुविधा अधिक मिली है और वे शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ रहे हैं।

(2) आवागमन एवं परिवहन की सुविधा -

पहले उनका आवासीय क्षेत्र सड़क आदि के अभाव में काफी दुरूह लगता था। परन्तु अब खरवार क्षेत्र में कच्ची-पक्की सड़कें काफी संख्या में बनी हैं और परिवहन के कुछ साधन भी उपलब्ध हैं। पहले अधौरा आदि क्षेत्रों में पैदल ही जाना पड़ता था। परन्तु अब अधौरा सड़क मार्ग से जुड़ गया है। इसी प्रकार पलामू, गुमला, लोहरदगा आदि क्षेत्रों में भी आवागमन और परिवहन की सुविधा बढ़ी है। इससे खरवार बाहरी दुनिया से जुड़ गए हैं।

(3) कृषि एवं बागवानी का विकास -

वे कृषि और बागवानी की विकसित तकनीकी के बारे में जान गए हैं और

इससे कृषि के साथ-साथ फलों और सब्जी के उत्पादन में भी वे लग गए हैं। इससे उनका आर्थिक विकास भी हुआ है। साथ ही, खाने-पीने में गुणात्मक विकास भी हुआ है।

(4) जल-संसाधन का प्रबंधन :-

पहले वे वर्षा, नदी, झरना आदि जल के प्राकृतिक स्रोतों पर ही निर्भर करते थे, परन्तु अब वे कुआं, चापाकल आदि से शुद्ध एवं सुनिश्चित जल के संसाधन से सम्पन्न हैं।

(5) प्रशिक्षण एवं स्वनियोजन :-

प्रखंड, अन्य विभागों या स्वयंसेवी संगठनों द्वारा आयोजित प्रशिक्षण से भी वे लाभान्वित हुए हैं। हालांकि इसका यथेष्ट लाभ उन्हें नहीं मिल सका है।

प्रखंडों/पंचायतों के माध्यम से चलाये जा रही जवाहर रोजगार योजना, प्रधान मंत्री सुनिश्चित रोजगार योजना आदि से खरवारों के भी स्थानीय स्तर पर नियोजन की सुविधा बढ़ी है और कुछ हद तक श्रमिकों का पलायन रुका है।

(6) स्वास्थ्य एवं चिकित्सा-सेवाएँ -

पहले खरवार जिन दुरूह क्षेत्रों में रहते थे, वहाँ स्वास्थ्य एवं चिकित्सा-सेवाओं की काफी कमी थी। परन्तु अब अधिकांश खरवार क्षेत्र स्वास्थ्य-सेवाओं से आच्छादित हो चुके हैं। पहले टेटनस, हैजा, डायरिया आदि बीमारियों से काफी मौतें होती थीं। पर अब ऐसी मौतें बहुत कम - 15 से 25 प्रतिशत ही होती हैं। चिकित्सा और प्रतिरक्षीकरण की सुविधा के विस्तार से बच्चों में विकलांगता और मृत्यु-दर में कमी आई है। पहले 1000 में लगभग 140 शिशुओं की मौत हो जाती थी। परन्तु अब यह संख्या 70 से 80 के बीच आ गई है। अब अधिकांश बीमार होने पर ओझा-गुनी के पास न जाकर डाक्टर के पास जाते हैं।

(7) आर्थिक संसाधन में वृद्धि -

पहले खरवार कृषि या मजदूरी से अपना भरण-पोषण करते थे। परन्तु अब वे नौकरी उद्योग, व्यापार, परिवहन आदि कार्यों में भी लग गए है।, जिससे उनके आर्थिक संसाधन और स्रोतों में वृद्धि हुई है, जिसके संबंध में पूर्व में उल्लेख किया गया है।

(8) पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी के प्रति जागरूकता -

खरवार अधिकांशत: जंगल एवं पहाड़ों पर ही बसते रहे और प्रकृति की गोद में अपना जीवन बिताया है। परन्तु सरकार की गलत नीतियों के कारण उनके क्षेत्र में जंगलों का बहुत अधिक विनाश हुआ है। परन्तु अब वे अपने क्षेत्रों में जंगल लगाने और उसे बचाने की दिशा में अधिक सक्रिय हैं। अब वे पर्यावरण की सुरक्षा के लिए अधिक चैतन्य हैं।

(9) संचार-माध्यमों का प्रभाव -

प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रानिक मीडिया के प्रचार-प्रसार से पत्र-पत्रिकाओं, रेडियो और टेलीविजन के माध्यम से वे क्षेत्रीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं से अवगत होने लगे हैं और उनमें हर क्षेत्र में जागरूकता आई है।

(10) नेतृत्व का विकास -

विकास-कार्यों से जुड़े कार्यालयों (प्रखंड आदि) के खुल जाने और विभिन्न विभागीय पदाधिकारियों के सम्पर्क में आने से उनके भीतर संकोच और भय जनित दुराव की जो भावना थी, वह अब लगभग समाप्त हो गई है और वे अपने और अपने क्षेत्र के विकास के लिए विभिन्न स्तरों पर आवाज उठाने लगे हैं। इससे विकास के क्षेत्र में उनके भीतर एक नये नेतृत्व का उदय हुआ है।

फिर भी इन पचास वर्षों में विकास का जो सकारात्मक रूप उनके क्षेत्र या उनके सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक क्षेत्र में आना चाहिए था, वह नहीं आ सका और वे उतना विकसित न हो सके, जितन अपेक्षित था।

(द) विकास की समस्याएँ एवं संभावनाएँ :

खरवार जन-जाति के विकास की समस्याएँ उनके विभिन्न आवासीय क्षेत्रों में अलग-अलग हैं। फिर भी कुछ समस्याएँ सभी क्षेत्रों में समान रूप से व्याप्त हैं। उनके विकास की समस्याओं और संभावनाओं को निम्न प्रकार चिह्नित किया जा सकता है:-

(1) जातीय या सामाजिक समस्या -

यह समस्या उनकी जातीय या जनजातीय पहचान से जुड़ी हुई है। जैसा कि पूर्व में यह उल्लेख किया जा चुका है कि उनमें से कुछ अपने को 'सूर्यवंशी' कहते और अपने को राजपूत के समकक्ष मानते हैं। इससे उनकी जनजातीय पहचान घटी और वे अनुसूचित जनजाति के रूप में अपनी पहचान नहीं बना सके हैं और

संविधान के विभिन्न प्रावधानों के आधार पर मिलने वाले कई लाभों को लेने में वे पीछे रह गए हैं।

जो खरवार कैमूर या खैरागढ़ आदि से आकर जनजातीय क्षेत्रों में बस गए, वहाँ पूर्व से बसी जनजातियों/अन्य जातियों के बीच में अल्पसंख्यक बन गए और वहाँ के मूलवासी के रूप में स्वीकार नहीं किये गए। इस कारण वहाँ के मूल जनजातीय लोगों को विकास के कार्यों में जितनी प्राथमिकता मिली, उतनी खरवारों को नहीं मिली। वे वहाँ दूसरे श्रेणी के नागरिक की तरह जीने को मजबूर हुए। इससे उनका सामाजिक विकास बाधित हुआ और जातीय पहचान पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।

(2) विसंस्कृतीकरण एवं अन्य संस्कृतियों का प्रभाव -

खरवार जन-जाति की मूल संस्कृति द्रविड़ संस्कृति थी। उनकी धार्मिक अवधारणा, लोक-विश्वास, देवी-देवता, पर्व-त्योहार, गोत्र एवं गोत्र-प्रतीक आदि उनके जनजातीय मूल एवं परम्पराओं पर आधारित थे। परन्तु दूसरी अधिसंख्यक जनजातियों/अन्य जातियों के क्षेत्र में आकर बस जाने के कारण कालक्रमानुसार वे अपनी आदिम-परम्परा और संस्कृति को बहुत हद तक भूल चुके हैं और अन्य जनजातियों/जातियों की संस्कृति का अधिक प्रभाव पड़ा है। इस कारण खरवार जन-जाति की संस्कृति एक मिश्रित संस्कृति हो गई।

(3) आर्थिक आधार एवं स्रोतों का अभाव -

अधिकांश खरवार कृषि या मजदूरी से ही जीवन-यापन करते हैं। परन्तु धीरे-धीरे उनके पास कृषि-भूमि की कमी और कृषि के आधुनिक संसाधनों का अभाव उनके आर्थिक विकास में बाधक बने हैं। कैमूर, रोहतास, भागलपुर आदि गैर-जनजातीय क्षेत्रों में खरवार की कृषि-भूमि की बिक्री पर कोई रोक नहीं है। अत: किसी प्रकार आर्थिक संकट की स्थिति में या किसी प्रलोभन में आकर खरवार अपनी कृषि-भूमि को बेच देते हैं। जनजातीय क्षेत्र में उनकी जमीन के क्रय-विक्रय पर कानूनी रोक है। इस प्रकार अन्य क्षेत्रों में खरवार भूमिहीन होकर आर्थिक रूप से विपन्न हो गए हैं। शिक्षा एवं तकनीकी शिक्षा का अभाव, उद्योग एवं व्यापार में पूंजी तथा अनुभव की कमी आदि के कारण भी उनके आर्थिक स्रोतों में यथेष्ट वृद्धि नहीं हो सकी है।

भागलपुर, साहेबगंज, कटिहार आदि दियारा क्षेत्र में बाढ़ से उनकी खेती बरबाद होती है और कटाव के कारण उनकी कृषि योग्य भूमि गंगा, कोसी, महानन्दा आदि नदियों में विलीन हो जाती है।

(4) शिक्षा के विकास के लिए आर्थिक संसाधन की कमी -

शिक्षा का स्तर खरवार में बहुत कम है, जिसकी चर्चा पूर्व की जा चुकी है। उनके लड़के-लड़कियों को पढ़ने के लिए विद्यालयों में सभी को छात्रवृत्ति का लाभ नहीं मिल पाता है। उनके क्षेत्रों में उनके लिए आवासीय विद्यालयों की सुविधा उपलब्ध नहीं है।

(5) स्वनियोजन/नियोजन संबंधी योजनाओं/कार्यक्रमों का अभाव -

खरवार जन-जाति के युवक शिक्षा प्राप्त कर भी बेरोजगार बन जाते हैं। उनके लिए नियोजन/स्वनियोजन के अवसर बहुत कम हैं। ट्रायसम, ड्वाकरा, प्रधानमंत्री रोजगार योजना आदि के अन्तर्गत उन्हें कोई खास लाभ नहीं मिल सका है। इसके कारण उनमें बेरोजगार युवकों/युवतियों की संख्या काफी है। इस कारण उनका विकास बाधित हुआ है। जवाहर रोजगार योजना, सुनिश्चित रोजगार आदि के अभाव के कारण भी खरवार श्रमिकों को पूरे वर्ष मजदूरी नहीं मिल पाती है और उन्हें बाध्य होकर बाहर जाकर मजदूरी करनी पड़ती है।

(6) भूमि विकास एवं सिंचाई संसाधन का अभाव -

पलामू, गुमला, लोहरदगा आदि पहाड़ी क्षेत्रों में उनके पास काफी मात्रा में ऐसी जमीनें हैं, जिसे भूमि कर्षण एवं संरक्षण योजना के अन्तर्गत लाकर खेती योग्य बनाया जा सकता है। परन्तु उन्हें ऐसी योजनाओं का लाभ बहुत कम मिला है। ऊँची-नीची और ढलान वाली जमीन को वे आर्थिक सहायता के अभाव में कृषि योग्य नहीं बना पाते हैं।

सुनिश्चित सिंचाई की सुविधा का अभाव भी इस क्षेत्र में बहुत अधिक है। इस क्षेत्र में कृषि पूरी तरह वर्षा पर निर्भर है। पहाड़ी झरनों, नदियों बरसात के जल के संग्रहण की कोई व्यवस्था नहीं है क्योंकि इस क्षेत्र में इस दिशा में बहुत कम काम हुआ है। अत: वर्षा नहीं होने पर अकाल की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

(7) आवास की योजनाओं का अभाव -

जनजातीय एवं अन्य पिछड़े क्षेत्रों में खरवार के अनेकों परिवार झोपड़ियों में रहते हैं और उन्हें आवास गृह का अभाव झेलना पड़ता है। सर्वेक्षण में यह ज्ञात हुआ कि बहुत कम या नगण्य संख्या में खरवार जन-जाति को इन्दिरा आवास योजना के तहत आवास की सुविधा दी गई है।

(8) आधारभूत संरचना का अभाव -

अभी भी अनेक खरवार गाँव सड़क, बिजली, विद्यालय भवन, चिकित्सालय भवन, पेयजल आदि आधारभूत सुविधाओं से वंचित हैं।

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट होगा कि खरवार जन-जाति के समुचित विकास के बाधक तत्व कई हैं, जिनके समाधान में ही उनके समुचित विकास की संभावनाएँ छिपी हुई हैं। इनके समाधान के लिए सरकारी तंत्र के साथ-साथ स्वयंसेवी संगठनों और स्वयं खरवार जन-जाति को आगे आना होगा।

—— ** ——

अध्याय - 14

आज की खरवार जन-जाति

(क) खरवार जन-जाति की विशिष्ट समस्याएँ :

पूर्व के अध्यायों में खरवार जन-जाति के विकास के बाधक-तत्वों और कारणों पर प्रकाश डाला गया है। यह देखा गया है कि खरवार जन-जाति युगों से अपने मूल वास स्थल से विस्थापित होकर विभिन्न क्षेत्रों में जाकर अपने आश्रय स्थल खोजती रही है और बिहार में कैमूर से लेकर पूरब में कटिहार और पूर्णियाँ तक जाकर बस गई है। अपने विस्थापन और नये-नये स्थानों में बसने के कारण उनकी जातीय एवं सांस्कृतिक पहचान में परिवर्तन आया है, इस कारण उनकी मूल संस्कृति एवं जनजातीय रीति-रिवाजों, धार्मिक अनुष्ठानों. पर्व-त्योहार. शादी-विवाह आदि में काफी बदलाव आया है। वे जहाँ बसे हैं, वहाँ की सामाजिक व्यवस्था, संस्कृति, रीति-रिवाज आदि को आत्मसात कर लिया है। अब उनकी 'खेरवारी' या 'खेरवाली' बोली या भाषा कहीं सुनने को नहीं मिलती। इस बोली या भाषा की उप-भाषाएँ मुंडा, हो, संथाल, खड़िया आदि में आज भी प्रचलित होकर विकसित हो रही हैं। खरवार जहाँ बसे हैं, अब वहीं की बोली बोलते हैं।

जनजातीय क्षेत्र में उनके धार्मिक अनुष्ठानों और पर्व-त्योहारों में जनजातीय देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना एवं बलि आदि की परम्परा जीवित है। परन्तु अन्य क्षेत्रों में इसका अभाव हो गया है। खरवार जन-जाति काफी कर्मठ, बहादुर और प्रगतिशील जन-जाति रही है। अन्याय के सामने न झुकना और दृढ़ता से उसका प्रतिरोध करना इस जाति की विशिष्टता रही है। आज के सन्दर्भ में यदि देखा जाय तो यह जन-जाति पहले की अपेक्षा काफी आगे बढ़ी है। परन्तु सरकारी उपेक्षा के कारण उनका उतना विकास नहीं हो सका, जितना होना चाहिए था। अंग्रेजी शासनकाल में तत्कालीन शासकों ने उन्हें केवल श्रम-शक्ति के रूप में देखा और उनका उपयोग या शोषण किया। जब उन्होंने विद्रोह किया तो उसे बलपूर्वक दबा दिया गया। उस कालावधि में उनकी काफी जमीनें उनसे छीन ली गई या नीलाम कर दी गई। उन जमीनों को वे पुनः नहीं पा सके। आजादी की लड़ाई में उन्होंने अपना सब कुछ बलिदान किया। परन्तु उन्हें आजादी बाद वह सब कुछ नहीं मिला, जिसके वे हकदार थे। 'जंगल सत्याग्रह' के माध्यम से उन्होंने अपने जंगल एवं पर्यावरण की रक्षा का प्रयास किया था। परन्तु उसे भी दबा दिया गया। आज भी खरवार जंगल

और जमीन पर अपने अधिकार की बात करते हैं और उनका विश्वास है कि जब तक वे कृषि क्षेत्र में आगे नहीं बढ़ेंगे, उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति सुदृढ़ नहीं होगी। जंगल के वृक्ष भी उनके लिए पूज्य रहे हैं, जिन पर किसी न किसी देवी-देवता का वास होता है। परन्तु उनके क्षेत्र के वनों की ठीकेदारों और जंगल विभाग द्वारा अन्धाधुन्ध कटाई से आज वे वन-सम्पदा से अपने को विपन्न समझ रहे हैं। उनका विश्वास है कि वनों के विनाश से ही वहाँ के देवी-देवता उनसे नाराज होकर न तो समय पर जल बरसाते हैं और न ही पहले जितना अन्न पैदा होता है।

अत: उनकी समस्याओं में सबसे प्रमुख है उनकी जन-जाति के रूप में पहचान और जनजातियों को मिलने वाली सभी प्रकार की सुविधाओं और योजनाओं में उन्हें आर्थिक एवं सामाजिक पिछड़ेपन के आधार पर प्राथमिकता देना।

(ख) सुझाव एवं अनुशंसा :

खरवार जन-जाति के विभिन्न क्षेत्रों के भ्रमण, सर्वेक्षण तथा विभिन्न पदाधिकारियों, जनप्रतिनिधियों और खरवार जन-जाति के सदस्यों से मिलने पर यह अनुभव हुआ कि खरवार जन-जाति के विकास के लिए जितना प्रयास होना चाहिए था, उतना नहीं हुआ। उनकी जाति या जन-जाति के संबंध में भी कुछ भ्रान्तियाँ लोगों के मन में उठती रहीं। जनगणना (1971 तथा 1981) में भी उन्हें 'हिन्दु' धर्मावलम्बी बताया गया है और उनके मूल आदिवासी धर्म (सरना आदि) का कोई उल्लेख नहीं है। क्षेत्रीय सर्वेक्षण की अवधि में भी बहुत से ऐसे लोग मिले जो अपने जनजातीय गोत्र एवं गोत्र-प्रतीक के विषय में नहीं जानते हैं।

अत: खरवार जन-जाति के सर्वांगीण विकास के लिए निम्नांकित बिन्दुओं पर विचार करना समीचीन प्रतीत होता है :-

(1) जातीय या जनजातीय पहचान की पुनर्स्थापना या पुनर्जागरण :

खरवार जन-जाति के संबंध में पूर्व के अंग्रेज विद्वानों एवं प्रशासकों (डाल्टन, रसेल, रिजले आदि) द्वारा उपस्थापित तथ्यों की सम्यक परीक्षा एवं समीक्षा आवश्यक है। इस जन-जाति के सुधी चिन्तकों और नेतृत्व करने वाले लोगों को भी इस समुदाय के लोगों के सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, गोत्र-संबंधी एवं उनकी प्रजाति से संबंधित अन्य महत्त्वपूर्ण तथ्यों से युवा-वर्ग को पूरी तरह अवगत कराना चाहिए ताकि वे अपनी 'खेरवारी' सभ्यता एवं संस्कृति की गौरव-गरिमा से परिचित हो सकें।

(2) कृषि-भूमि के विक्रय पर रोक :

जनजातीय क्षेत्रों की तरह अन्य क्षेत्रों में भी खरवार जन-जाति की कृषि-भूमि के विक्रय पर रोक लगानी चाहिए ताकि वे अपनी भू-सम्पत्ति बेच कर अधिक विपन्न न हो सकें।

(3) कृषि-योग्य भूमि का आवंटन :

जो खरवार बिल्कुल भूमिहीन हैं, उन्हें सिलिंग में मिली जमीन या गैर मजरुआ जमीन खेती के लिए उपलब्ध करायी जा सकती है। ज्ञातव्य है कि सरकार द्वारा गरीबी रेखा से नीचे जीवन बिताने वाले परिवार को भूमि उपलब्ध करायी जाती है।

(4) कृषि के समेकित विकास की योजना का कार्यान्वयन :

खरवार मुख्यत: कृषि से जुड़े हुए हैं। परन्तु कृषि की उत्पादकता में वृद्धि लाने एवं टांड़ तथा अन्य अनुपयोगी जमीन को कृषि-योग्य बनाने के लिए आर्थिक एवं तकनिकी सहायता अपेक्षित है। साथ ही, बागवानी और फलदार वृक्षों के पौधें का नि:शुल्क वितरण से भी उनको यथेष्ट लाभ होगा। साथ ही खरवार बहुल क्षेत्र में कृषि विभाग द्वारा उन्मुखीकरण कार्यक्रम चलाया जाय।

(5) सुनिश्चित सिंचाई की व्यवस्था :

पहाड़ी क्षेत्र में जहाँ वर्षा की अनिश्चितता बनी रहती है, सिंचाई की सुनिश्चित व्यवस्था कृषि के लिए आवश्यक प्रतीत होता है। पहाड़ी क्षेत्रों में संग्रहण तालाबों द्वारा यह कार्य किया जा सकता है। साथ ही, झरना आदि जैसे जल-स्रोतों के जल को संग्रहित कर भी यह कार्य किया जा सकता है। सिंचाई विभाग द्वारा सर्वेक्षण कराकर चेक डैम आदि के निर्माण का कार्य कराया जाना चाहिए। इन जल-संग्रहण तालाबों का उपयोग मछली पालन के लिए भी किया जा सकता है।

(6) कुटिर उद्योग एवं तकनीकी विकास :

ट्रायसम तथा अन्य तकनीकी प्रशिक्षण कार्यक्रम के माध्यम से खरवार जन-जाति के युवा वर्ग को सिलाई-कटाई, पत्तल प्लेट उद्योग, वस्त्र बुनाई उद्योग, कम्प्यूटर, टेलीविजन, रेडियो आदि की मरम्मत आदि का प्रशिक्षण देकर उन्हें स्वावलम्बी बनाया जा सकता है।

(7) पर्यावरण-संरक्षण एवं विकास कार्यक्रम :-

पर्यावरण के प्रति जागरूकता लाकर ही वनों के विनाश को रोका जा सकता है। साथ ही, सघन वृक्षरोपण कार्यक्रम चलाकर वनों के विकास की गति को तेज

किया जा सकता है। वनों में मिलने वाली जड़ी-बूटी एवं औषधीय पेड़-पौधों को बचाना आवश्यक है।

(8) आवागमन एवं परिवहन का विकास :-

खरवार जन-जाति के बहुत से ऐसे क्षेत्र हैं, जो अभी भी मुख्य सड़क-मार्ग से नहीं जुड़ सके हैं। उनके गाँवों को कच्ची-पक्की सड़कों से जोड़ना उनके विकास हित में अत्यावश्यक है।

(9) शिक्षा एवं साक्षरता की सघन कार्ययोजना :-

खरवार के गांवों के निकट बालिका उच्च विद्यायल आवश्यक है, ताकि महिलाओं में व्याप्त निरक्षरता को दूर कर कम से कम उन्हें उच्च विद्यालय तक की शिक्षा उपलब्ध कराई जा सके। साथ ही, गरीब एवं असहाय खरवार बालक/बालिकाओं के लिए आवासीय विद्यालय का होना आवश्यक है ताकि वे निःशुल्क शिक्षा के साथ-साथ आवासीय, पठन-पाठन, भोजन, वस्त्र आदि की सुविधा प्राप्त कर शिक्षा पाने में सक्षम हो सकें जिन गाँवों में प्राथमिक विद्यालय या विद्यालय भवन नहीं हैं, उनकी व्यवस्था शिक्षा के लिए आवश्यक प्रतीत होती है।

(10) उनमें सहकारिता के विकास की आवश्यकता :-

खरवारों का भी शोषण साहूकारों तथा अन्य बिचौलियों द्वारा किया जाता है। अतः उनके बीच भारत सरकार द्वारा स्थापित आदिवासी सहकारिता विकास निगम द्वारा सहकारी समितियाँ गठित कर उन्हें उद्योग, लघु वन पदार्थों का व्यापार, पत्थरकट्टी, या चिप्स बनाने का कार्य आदि में उनका आर्थिक विकास सुनिश्चित किया जा सकता है।

(11) स्वास्थ्य एवं परिवार-कल्याण संबंधी जागरुकता :-

इस कार्य के लिए खरवार युवक एवं युवतियों को 'सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता' का प्रशिक्षण देकर इसको लोकप्रिय एवं सार्थक बनाया जा सकता है।

(12) आधारभूत संरचना का विकास :-

किसी भी क्षेत्र के विकास के लिए वहाँ सड़क, बिजली, परिवहन, स्वास्थ्य केन्द्र, विद्यालय, पेयजल आदि मूलभूत सुविधाओं का होना आवश्यक है। जो खरवार के गाँव इन सुविधाओं से वंचित हैं, उन्हें इन मूलभूत सुविधाएँ उपलब्ध कराना आवश्यक है।

(13) नशा विमुक्ति एवं पुनर्वास कार्यक्रम :-

ऐसी जानकारी मिली है कि बहुत से खरवार शराब आदि पीकर अपने आर्थिक स्वास्थ्य की स्थिति को बद से बदतर कर रहे हैं। अत: नशाखोरी से उन्हें मुक्ति दिलाने और उनके पुनर्वास का कार्य स्वयंसेवी संगठन ही कर सकते हैं।

(14) खरवार जन-जाति के विकास के लिए उपर्युक्त बिन्दुओं के माध्यम से कुछ विचार दिये गए हैं। विकास समय सापेक्ष होता है और वह समय-समय पर बदलाव चाहता है। अत: आगे चलकर खरवार के विकास में गति लाने के लिए कुछ और तथ्य सामने आयेंगे।

—— ** ——

सन्दर्भ ग्रंन्थों की सूची

क्र.सं.	लेखक का नाम	पुस्तक का नाम	प्रकाशन स्थान एवं वर्ष
1.	2.	3.	4.
1.	ओ. मल्ले, एल, एस.एस.	बिहार एण्ड उड़ीसा गजेटियर पलामू	गर्वनमेंट प्रेस, पटना 1926
2.	ग्रियर्सन, जी.ए.	लिंग्विसिटक सर्वे ऑफ इंडिया भौलूम-2	मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 1967
3.	गुप्ता, एस.के.	ट्राइब्स ऑफ छोटानागपुर प्लेटू	बिहार जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, राँची 1974
4.	गोखले, बालकृष्ण गोबीन्द	कल्चरल हिस्ट्री ऑफ इन्डिया	स्टर्लिंग पब्लिसर्स, न्यू दिल्ली, 1982
5.	गुप्त, हवलदारी राम	पलामू का ऐतिहासिक अध्ययन	हलधर प्रेस, डाल्टेनगंज, पलामू, 1972
6.	टेलर, एडवर्ड बी.	प्रिमिटिव कल्चर	लन्दन, 1913
7.	डाल्टन, ई.टी.	डिस्क्रिप्टिव एथनालॉजी ऑफ बंगाल	गर्वनमेंट प्रिंन्टिंग प्रेस, कलकत्ता, 1973
8.	दीक्षित, प्रमिला	आदिवासी विद्रोह	एकता प्रकाशन, गंट्टूसाई, चाईबासा, पं. सिंहभूम, 1991
9.	प्रसाद, दिनेश्वर (प्रो.)	लोक साहित्य और संस्कृति	लोक भारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद, 1973
10.	प्रसाद नर्मदेश्वर	लैन्ड एन्ड पिपुल ऑफ ट्राइवल बिहार	बिहार जनजातीय कल्याण, शोध संस्थान, राँची, बिहार, 1961
11.	प्रसाद, स्वर्णलता	मुन्डारी हिन्दी शब्द कोष,	तदैव
12.	फरेरा, जान बी.	टोटेमिज्म इन इन्डिया प्रेस, लन्दन, 1965	ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी
13.	बनर्जी, मानगोबीन्द	एन हिस्टोरिकल आउट लाइन ऑफ प्रि-ब्रिटिश छोटानागपुर	एजुकेशन पब्लिकेशन, जेल रोड, राँची, बिहार, 1989

1.	2.	3.	4.
14.	मजुमदार, डी.एन.	रेसेज एन्ड कल्चर ऑफ इन्डिया	एशिया पब्लिशिंग हाउस बॉम्बे, 1958
15.	मजुमदार, डी.एन.	एन इन्ट्रोडक्शन टू सोशल एन्थ्रोपोलॉजी	तदैव, 1957
16.	मिल्लर, ए.एस.	इन्ट्रोडक्शन टू एन्थ्रोपोलॉजी	प्रोन्टिस हाल, एंजल वर्ड, क्लिप्स, न्यू जर्सी (एन.पी.)
17.	मुखर्जी, आर.एन.	सामाजिक मानव शास्त्र की रूप रेखा	विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली
18.	मुखर्जी, बी. तथा अन्य	द चेरो ऑफ पलामू	एन्थ्रोपोलॉजीकल सर्वे ऑफ इन्डिया, कलकत्ता, 1973
19.	रसेल, आर. भी.	कास्टर्स एन्ड ट्राइब्स ऑफ सेन्ट्रल प्रोविन्सेज ऑफ इन्डिया	मैक्मिलन एन्ड को. लन्दन, 1916
20.	रायचौधरी, पी.सी.	बिहार डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, शाहाबाद	गुलजारबाग गवर्नमेंट प्रेस, पटना, बिहार 1966
21.	रायचौधरी, पी.सी.	बिहार डिस्ट्रिक्ट गजेटियर संथाल परगनाज	तदैव, 1865
22.	रिजले, एच.एच.	द ट्राइब्स एन्ड कास्ट्स ऑफ बंगाल, वॉलूम-1	फर्मा मुखोपाध्याय, कलकत्ता, 1981
23.	विजर, ए, गोल्डेन	इन्साईक्लोपिडया ऑफ द सोशल साइन्सेज वॉलूम - 3	द मैक्मिलन कॉ. न्यूयार्क, 1935
24.	सिंह, के.एस. (डा.)	द सिडयूल्ड ट्राइब्स: पिपुलस ऑफ इन्डिया वॉलूम-3	एन्थ्रोपॉलाजिकल सर्वे ऑफ इन्डिया, कलकत्ता, 1992
25.	सिंह, के.एस. (डा.)	ट्राइबल मूवमेन्ट्स इन्डिया, वॉलूम-2	मनोहर पब्लिकेशन, नई दिल्ली, (एन.पी.)

1.	2.	3.	4.
26.	सिंह, के.एस. (डा.)	उलगुलान	एकता प्रकाशन, गुट्टूसाई, चाईबासा, पं. सिंहभूम, 1991
27.	सिंह, प्रो. शिवशंकर	बिहार दिग्दर्शन	स्टार पब्लिकेशन, पटना, 1991
28.	हरिमोहन	द चेरो	बिहार जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, राँची, 1973
29.	हेबेल, ई. एडमशन	मैन इन द प्रिमिटिव वर्ल्ड	मैकरग्रो हिल बुक कं., न्यूयार्क, 1955
30.	हेम्ब्रम, एन.	आस्ट्रि सिविलाइजेशन ऑफ इन्डिया	–

पत्र-पत्रिकाएँ एवं प्रतिवेदन

30.	भारत सरकार,	सेंसस ऑफ इन्डिया, एन्ड शिडयूल्ड ट्राईब्स	स्पेशल टेबुल्स फार शिडयूल्ड कास्ट्स, 1971
31.	तदैव	तदैव	1981
32.	यूनेस्को	मानव वैज्ञानिक सम्मेलन,	1952 (सितम्बर) का प्रतिवेदन
33.	वन एवं पर्यावरण विभाग, देहरादून	''द स्टेट ऑफ फौरेस्ट'' रिपोर्ट,	1991
34.	वन अनुसन्धान, वन विभाग, राँची,(बिहार)	वार्षिक प्रशासनिक प्रतिवदेन	1987-98
35.	खाद्य एवं पोषाहार विभाग भारत सरकार, नई दिल्ली	पोषक तत्व पर बुलेटिन	–
36.	उपायुक्त, गुमला बिहार	गुमला जिला टाना भगत पत्रिका,	1987

—— ❋❋ ——